राजवल्लभ—हम लोग जब तक पूरा पूरा विवरण न जान पायें, तब तक किस तरह कह सकते हैं कि सिराजका कुछ और अभिप्राय है? मुझको यही मालूम होता है, कि जो जो प्रधान लोग हैं उनको वह इसी प्रकार कौशलसे बिना रक्तपात किये और बिना युद्धके बन्दी करना चाहता है।

रामराय—यदि यही बात है, तो क्या आप लोग नवाबके छुड़ानेके लिये अग्रसर न होंगे?

यह सुनकर सब एक साथ बोल उठे,—"हम लोग अपने प्राण तक देकर नवाब अलीवर्दीका उद्धार करेंगे; किन्तु जब तक असली बात नहीं मालूम होती, तब तक एक क़दम भी आगे बढ़नेका साहस नहीं होता है। क्या जानें हम सबको भी अन्तमें उसका बन्दी होना पड़े।

इसी प्रकार तरह तरहके तर्क-वितर्क और सलाहें हो रही थीं कि वही दूत फिर आकर बोला, "महामान्य महोदय-गण! नवाब बहादुर आप लोगोंके विलम्ब करनेसे अतिशय व्याकुल हो रहे हैं! आप लोग शीघ्र जाकर उनको छुड़ावें। मालूम होता है कि नवाबके बन्दी होनेके समाचारको सुन कर आप नितान्त भयभीत हो गये हैं, किन्तु कुमार सिरा-जुद्दौलाने सिंहासनके लोभसे उनको बन्दी नहीं किया है, केवल रुपयेके वास्ते रोक रखा है और जब तक कि चाहा हुआ रुपया न मिल जाय, तब तक उनको छोड़नेमें असम्मत है। आप लोग वही रुपया देकर नवाबका उद्धार करें।"

सिराजुद्दौला

अर्थात्

बङ्गाल का अन्तिम नवाब।

अनुवादक—

पं० गुलज़ारीलाल चतुर्वेदी।

प्रकाशक—

हरिदास एण्ड कम्पनी।

सन् १९१६ दाम १।।।)

परन्तु सिराजके सामने क्या उसकी चालाकी चल सकती थी ? वह भी उसके साथ ही साथ दर्पणके पास पहुँच गया और कहा "फ़ैज़ी ! क्या देखा ! क्या अपने रूप पर तुम आप ही मोहित नहीं होगई ?"

फ़ैज़ी मृदु मन्द हँसी हँसकर बोली—"अपनी ही आँखोंसे अपना सौन्दर्य कैसे मालूम पड़े ? यदि वह बादशाह की आँखोंमें अच्छा लगे, तो उसका कारण यही प्रतीत होता है कि प्रणयी की आँखोंमें प्रणयिनी सदैव ही आलोक सुन्दरी ज्ञात होती है।"

बातों ही बातोंमें कहीं चित्तका भाव न खुलजावे, यह सोचकर सिराजने कहा कि "यही ठीक है। चलो, अब सोवें ; रात बहुत जाचुकी है।"

अब फ़ैज़ी बची। और कोई बात न कहकर धीरे धीरे जाकर सो रही।



सचित्र

सिराजुद्दौला

अर्थात्

बंगाल का अन्तिम नवाब

(बंगभाषा से अनुवादित)

अनुवादक

गुलज़ारीलाल चतुर्वेदी

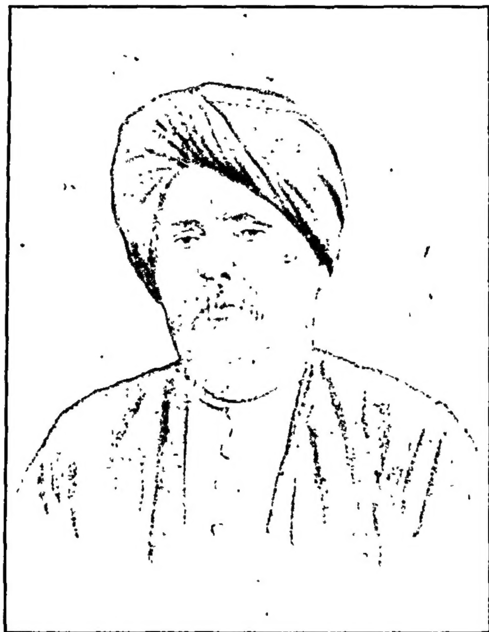
प्रकाशक

हरिदास एण्ड कम्पनी।

२०१ हरिसन रोड के नरसिंह प्रेस में,

बाबू रामप्रताप भार्गव द्वारा मुद्रित।

सन् १९१५ ई०



स्वर्गीय श्रीयुत दीवान बहादुर

पण्डित परमानन्द चतुर्वेदी बी० ए०

जन्म ८ जनवरी १८५२] [वैकुण्ठवास २५ जून १९१४

NARSINGH PRESS CALCUTTA.

समर्पण।

मेरी बड़ी भारी इच्छा थी कि यह पुस्तक परलोकवासी परमपूज्य काकाजी श्रीयुत दीवान बहादुर पंडित परमानन्द चतुर्वेदी बी० ए० के करकमलों में समर्पित की जाती, परन्तु अभाग्यवश ऐसा न हो सका! अब तो इसका समर्पण उनकी पवित्र स्मृति को ही हो सकता है।

काइमगंज
२०-११-१५

अनुवादक।



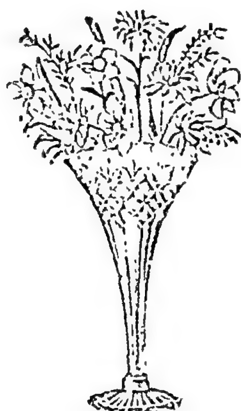
भूमिका।

आज मैं अपनी दूसरी भेंट सिराजुद्दौला पाठकों के आगे रखता हूँ। आशा है, कि जैसे मेरे 'विपद्वृत्त' को पढ़कर आपलोगोंने मेरे उत्साह को बढ़ाया है, उसी प्रकार इस पर भी कृपा करेंगे। यह पुस्तक बँगला के 'बंगेर शेष नवाब' से अनुवादित की गई है, परन्तु यह उसका अविकल अनुवाद नहीं है। जहाँ कहीं उचित समझा है, मैंने इसको किञ्चित बदल दिया है, जिससे आशा है कि यह उपन्यास और भी रोचक हो गया होगा। यह एक ऐतिहासिक उपन्यास है। ऐसे उपन्यासों के लिये यह भी आवश्यक है कि जहाँ तक हो सके सत्यता की ओर झुके रहें, इसलिये भी मुझे कहीं कहीं इसमें फेर बदल करने पड़े हैं। परन्तु जहाँ तक मेरे प्रयत्नने काम दिया

है, वहाँ तक इसकी रोचकता को मैंने कम नहीं होने दिया है, जिसको कि पाठकगण स्वयं ही देख लेंगे। यदि मेरा यह परिश्रम पाठकों को कुछ भी रुचिकर हुआ, तो मैं अपने को कृतार्थ समझूँगा। शेषमें, मेरी यह प्रार्थना है कि जो कुछ भूलें इसमें रह गई हों उनको पाठक स्वयं सुधार कर, उन भूलों की ओर ध्यान न दें और मेरे परिश्रम की ओर देखकर मेरे उत्साहको बढ़ावें।

८ जून १९१५ } कायमगञ्ज। }

कृपाकांक्षी—
गुलजारीलाल चतुर्वेदी।



सिराजुद्दौला



नवाब सिराजुद्दौला।

NARSINGH PRESS, CALCUTTA.



सिराजुद्दौला

अर्थात्

बंगालका अन्तिम नवाब।

प्रथम खण्ड।

पहला परिच्छेद।

जहाँ कमला की कृपा होती है, वहाँ बहुधा देखा गया है कि सन्तानका अभाव होता है। बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाके नवाब अलीवर्दीके ऐश्वर्यकी सीमा नहीं थी। किन्तु उनके पीछे उनके विपुल ऐश्वर्यका भोग कौन करेगा! कौन मुर्शिदाबादकी गद्दीपर बैठकर राज्यशासन और प्रजापालन करेगा!

तो क्या नवाब अलीवर्दी निःसन्तान थे ? निःसन्तान नहीं, किन्तु ऐश्वर्यके साथ पुत्रलाभका सुख-सौभाग्य उनके ललाटमें नहीं था। उनकी सन्तानमें तीन कन्यायें थीं। उनके नाम— आयमना बेगम, अमीना बेगम और घसीटी बेगम थे।

नवाबने इन तीनों कन्याओंको अपने भाई हाजी अहमदके तीनों पुत्रोंसे परिणय-सूत्रमें आबद्ध कर दिया था। ज़ैनुद्दीन के साथ अमीना बेगमका, नवाज़िश मुहम्मदके साथ घसीटी बेगमका और सय्यद अहमदके साथ आयमना बेगमका विवाह हुआ।

अलीवर्दीने भतीजोंको केवल कन्यादान ही नहीं दिया, वरन् सिंहासन पानेपर उन्होंने ज़ैनुद्दीनको पटनेका, नवाज़िश को ढाकेका, और सय्यद अहमदको पुर्नियाका शासन-भार अर्पण कर दिया।

पुत्र न होनेसे जिस तरह लोग संसारसे उदास हो जाते हैं, नवाब अलीवर्दीने उस तरहका कोई भाव प्रकाश नहीं किया। वह अपने दौहित्र, अमीना बेगमके पहले पुत्र का अपने पुत्रकी तरह लालन-पालन करते थे और उसी को उन्होंने अपना उत्तराधिकारी भी स्थिर किया था। इस बालक का नाम मिर्ज़ामुहम्मद था। यही मिर्ज़ामुहम्मद इतिहासमें एवं जनसाधारणके निकट सिराजुद्दौलाके नामसे प्रसिद्ध हुआ।

सिराजुद्दौला बचपन ही से नाना और नानीके स्नेहके कारण बड़े आदरसे प्रतिपालित हुआ। बङ्गाल-बिहार-उड़ीसा के

नवाब अलीवर्दीकी एक तो बूढ़ी अवस्था, तिस पर कोई पुत्र नहीं; इस कारण बालक सिराज उनका एकमात्र आदरणीय धन था। जिसके घरमें धन-रत्न की सीमा नहीं—वसन-भूषणका कुछ ठिकाना नहीं—दासदासियोंका अभाव नहीं—उसके उत्तराधिकारी को भला किस समय किस वस्तु की त्रुटि हो सकती थी? इसी कारण बालक सिराजके हठ की सीमा न रही। जिस समय जो मनमें आता, नवाब और नवाब-पत्नी उसी समय उसी इच्छाके पूर्ण करनेमें तत्पर हो जाते। उसकी इच्छाकी पूर्त्ति करनेमें अर्थव्ययसे कभी न हिचकते, यहाँ तक कि बहुधा बहुत से अनुचित कार्य भी कर बैठते। ऐसा हठ कि जिससे मन्त्री, उमराव, आत्मीय स्वजन, दासदासी सभी विरक्त होते; किन्तु नवाब अथवा नवाब-पत्नी को कुछ भी बुरा न मालूम होता था। निवारण करने अथवा समझाने की भी चेष्टा नहीं करते थे। कोई उमराव, राजा अथवा महाराजा सिराजुद्दौलाकी इन सब असंगत इच्छाओंका प्रतिवाद करके 'बालक को भविष्यत्में अनिष्ट की सम्भावना है' इत्यादि बातें नवाबके कर्णगोचर करते, तो नवाब हँसकर उत्तर दे देते कि "सिराज इस समय बालक है, इस कारण बुद्धि चञ्चल है, स्याने होने पर यह सब बातें जाती रहेंगी।"

इस तरह की बात केवल नवाबके ही मुखसे निकलती थी, ऐसा नहीं था; नवाब-पत्नी भी बीच बीचमें गर्व करके कहा

करती थीं,—'बंगाल, विहार और उड़ीसा जिसके आधीन हैं, उसका उत्तराधिकारी क्यों न हठ करे ?'

इसी तरह वय बढ़नेके साथ ही आदर और हठमें सिराजुद्दौलाका चरित्रगठन होने लगा। सुशिक्षा और सदुपदेशके अभावसे, वह नितान्त दाम्भिक, आमोदप्रिय, विलासी और घोर इन्द्रिय-परायण होने लगा। जो चित्तमें आता वही करता—इष्ट अनिष्ट का कुछ भी ध्यान न करता, यदि कोई सदुपदेश देता तो भी कान न धरता। इस प्रकार बाल्यकाल ही से वह ऐसा उद्धत हुआ जिसका पार नहीं।

इस बुरी प्रकृतिके वश और समझके दोषसे, वह बहुधा बहुतोंके ऊपर अत्याचार कर बैठता। जिसके ऊपर अत्याचार होता वह चुपचाप उसको सहलेता, और उसके प्रकाश करनेका साहस भी न करता। सिराजके बालक होने पर भी लोग उससे भय करते थे।

बालक सिराजको देखकर किसी को भय क्यों हो? विशेष कर जब नवाब अलीवर्दी वर्त्तमान थे, तो सिराजसे आशङ्का का कारण क्या था?

सिराजुद्दौला के उद्धत स्वभाव और अत्याचार की बातें पहले पहले राजकर्मचारीगण और नागरिक लोग नवाबसे कहते थे। किन्तु वृद्ध नवाब दौहित्र पर इतना स्नेह करते थे कि इन सब बातोंके जानने सुनने पर भी उसपर शासन करना तो दूर रहा, कभी एक बार निवारण भी नहीं किया। जब उन

लोगोंकी शिकायतों को कुछ सुनवाई न हुई, तो वह लोग सिराजके अत्याचारोंको चुपचाप सहने लगे।

नाना और नानीके आदरसे सिराजुद्दौला घोर आत्माभिमानी होगया। वह जो कुछ करता, जो कुछ कहता, वह सब अच्छा था; किन्तु और किसीकी कोई बात, कोई काम उसको अच्छा नहीं मालूम होता था। विशेष करके उसके मतके विरुद्ध यदि कोई कुछ कहता, तो उसको वह किसी प्रकार सह न सकता; न उसके विरुद्ध कोई कुछ कहने का साहस ही करता था। यदि करता तो उसका निस्तार नहीं था।

इस रूपसे शिक्षा-संयम के अभावसे सिराजके चरित्रमें राजोचित गुणोंने पुष्टि नहीं पाई और उसका चरित्र दिन पर दिन अशेष दोषोंका आकर होने लगा।

बालकाल ही से सिराज ऐसा विलासी था, जिसका कुछ पार नहीं। नाना और नानीके प्रसादसे अर्थका उसको कभी अभाव न था। नाना देशके व्यवसाई प्रायः रोज़ ही उसके पास आते जाते थे और जो कुछ बहुमूल्य विलास-सामग्री उनके पास होती उसको सिराज खरीद लेता। नवाब अलीवर्दी यह सोचते थे, कि जब सिराज मेरे इस विपुल धनका उत्तराधिकारी है तो फिर उसकी जो इच्छा हो सो करे।

दूसरा परिच्छेद।

समय के परिवर्त्तनसे शिशु बालक, बालक युवा, युवा प्रौढ़ और प्रौढ़ वृद्ध होता है। सिराज अब बालक नहीं है, इस समय जो कुछ वह करता है, वह सब गणनीय है। इस समय कोई मनुष्य बालकालकी तरह उसका उपहास करके और 'बालक' कहकर बात को उड़ा नहीं सकता है। इस समय उसके कार्य्यकलाप, बातचीत, और चालचलन को देखकर सभी भीत और चिन्तान्वित हैं।

सिराजुद्दौलाने इस समय यौवन-सीमामें पदार्पण किया है, यौवन की पहली तरङ्ग में पैर डाला है; चित्त, सौदामिनी की गतिकी तरह चञ्चल है। यौवनकी दारुण मादकतासे, वह इस समय मत्तमातङ्ग की तरह मतवाला हो रहा है। मधुलोलुप भौंरे की तरह अपने आपको भूला हुआ है।

यौवन बड़ा भयङ्कर समय है। यह समय मनुष्य को हिताहित-ज्ञानसे शून्य कर देता है—सुगम पथ होने पर भी दुर्गमपथ बतला देता है—आंखें होनेपर भी अन्धा बना देता है। इस कालमें मनका वेग अति तीव्र होता है, सारी वृत्तियाँ

थोड़े से ही में उत्तेजित होजाती हैं। थोड़ी सी असावधानीसे मनुष्य, मनुष्यके आकारमें पशु हो जाता है।

एक तो सिराजुद्दौला यौवन-सीमा पर पहुँच चुका;तिसपर बंगाल, बिहार और उड़ीसा का भावी नवाब! जहां पर महेन्द्र योग हो, वहां पर यौवन-सुलभ संगी मिलनेमें क्या देर लगती है? समय-सेवी पाप-सहचर एक एक करके आने लगे। खुशामदियोंने आकर खुशामद फैलाई, सभोंने मिलकर सिराज को नित्य नाना प्रकारसे उत्साहित करना आरम्भ किया। आमोद-प्रमोद, भोजन-पान और नृत्य-गान दिनरात कहां और किस प्रकार होते हैं, यह उनको कुछ भी मालूम न था।

सिराज जिस समय आमोद-प्रमोदमें और सुरापानमें सुख-भोग कर रहा था, हठात् उसके ध्यानमें आया कि इस प्रकार राजप्रासादमें आमोद-प्रमोद सुविधाजनक नहीं है। यदि नानाको मालूम होजाय तो वह सुखमें बाधा डालेंगे—प्रति-वादी होंगे। अतएव राजभवन को छोड़कर और एक स्वतन्त्र भवन आमोद-प्रमोद के लिये बनवा लिया जाय, जिसमें विघ्न-बाधा का कुछ खटका न रहे।

अब सिराजुद्दौला एक स्वतन्त्र प्रासादके लिये चिन्ता करने लगा। किन्तु आज यह वृथा चिन्ता क्यों? उसने जब जो इच्छायें की हैं उनमेंसे आज किसको नवाबने पूर्ण नहीं किया है? तो फिर इस सामान्य बातके लिये क्या सोचना है?

अभी तक सैकड़ों अनुचित और असंगत इच्छायें प्रतिपालित हुई हैं, तो फिर यह सामान्य काम क्यों नहीं पूर्ण होगा? हमको विश्वास है, सिराजुद्दौला एक बार कह भरदे, अलीवर्दी तत्क्षण दौहित्र की यह अभिलाषा पूर्ण करेंगे।

सिराज बालक था, किन्तु वृद्ध नानाकी तबियतका विशेष रूपसे अनुशीलन कर चुका था। परन्तु सुचतुर तीक्ष्णबुद्धि वृद्ध नवाब दौहित्रके स्वभाव, चरित्र और कार्यकलाप को कुछ भी नहीं जानते थे। वह सूक्ष्मदर्शी होने पर भी, स्नेहके कारण प्रायः अन्धे थे। इसी कारण सिराजके सब कामों पर बालक समझ कर कुछ ध्यान न देते थे।

दिनपर दिन कटने लगे, किन्तु सिराजके हाथ ऐसा कोई सुयोग नहीं आया जो नाना से अपने हृदयका हाल कहता।

उद्यम करनेपर अलभ्य क्या है? देखते देखते सिराज को एक उत्कृष्ट अवसर प्राप्त हुआ। एक दिन नवाब और उनकी बेगम अन्तःपुरके शयनगृहमें पलँगपर बैठे हुए राज्यकी अवस्था पर आलोचना कर रहे थे, ऐसे समयमें सिराज उस स्थान पर पहुँचा। उसको देखकर अलीवर्दी ने कहा—'आओ! आओ! बंगाल, बिहार और उड़ीसाके भावी नवाब आओ!'

यदि कोई और दिन होता और ऐसे आदरसे सम्भाषण होता, तो सिराज को अपार आनन्द होता; किन्तु आज उसके हृदयमें एक नई वासना जाग्रत हो रही है—उसके लिये वह

चिन्ताकुल है, इसी कारण वृद्ध नवाबका स्नेह-सम्भाषण उस को अच्छा नहीं लगा। वह नितान्त खिन्न होकर बोला, "नानाजी! आप अपने मुँहसे, केवल बङ्गाल-बिहार-उड़ीसा ही क्यों, दिल्ली का सिंहासन पर्य्यन्त दान कर सकते हैं; परन्तु आपके कामोंसे तो मैं इस तरह की कोई बात नहीं पाता हूँ।"

यह बात सुनकर नवाबको कुछ व्यथा हुई। बोले,—"क्यों सिराज! क्यों! आज तुम यह बात क्यों कहते हो? क्या तुम समझते हो कि हमारा यह सिंहासन—हमारा यह राज्य, तुम्हारे सिवाय किसी और को दिया जायगा?"

सिराज—जिस समय मैं बालक था, कुछ नहीं समझता था, उस समय सोचता था कि मैं ही बङ्गाल, बिहार और उड़ीसा की मसनद पर बैठूँगा; किन्तु अब मैं समझा, कि वह केवल आशाकी छलनामात्र थी।

अली—सिराज! यह क्या! तुम आज ऐसी बातें क्यों कर रहे हो! मैं निष्कपट रूपसे कहता हूँ कि मेरे पीछे मुर्शिदाबादकी मसनद तुम्हारी ही है—तुम्हारे सिवाय और किसी की नहीं है। तुम ही हमारे एक मात्र उत्तराधिकारी हो। तुमको जबसे पाया है, तबसे पुत्रका अभाव बिल्कुल ही भूल गये हैं। तुम ही वंशधर हो।

सिराज—नानाजी! मैं जानता हूँ कि मैं आपके स्नेह ही से पला हूँ, किन्तु अब आप इस बात पर एक बार भी दृष्टिपात

नहीं करते कि मैं किस तरह सुखी होऊँ और किस तरह मेरे चित्तकी स्फूर्त्ति होवे।

अली—सो क्या सिराज! हमने तो सदैव ही तुमको सुखी करनेकी चेष्टा की है।

बेगम—सिराज अब भी बालक ही है! अभी तक उसमें ज्ञान-बुद्धि नहीं आई है। क्या कहता है—क्या करता है,—यह कुछ भी उसको मालूम नहीं है।

सिराज—आज पर क्या है, आपके सामने तो मैं सदैव ही बालक रहूँगा। पिता-माताके स्नेहकी आँखें पुत्रकी वयोवृद्धि में सदैव ही अन्धी रहती हैं; किन्तु मेरी सब ही बातोंको आप बालक कहकर टाल देते हैं, यही मुझको दुःख है।

यह सुनकर नवाब-पत्नी हँसते हुए मुखसे सादर सिराज की ठोड़ी पकड़ कर बोली—"सिराज! तुम हमारे सामने सदैव ही बालक रहोगे, यह मिथ्या नहीं है और तुम हमारे उत्तराधिकारी हो, यह भी निश्चय है; तो फिर तुम्हारे अविश्वास का कारण क्या है?"

सिराज—अविश्वास का कारण कुछ नहीं है। किन्तु मैं सोचता हूँ कि,यदि मैं ही आपके इस अतुल ऐश्वर्य्यका उत्तराधिकारी हूँ तो आज एक सामान्य कामना पूर्ण क्यों नहीं होती?

बेगम—सिराज! क्या तुम्हारी कोई कामना कभी पूर्ण नहीं हुई है? तुमने जब जो बात कही है, तभी पूरी की गई है। तो फिर आज यह नई बात क्यों?

सिराज—बाल्यकालकी वासना—बाल्यकालके अभाव पूर्ण किये थे; किन्तु समयोचित अभावका पूर्ण करना क्या पिता-माता का कर्त्तव्य नहीं है ?

यह बात सुनकर नवाब और बेगम हँसकर बोले,—"सिराज! यदि तुम्हारी बाल्यकाल की वासनायें पूर्ण की हैं, तो इस समय की वासना भी क्यों नहीं पूर्ण करेंगे? बोलो, तुम्हारी क्या अभिलाषा है?"

सिराज—हमारे लिये एक स्वतन्त्र प्रासाद निर्माण करा दीजिये। नवाब कुछ विस्मित होकर बोले,—"सिराज! स्वतन्त्र प्रासादका क्या प्रयोजन है? इस विपुल राजप्रासाद में तो स्थानका अभाव नहीं है।

सिराज—यह तो मैं जानता हूँ कि प्रासादमें स्थानका अभाव नहीं है; किन्तु नानाजी! सोचो तो, कि एक तलवार एक ही समयमें दो वीरोंके व्यवहारमें कभी आ सकती है?

बुद्धिमान् नवाब अलीवर्दी, दौहित्रके मतलबको समझ कर, हँसने लगे और कहा, "सिराज! यदि तुम्हारी अलग ही प्रासाद बनवानेकी इच्छा हो तो उसके लिये क्या चिन्ता है? तुम जैसा चाहो वैसा महल बनवालो। उसमें जो कुछ खर्च होगा वह सब मैं दूँगा।"

नवाबने प्रासादके बनवानेका हुक्म तो दे दिया, पर वास्तव में इससे उसका क्या मतलब है, इस बात पर उन्होंने एक बार भी विचार नहीं किया। वह सरलहृदय थे, इसीसे कोई

विचार उनके हृदयमें नहीं आया। उन्होंने अपनी सरलताके अनुसार यह समझ लिया कि नई आँखोंसे पुरानी वस्तु भली नहीं लगती है, इसी कारण सिराजने नये प्रासादके लिये प्रार्थना की है। किन्तु सिराजके हृदयमें क्या क्या विचार भरे हुए हैं, इसको वह कुछ न समझ सके और सरल हृदयसे महल बननेका हुक्म दे दिया।

सिराजने इस प्रकार कौशलसे नवाब अलीवर्दी से अपना काम निकाल लिया और बड़े उत्साहसे यह शुभ समाचार अपने साथियोंको सुनाने चला। पापकी धारा अभी तक धीरे धीरे बह रही थी। अब तीव्र गतिसे बहने लगी। और बादमें जो तरङ्गें उसमें उठीं, वह और भी भयानक थीं।



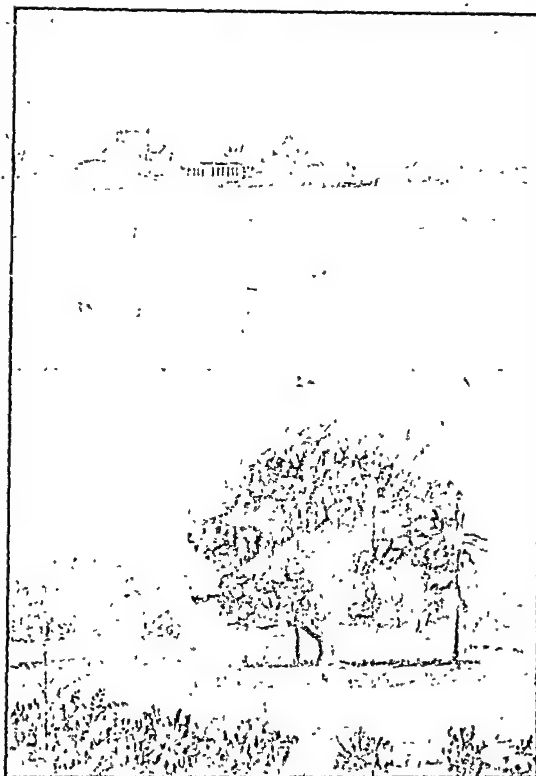
तीसरा परिच्छेद ।

अलीवर्दीकी अनुमतिसे सिराजने भागीरथीके पश्चिमी किनारे पर शीघ्र ही एक सुरम्य प्रासाद तय्यार करा लिया । यह महल ऐसी, कारीगरीसे और ऐसा सुन्दर बनाया गया था कि एक बार देखनेसे तृप्ति नहीं होती थी और बारम्बार देखनेकी इच्छा होती थी । जिसने इस महलको देखा, उसीने सिराजकी सौन्दर्य्य-प्रियताकी प्रशंसा की ।

यद्यपि यह महल ईंटोंका बना हुआ था, किन्तु सिराजके बड़े यत्नसे गौड़ देशके मँगाये हुए तरह तरहके पत्थरोंमें, तरह तरहकी कारीगरी करवानेसे उसकी शोभा ऐसी बढ़ गई थी, कि वह महल बङ्गभूमिकी स्पर्धाकी सामग्री हो गया था ।

इस महलकी लम्बाई-चौड़ाई प्रायः १२५ हाथ की थी । इसमें रङ्गमहल, विलास-महल, बेगम-महल—इत्यादि बहुत से महल थे ; और एक एक महल एक बड़े प्रासादकी बराबर था । प्रासादके नीचे एक झील थी, झीलकी दोनों पारें ईंटोंकी बनी हुई थीं । भागीरथीसे वह मिला दी गई थी, जिससे ज्वारके समय झील पानीसे परिपूर्ण हो जाती

मोती झील।

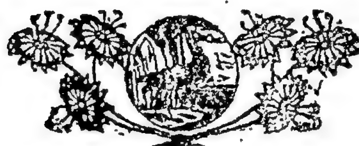


हीरा झील।

NARSINGH PRESS, CALCUTTA.

इस पारसे उस पार निकल नहीं सकता था। जहाँ दो रास्ते मिलते थे, वहाँ तोरणद्वार बनाये गये थे। प्रत्येक तोरणद्वार पर दो सन्त्री खड़े कर दिये गये थे, मानों वह बड़े यत्नसे द्वारकी रक्षा कर रहे हैं। उद्यानके चारों ओर चहार-दीवारी बनी हुई थी। भीतर जानेके लिये दो बड़े बड़े तोरणद्वार बने थे। ये द्वार सदैव हथियारबन्द सिपाहियोंसे रक्षित किये जाते थे।

उद्यान और प्रासादकी इस रमणीक शोभाको देखकर, सभी लोग मुक्तकण्ठसे सिराजकी रुचिकी प्रशंसा करते थे। उसने इस प्रासादका नाम हीरा-झील रक्खा था, किन्तु इसकी अतुलनीय शोभा पर मुग्ध होकर लोग इसको 'लाल कोठी' कहते थे।



चिन्ता है? जब कि आप बङ्गाल, विहार और उड़ीसाके भावी नवाब हैं तो फिर अपने आधीन राजा, महाराजा और ज़मींदारोंसे ऋण क्यों नहीं ले लेते?"

यह सलाह सिराजुद्दौलाको पसन्द नहीं आई। उसने कहा,—"यद्यपि बङ्गालका मैं भावी नवाब हूँ, तथापि जो मेरे आधीन हैं उनसे ऋण लेना उचित नहीं है। अपने आधीन मनुष्यसे ऋण लेनेसे मान-भङ्ग होता है। मैं उसको नहीं सह सकूँगा!"

यह सुनकर दूसरेने कहा,—"अच्छा, तो एक और उत्तम उपाय मैं बताता हूँ। धनकुबेर फ़तहचन्द जगत्सेठ आपका अनुगत और आधीन है। भय दिखाकर उससे ख़िराज वसूल कीजिये। वह आपसे बहुत डरता है।"

सिंह होकर स्यारका काम करने पर भी सिराज राज़ी न हुआ और बोला, "मुझको रुपयेकी कमी होनेके कारण, मैं यह नहीं चाहता हूँ कि अकारण किसीके ऊपर भार रक्खूँ। यद्यपि फतहचन्द जगत्सेठ मेरे राज़ी करनेको अथवा मेरे भयसे रुपयेकी सहायता देना स्वीकार कर ले, तथापि मैं यह नहीं कर सकूँगा कि अपने अनुगतको दुःख पहुँचाऊँ।"

रुपये जमा करनेके लिये कुसङ्गी लोग तरह तरहकी बुरी सलाहें देने लगे, किन्तु सिराजुद्दौलाने कोई भी स्वीकार नहीं की। यद्यपि वह रुपयेका बड़ा भूखा था, तथापि छोटे का संहार करके तलवारकी प्यास बुझाना उसके स्वभावमें नहीं

समझकर कि सिराजके बुद्धि-कौशल द्वारा कोयलोंने यह शिक्षा लाभ की है वह बड़े परितुष्ट हुए।

सिराजने नाना और उनके साथियोंको लेकर पहले उद्यान दिखलाया। उद्यान देखनेसे अलीवर्दीको अभूतपूर्व आनन्द हुआ और वह सिराजकी सौन्दर्यप्रियताकी वार वार प्रशंसा करने लगे। सिराज भी थोड़ा बहुत शिष्टाचार दिखा कर कहने लगा, "नानाजी! यह सब आप ही का अनुग्रह है और आप ही के रुपयेसे है!"

सिराजके शिष्टाचार और सौजन्यसे स्नेहान्ध वृद्ध नाना आनन्दके मारे अधीर हो उठे। सिराज भी अच्छा अवसर समझ कर उन्हें प्रासाद दिखलानेको ले चला। साथमें और कोई नहीं रहा। साथके राजा, महाराजा इत्यादि उद्यानमें रह गये।

सिराजने प्रासादमें प्रवेश करके नानाको रङ्गमहल, निवास-महल, बेगम-महल—इत्यादि एक एक करके सभी दिखलाये। हरेक महलके एक एक कमरे में नाना-वर्णके पत्थरोंके ऊपर कारीगरीका काम और महामूल्य असबावके सजानेकी रीति देखते देखते नवाब विस्मयसे मुग्ध हो गये।

अन्तमें सिराज अपने नानाको एक बड़े भारी कमरेमें ले गया। किन्तु ज्योंही नवाबने उसके भीतर पैर रक्खा, त्योंही पीछेका द्वार बन्द हो गया।

राये छूटनेके लिये उचित अर्थ-दण्ड न देने तक आपको मुक्ति नहीं हो सकती।

नवाब अलीवर्दी सिराजुद्दौलाका मतलब समझ कर हँसने लगे और बोले "सिराज! तुमने एक तुच्छ वस्तु रुपयेके लिये मुझको क़ैद किया है। अच्छा, मुझको तौलनेमें जितना रुपया लगेगा, उतना रुपया मैं तुमको दूँगा। अब मुझको छोड़ दो!"

सिराज—नानाजी! मैंने इतने थोड़े रुपयेके लिये आपको क़ैद नहीं किया है। और केवल बातोंके भरोसे आपको छोड़ूँगा भी नहीं। यदि आप नक़द दस लाख रुपये दे सकें, तब ही मैं आपको छोड़ सकता हूँ; अन्यथा नहीं।

अलीवर्दी—सिराज! मैं रुपये साथ लेकर तो आया नहीं हूँ कि इसी समय तुमको दे दूँ। तुम मुझको छोड़ दो, मैं शपथ खाकर कहता हूँ कि जो मैंने वादा किया है सो रुपया राजमहलमें पहुँचते ही तुम्हारे पास भेज दूँगा।

सिराज इस बात पर राज़ी नहीं हुआ और कहा,—"मैंने जैसे आपको कौशल करके बन्दी किया है, आप भी उसी तरह कौशल करके मुक्तिका रास्ता ढूँढ़ रहे हैं।"

अलीवर्दी—सिराज! तुम आज मेरी बातका विश्वास क्यों नहीं करते हो? मैंने देना कह कर, तुमको कब कब नहीं दिया है?

सिराज—आपने जब कुछ दिया है तब अपनी ही इच्छासे

पाँचवाँ परिच्छेद ।

जो लोग उद्यानमें थे वह सब नवावके लौटनेमें देर देख कर उत्सुक हो रहे थे। इसी समय एक दूतने जाकर सम्वाद दिया कि, "कुमार सिराजुद्दौलाके कौशलसे नवाब बन्दी हुए हैं ! आप लोग जाकर उनको मुक्तिका उपाय करें, यह नवावने कहा है।"

इस सम्वादको सुन कर, कि जिसकी सम्भावना भी नहीं थी, सब लोग डर गये और सिराजुद्दौलाकी कूटवुद्धिका ध्यान करके भीत और विचलित हो गये। आपसमें परामर्श करने लगे कि "सिराजुद्दौलाका क्या उद्देश्य है? नवावको किस कारणसे उसने बन्दी किया है? हमलोग किस प्रकारसे उनका उद्धार कर सकते हैं? कहीं हम लोगोंको भी इसी तरहसे कौशल करके बन्दी न करले?"

इन बातोंको सुनकर राजा रामरायने कहा,—"इसकी मीमांसा करना बड़ा कठिन है। सिराजुद्दौलाका उद्देश्य क्या है, यह कुछ भी समझमें नहीं आता। उसने क्या सत्य ही नवावको बन्दी किया है! यदि यही किया है, तो किस लिये?"

नवाबने जब देखा कि सिराज रुपये लेनेके अतिरिक्त और किसी प्रकार छोड़ने पर राज़ी नहीं है,तो निरुपाय होकर बोले,—"सिराज! तुमने मेरे मानकी रक्षा नहीं की, न तुम मेरे गौरवको समझ सके! देखो जो मेरे आधीन हैं, आज उन्हींसे अपने छुड़ानेके लिये सहायता माँगनी होगी! यह मेरे लिये बड़ी लज्जाकी बात होगी! सिराज! यह तुम्हारी बालकपनकी चपलता न जाने कब जायगी? और न मालूम तुम अपना गौरव कब समझोगे? खैर जो कुछ हो, इस समय एक काम करो कि यदि विना रुपया लिये किसी प्रकार न छोड़ना चाहो तो जो लोग हमारे साथ आये हैं उनको खबर भेज दो कि वह अर्थ देकर मुझको छुड़ा ले जावें।

स्नेहमें भी क्या मोहिनी शक्ति है! जिस अलीवर्दीके दुर्दण्ड प्रतापसे कुल बङ्गाल विहार और उड़ीसा काँपता था, वह भी आज वात्सल्य के जादूसे अपने प्रबल प्रतापको भूल गया। सिराजुद्दौलाने शीघ्र ही उन राजाओंसे जो उद्यानमें बैठे थे दूत द्वारा नवाबका अभिप्राय कहला भेजा।



राजवल्लभ—सिंहासनके लिये!

रामराय—क्यों? सिंहासनका उत्तराधिकारी तो वही है और नवाव अलीवर्दी भी तो वृद्ध हो गये हैं। क्या दो दिनका विलम्ब वह नहीं सह सका? नहीं नहीं, सिंहासनके लोभसे दौहित्र नानाके साथ ऐसा कपट व्यवहार नहीं कर सकता, यह बात विश्वास करने योग्य नहीं है।

राजवल्लभ—सिराज जैसा उद्धत और हिताहितके ज्ञानसे शून्य है, मुसल्मान होकर भी शराव पीता है, ऐसी अवस्थामें वह क्या नहीं कर सकता है?

रामराय—तो क्या आपका मतलव है कि सिराजुद्दौलाने सिंहासनके लोभसे ही नवावको वन्दी किया है?

राजवल्लभ—निश्चय रूपमें यह कैसे कहा जा सकता है? केवल अनुमानसे ऐसा मालूम होता है।

रामराय—यदि सिराजको सिंहासन ही लेना अभीष्ट है, तो नवावको छुड़ानेके लिये हम लोगोंके बुलाने का क्या कारण है?

राजवल्लभ—हम लोगोंको भी इसी प्रकार कौशलसे वन्दी करेगा।

रामराय—आप चाहें जो ख्याल करें और जो चाहें करें, परन्तु मेरा तो यह अनुमान है कि सिंहासनके लोभसे नवाव को वन्दी करना सिराजका उद्देश्य नहीं हैं, उसका कुछ और ही मतलव है।

एक प्रकारका आतङ्क हो गया। सबने सोचा कि सिराजुद्दौलाने कौशल करके नया कर स्थापन करनेकी यह तरकीब निकाली है। यही सोचकर एक दूसरेकी ओर सतृष्ण नेत्रोंसे देखने लगे।

सिराजुद्दौलाकी इस तीक्ष्ण बुद्धिका परिचय पाकर नवाब भीतर भीतर सन्तुष्ट तो हुए, परन्तु प्रकाशमें थोड़ा विरक्तभाव दिखलाकर बोले,"हमारी बात पर तुमको इतना भरोसा नहीं है! मैं ही जब इस नये कर 'बाजजमा' के लिये आदेश कर रहा हूँ, तब क्या मेरे मङ्गलाकांक्षी राजालोग इससे असम्मत हो सकते हैं, यह कभी सम्भव है? तुम बालक हो। राजसम्मान को कुछ भी नहीं समझ सकते हो।"

नवाबके चित्तरञ्जनके लिये हो अथवा उनके भयसे हो, राजवल्लभने कहा,"नवाब बहादुरने जिस विषयका आदेश दिया है उससे क्या हम लोग कभी असम्मत हो सकते हैं?"

अलीवर्दी—सिराज! अब तो राजा लोग ये नया कर प्रदान करनेको स्वीकृत हैं। अब मुझको छोड़ो!

सिराज—और वह दस लाख रुपयेकी बात! वह तो प्रदान कीजिये।

यह सुनते ही जिसके पास जितना रुपया था, सबने अपना अपना निकाल कर दे दिया। सिराजुद्दौलाने देखा कि सब मिलाकर ५०१५८७ रुपये हुए। सिराजुद्दौला सोचने लगा कि कौशल करके जो कुछ पाया वही बहुत है। सुतरां

यह सुनते ही सब लोगोंकी चिन्ता जाती रही और निर्भय होकर नवाबके पास चल पड़े।

जिस मकानमें अलीवर्दी बन्द थे, वहीं सब लोग पहुँच गये।

नवाबने सब लोगोंको आया हुआ देखकर कहा,—"राजगण! सिराजकी बाल्यावस्थाकी चपलता अभी तक नहीं गई है, वह मुझसे दस लाख रुपये चाहता है, इसीलिये मुझे अवरुद्ध किया है और इतना रुपया न पानेसे किसी प्रकार मुझको छोड़नेमें राज़ी नहीं है। इस समय आप लोग मुझको मुक्त करें।"

सिरा—नानाजी! केवल दस लाख रुपया देने ही से काम नहीं चलेगा! मेरे इस प्रासादकी रक्षाके लिये एक नया कर स्थापन कर दीजिये। आपके आधीन राजा, महाराजा, ज़मींदार और उमराव लोग सभी प्रधान इस समय उपस्थित हैं।

नवाब हँस कर कहने लगे,—"सिराज! तुम्हारे इस सुरम्य प्रासादकी रक्षाके लिये मैं 'वाजजमा' नामक एक कर स्थापन करनेका हुक्म देता हूँ।

सिराज—नानाजी! जो लोग कर देंगे, वह सब यहाँ मौजूद हैं। यह लोग जब तक अपनी सम्मति प्रकाश न करें, तब तक मुझे किसी तरह विश्वास न होगा।

नये कर स्थापनकी बात सुनकर राजा लोगोंके चित्तमें

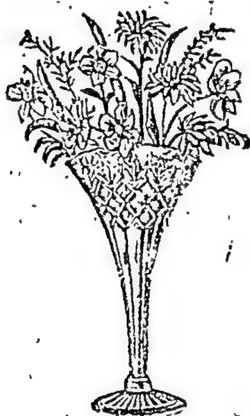
छठा परिच्छेद ।

सिराजको इस समय रुपयेकी कमी नहीं है। बुरे साथियोंका भी अभाव नहीं है। इस समय वह दिन-रात मदिरापानमें डूबा हुआ है। इन्द्रियोंके सुखमें घोर आसक्त है। तरह तरहके आमोद-प्रमोद, नृत्य-गीत, हास्य-परिहास और क्रीड़ा कौतुकका अन्त नहीं है। केवल "लाओ, ढालो, हमको दो, तुम पीओ" यही शब्द सुनाई देते हैं। कभी विकट हँसी, कभी भीषण चीत्कार, कभी तालीकी ध्वनि, हीराझीलमें सुनाई पड़ने लगी।

यदि सिराजको इस समय पूर्ण रूपसे स्वाधीन कहा जाय तो भी ठीक है। जिस दिनसे हीराझीलके सुरम्य प्रासादमें उसने अपना वासस्थान किया है, उस दिनसे वह स्वाधीनसे स्वाधीन भावके काम कर रहा है। इस समय किसी के भय अथवा निन्दापवादकी शङ्का उसे नहीं है। खुशामदियोंकी खुशामदसे और पासवालों की उत्तेजनासे उत्साहित होकर, बुरे से बुरे अधर्मके काम करनेमें भी वह कुण्ठित नहीं है। कुसङ्गियोंके साथमें नित्य नये नये पापोंमें लिप्त हो रहा है।

शेष रुपयोंके लिये और कुछ न कह कर उसने नवावको छोड़ दिया।

नवावने छूटने पर सिराजके इस असङ्गत व्यवहार पर कोई असन्तुष्टता प्रकाश नहीं की, वरन् दौहित्रके बुद्धि-कौशल का परिचय पाकर, प्रसन्नचित्तसे राजप्रासाद को लौटे। नवाब अलीवर्दी का इस तरहका प्रेमप्रदान ही सिराजुद्दौलाके भावी सर्व्वनाशका कारण हुआ। उसने प्रचुर धन पाकर, अपने को प्रमत्त यौवनकी तरङ्गोंमें डाल दिया।



सातवाँ परिच्छेद ।

सिराज इस समय यौवनकी प्रबल तरङ्गोंमें डूबने लगा। सैकड़ों कामिनियोंके सहवाससे भी उसकी इन्द्रिय-लालसा कम न होकर, दिन पर दिन बढ़ने लगी। वेश्याओंको लेकर, कुलवतियोंके कुलको बिगाड़ कर भी उसका विकार कम नहीं हुआ। कुसङ्गियोंने अपने मतलबसे रोज़ रोज़ नई नई रमणियोंके सम्वाद लाने आरम्भ किये।

इसी समय फ़ैज़ी नामकी एक रमणीके रूपकी कथा सिराजुद्दौलाके कर्णगोचर हुई। सुनते ही सिराजने उसके लानेके लिये आदमी भेजे।

फ़ैज़ी देहलीमें नाचगानेका पेशा करती थी। सिराज उसको एक लाख रुपया प्रदान करके मुर्शिदाबाद ले आया और उसकी भुवन-मोहिनी मूर्त्ति पर मोहित होकर उसे अपनी प्रणयिनी बनाकर रक्खा।

फ़ैज़ी रूप और गुणमें अद्वितीय थी। उस समय उसके बाराबर नाचने या गानेवाली कोई और भी थी कि नहीं, इसमें सन्देह है।

यहुदर्शी नवाब अलीवर्दी की लापरवाहीने सिराजुद्दौलाके अधःपतनका पथ भी चौड़ा कर दिया। हीरा झीलमें आकर सिराजके पाप-वृक्षने खूब ही बढ़वार पाई। पापी साथियोंके संसर्गसे तरह तरहके लोमहर्षण काम होने लगे।

कुसङ्गियोंकी सलाहसे सिराज धनी और मानी लोगोंके मानको पददलित करने लगा। किसी परम सुन्दरी युवतीका सम्वाद पाते ही, उसे रुपयेका लालच देकर अथवा भय दिखाकर या वश करके अपनी अङ्कशायिनी कर लेता।

सिराजुद्दौलाके इस घोर अत्याचारसे लोग इतने भयभीत हुए, कि अपने कुल और मानकी रक्षा करनेके लिये किसी किसीने तो सुन्दरी युवतियोंको कुरूपा तक कर दिया; किसी किसीने छुपाकर रखना आरम्भ किया। सब ही अपनी अपनी मान-मर्यादाकी रक्षा करनेके लिये व्याकुल हो रहे थे।

केवल यही नहीं कि सिराजुद्दौला हीराझील ही में रहकर इस अभद्रतासे आमोद-प्रमोद करता था, वरन् वेश्याओंको लेकर नाव पर सवार होकर प्रकाश-भावसे भागीरथीमें घूमता था।

और इस भागीरथीके विहारमें भी अनेक अनर्थ करता था। यदि घाट पर कोई सुन्दरी युवती दिखाई पड़ जाती, तो उसको बलपूर्व्वक अपनी नौकामें चढ़ाकर उसका सतीत्व नष्ट करता।

मौसा सय्यद अहमद रूपकी तुलनामें उससे बढ़कर था। सय्यद अहमदको सर्वाङ्गसुन्दर कहें तो ठीक होगा।

बहुमूल्य गहने कपड़े और धनरत्नके लोभसे फ़ैज़ी केवल बाहरी हाव-भावसे और कृत्रिम प्रेम दिखाकर सिराजका चित्तरञ्जन करती थी और सय्यद अहमदके रूप पर मुग्ध होकर भीतर भीतर उसीके चरणोंकी दासी हो रही थी।



सिराज इसके प्रेममें बिल्कुल ही पागल हो गया। क्या दिनमें, क्या रातमें, सदैव ही उसको वह अपने पास रखता। उसीके साथ भोजन, उसीके साथ विहार। नाचगाना, आमोद-प्रमोद सभीमें वह साथ रहती। सिराज एक पलको भी उसे आँखकी ओट नहीं कर सकता था। सर्व्वदा अपने नेत्रोंके सामने रखकर, उसकी रूपसुधाके पान करनेमें लिप्त रहता था।

सिराजके एक विवाहिता स्त्री और दो और भी स्त्रियाँ होने पर भी, उसने फ़ैज़ीके रूप पर मुग्ध होकर अपने मन और प्राण उसको अर्पण कर दिये थे।

परन्तु सिराजुद्दौला जितना फ़ैज़ीसे प्रेम करता था। फ़ैज़ी उतना उसको नहीं चाहती थी। प्रेम रुपयेके खर्च करनेसे नहीं मिलता है, फ़ैज़ी इस बातका सच्चा उदाहरण थी। सिराजुद्दौलाने फ़ैज़ीको लाखों रुपये और मणि मुक्ता लगे हुए अतुलनीय वसनभूषण इत्यादि देकर भी उससे सच्चा प्रेम न पाया। सिराजके सामने वह प्रेमकी बातें कहती थी, परन्तु वह भीतरसे दूसरेको चाहती थी।

रूपको कौन नहीं चाहता है? अतुल ऐश्वर्य्यके अधिकारी बङ्गाल-विहार और उड़ीसाके भावी नवाब सिराजको प्राण और मन समर्पण न करके, फ़ैज़ी भीतर भीतर सिराजके मौसा सय्यद अहमदको अपना प्राण-मन क्यों अर्पण कर बैठी? क्या सिराज कुरूप था? नहीं, यह बात नहीं थी। किन्तु उसका

ऐसे समयमें सिराज आमोद-प्रमोदको छोड़कर फ़ैज़ी के सोनेके कमरेमें गया। बेगम-महलके प्रवेश-द्वार पर पहुँचते ही द्वारकी रक्षा करनेवाली दासीने घबराकर द्वार छोड़कर उसको राह दी। सिराज ज्योंही फ़ैज़ीके द्वार पर पहुँचा, त्योंही मानों दूसरे द्वारसे कोई छाया सी घरमेंसे निकल गई। सिराज मदिरा पीनेके कारण आज पूरे होशमें नहीं था; इस कारण स्पष्ट देख नहीं सका। उसके मनमें सन्देह उत्पन्न हुआ और सन्दिग्धचित्तसे उसने घरमें प्रवेश किया।

सिराजको देखकर फ़ैज़ीने शीघ्रतासे उठकर अभ्यर्थना की, बैठनेके लिये जगह दी। किन्तु सिराज आज कुछ अनमना है। पहले जब वह कभी घरमें आता तो प्रणयिनी से जाने कितनी प्रेमकी बातें करता; किन्तु आज वह सब न करके, केवल एक निगाहसे फ़ैज़ीके मुखकी ओर देख रहा है।

पापीके मनमें सदा ही सन्देह और भय बना रहता है। सिराजके इस प्रकारसे देखनेसे फ़ैज़ीको कुछ भय उत्पन्न हुआ। किन्तु कुलटाके बुद्धि और साहसकी सीमा नहीं होती है।

कुलटा फ़ैज़ीने बड़े साहससे कुटिल हँसी हँसते हँसते कहा, "प्राणेश्वर! आज तुमको किस बातकी चिन्ता है? ऐसे चुपचाप दासीके मुखकी ओर बड़ी देरसे क्या देख रहे हो?"

चतुर सिराजने अपने मनका भाव छिपा कर कहा,—

आठवाँ परिच्छेद।

कपड़ेके भीतर आग छिप नहीं सकती, पाप भी बुद्धिके कौशलसे बहुत दिन ढका नहीं रह सकता। सिराजने फ़ैज़ीको बेगम बनाकर अपने अन्तःपुरमें स्थान दिया था। फैज़ी वेश्या होने पर भी और बेगमोंकी तरह बेगम-महलमें रहती थी। हीरा झीलमें उसके लिये एक स्वतन्त्र महल था। वह अपनी दासी-बाँदियोंके साथ वहाँ रहा करती थी। उस महलमें सिराजुद्दौलाके सिवाय और किसी को जानेका अधिकार नहीं था।

रात दो पहर जा चुकी है। सब जीव सो रहे हैं। प्रकृति निस्तब्ध है। किसी प्रकारका शब्द सुनाई नहीं देता है। कभी कभी उल्लूका कठोर शब्द, कभी स्यार और कुत्तोंका विकट चीत्कार और झींगुरकी झनकार सुनाई दे जाती है। आकाश में चन्द्रमा प्रायः अस्त होनेको है, उसकी धीमी धीमी ज्योति पृथ्वी पर पड़ रही है, जिससे एक प्रकारकी धुँधली रोशनी उत्पन्न हो रही है। उस उजेलेमें सब कुछ अस्पष्ट दिखाई देता है।

"फ़ैज़ी! तुम्हारे चेहरे पर मैं आज एक अलौकिक सौन्दर्य्य देखता हूँ। जबसे तुम हीरा झीलमें आई हो, एक दिन भी मैंने तुम्हारा ऐसा रूप नहीं देखा। आज तुमको देखनेसे यही मालूम होता है कि स्वर्गसे परी उतर आई है।"

रूपकी प्रशंसा सुनकर फ़ैज़ी मन ही मन हँसने लगी। समझ गई कि सिराजने उसके प्रणयपात्र सय्यद अहम्मद को देख नहीं पाया। हँसते हँसते बोली,—"प्राणेश्वर! आप प्रेम की आँखसे देख रहे हैं, इसी कारण दासी ऐसी रूपवती ज्ञात होती है।"

सिराज—नहीं फ़ैज़ी! आज मैं तुम्हारी सब बातोंमें नवीनता देखता हूँ। आज तुम्हारी वेश-विन्यास की परिपाटी ऐसी है मानों रूपकी छटा बाहर फूटकर निकली पड़ती है। तुम्हारा इतना रूप तो मैंने कभी देखा ही नहीं था। घरके भीतर घुसते समय मुझे तुम्हारे परी होनेका भ्रम हुआ था। परन्तु तुमने जब ये बातें कहीं, तब मेरा वह भ्रम जाता रहा। तुम्हारे इस वेश-विन्यास को देखकर चित्तमें ऐसा होता है, न जाने आज तुम किस भाग्यवान को सुखी करोगी?

यह सुनकर फ़ैज़ीका हृदय काँप उठा, मुख म्लान होगया, किन्तु यह सोचकर कि कहीं उसका यह भाव सिराजुद्दौला समझ न लेवे, इस भयसे कौशल करके "देखूँ मैं कैसी मालूम होती हूँ" यह कहकर सिराजके सामनेसे उठकर दर्पणके पास चली गई।

पुरुष के साथ प्रेमालिङ्गन किये हुए सुखसे सो रही है। यह और कोई नहीं था, यह उसका मौसा सय्यद अहमद था।

सिराज क्रोधसे अधीर हो उठा। प्रतिहिंसा की ज्वाला भभक कर उन दोनोंको वध करनेको उद्यत होगई। तलवार उसने म्यानसे निकाल ली। दीपकके उजेलेमें तलवार बिजली की तरह चमकी। परन्तु कुछ समझकर वह ठहर गया और तलवार को म्यान में कर लिया। चारपाई के पास खड़ा होकर सोचने लगा, "ओह! नारी-जाति कैसी अविश्वासिनी होती है! जिसको प्राणोंसे भी अधिक समझकर मन और प्राण सभी अर्पण कर चुका था, जिसको एक पलके लिये अलग करनेसे संसार शून्य मालूम होने लगता था, जिसके प्रत्येक अङ्गसे अनुराग प्रकट होता था, उसका यह काम, यह आचरण! ओह! कैसी विश्वासघातकता है! नारीजाति का हृदय कैसा शठतापूर्ण है!"

राजकुमार! असती फ़ैज़ीको अविश्वासिनी देखकर, सर्व स्त्री-जाति पर अकारण दोषारोपण मत करना! क्या आप समझते हो कि संसार की सब ही नारियाँ फ़ैज़ीकी तरह अविश्वासिनी हैं? आपने रमणीके हृदय को परीक्षा करना अच्छी तरह नहीं सीखा है। सती-असती का भेद आप नहीं जानते हैं। आप असतीके प्रेममें रहे हो, इसी कारण आपके प्रणयमें आज यह नैराश्य उत्पन्न हुआ है। इसी कारण आप को यह मर्मभेदी यातना मिली है।

नवाँ परिच्छेद।

जो सन्देह-मेघ सिराजुद्दौला के हृदयमें उठा था, वह दिन-दिन तिल-तिल करके उसके हृदय-आकाश में फैल गया। फ़ैज़ी दूसरेके प्रेममें फँसी है कि नहीं, इसके अनुसन्धानमें उसकी सतर्क दृष्टि सदैव ही रहने लगी।

एक दिन रात प्रायः शेष होनेको थी। सिराज के सब साथी मदिरा पिये हुए बेहोश पड़े थे। दास दासी भी सो रहे थे। केवल महलके द्वारपर सन्तरी जाग रहे थे। इस समयमें सिराजुद्दौला धीरे धीरे प्रमोदगृह त्याग कर फ़ैज़ीके घर की ओर जाने लगा। पैरमें जूता नहीं है, साथमें कोई रोशनी-वाला भी नहीं है, क्योंकि चोरको सदैव ही डर होता है कि कहीं कोई देख न लेवे।

इस प्रकार वह फ़ैज़ी के घरमें जा पहुँचा। वहाँ पहुँचकर जो कुछ उसने देखा उससे उसकी आँखें जलने लगीं, सब शरीरसे बिजली सी छूटने लगी और आँखोंसे आग की चिन-गारियाँ छूटने लगीं। इतने दिनोंसे जिसकी टोहमें था, वह आज मिलगया। उसने देखा कि उसकी प्राणेश्वरी फ़ैज़ी अन्य किसी

होता है। इसी सरल बातके कारण, इतने दिनों तक मैं तुझ पर अविश्वास न कर सका। किन्तु आज जो कुछ मैंने देखा है, उससे आज मुझको दिव्य ज्ञान प्राप्त हुआ है। मैंने इतने दिनों तक अमृतके धोखे हलाहल विष पिया है! फ़ैज़ी! मैंने एक दिन भी कभी यह नहीं सोचा था कि तुम ऐसी अविश्वासिनी हो सकती हो! आज तुम्हारा काम देख-कर मुझको पूरी पूरी शिक्षा मिल गई है! मैंने समझ लिया है, कि जो कोई वेश्याके प्रेममें फँसकर उसको अपना प्राण और मन अर्पण करे उससे अधिक मूर्ख और कोई नहीं है। फ़ैज़ी! धिक्कार है तुझ को और तेरे जन्म को! क्या वेश्या होने से ही, किसी बातमें भी सत्य का लेशमात्र नहीं रहता है?"

यह भर्त्सना-वाक्य फ़ैज़ी अधिक देर तक न सह सकी। उसने कहा, "नवाब! तुम जो कुछ कहते हो सब सत्य है। कुलटा होनेपर किसी बातका विश्वास नहीं होता है। किन्तु नवाब! इस तरहके वाक्य मुझसे न कहकर यदि तुम अपनी मातासे कहते तो अधिक शोभा पाते।"

यह बात फ़ैज़ीने जीवनसे निराश होकर कही। यह सुनकर सिराजुद्दौला की मूर्त्तिने उत्कट भाव धारण कर लिया। मुखमण्डल प्रातःकालके सूर्यकी तरह रक्तवर्ण होगया। आँखें खुल गईं और कुम्हारके चक्र की तरह चारों ओर घूमने लगीं। दाँतोंको किटकिटा कर बोला, "पापिनी! तेरा ऐसा मुँह

सिराजुद्दौला फ़ैज़ी की विश्वासघातकता की जितनी आलोचना करने लगा, उतना ही उसको दुःख क्षोभ क्रोध और अभिमान व्याकुल करने लगा। वह और स्थिर न रह सका और कहा, "फ़ैज़ी! फ़ैज़ी!"

प्रेम-सुखमें सोये हुए नायक नायिका की सुख-निद्रा भंग होगई। उन्होंने आँखें खोलकर देखा कि चारपाई के पास सिराजुद्दौला खड़ा है, मानो साक्षात् यम खड़ा है। दोनोंके प्राण उड़ गये।

सय्यद अहमद और विलम्ब न करके शीघ्रतासे भाग गया। उसको भागते हुए देखकर सिराजुद्दौलाने हँसी करके कहा, "मौसा जी! कहाँ जाते हो? थोड़ी देर ठहरकर अपनी प्रणयिनी का परिणाम अपनी आँखोंसे देखते जाओ।"

परन्तु सय्यद अहमद इस बातको न सुनकर भाग गया। तब सिराजने फ़ैज़ीको अपने पास बुलाकर कहा,—"फ़ैज़ी! जिस बातकी खोजमें मैं बहुत दिनोंसे था, उसको आज प्रत्यक्ष देख लिया! बोल, आज क्या बात बनाकर मुझको धोखा देगी? उस दिन मैंने सय्यद अहमदको स्पष्टरूपसे नहीं देख पाया था, इसीसे तुझसे कुछ नहीं कहा था। मैंने समझा था कि शायद मुझको भ्रम होगया हो। किसी विषयका प्रत्यक्ष प्रमाण न पाकर, एक आदमीका सर्वनाश करदेना उचित नहीं था। मुझे ऐसा विश्वास था, कि लोग जो कुछ मुँहसे कहते हैं और कामसे जो कुछ दिखाते हैं, उनके हृदयमें भी वही

है कि मैंने जो कुछ तुमसे कहा है सत्य ही कहा है,झूठ नहीं कहा है।"

सिराज और न सह सका। क्रोधसे उसका अङ्ग-अङ्ग काँपने लगा, सब शरीरसे मानों अग्नि निकलने लगी। दोनों नेत्र जलने लगे। उसने दाँतोंको किटकिटाकर कहा, "यदि पहलेसे मुझको यह मालूम होता कि सर्प अपना स्वभाव न छोड़ेगा, तो कुलटाके प्रेममें फँसकर, शेषमें यह दुःसह दुःख कभी न भोगना पड़ता! फ़ैज़ी! तेरे व्यवहारसे और तेरे कामोंसे मुझको यथेष्ट शिक्षा मिली है! अब तू अपने विश्वास-घातका उचित दण्ड ले। और तूने जैसे मेरी इच्छाओं पर पानी फेरा है, वैसे ही मैं भी तुझको इस जगत्के सब सुखोंसे वञ्चित करूँगा। तू जानती है कि तेरे इस कामका परिणाम क्या होगा?

यह कह कर सिराज सिंहकी तरह गरजने लगा कोई "है रे!" शीघ्र ही कई एक नौकर सोते से उठकर दौड़ आये और सिराजको सलाम करके हाथ जोड़ कर बोले, "हुज़ूर! हम लोगोंको क्या आज्ञा है?"

सिराज—शीघ्र ही इस दुश्चरिताको एकान्तमें लेजाकर बन्द करो और ईंटोंसे सब द्वारोंको बन्द करदो, जिससे भीतर हवा न जा सके। विश्वासघातिनी जान ले और देख ले कि सिराजुद्दौलाको धोखा देनेमें और दूसरेके प्रेममें फँसनेमें कितना सुख है।

है जो तू ऐसी बातें करती है। तू जानती है कि तेरा मरना जीना किसकी इच्छाके आधीन है? तेरी ऐसी हिम्मत कि मेरी माताके चरित्र पर कटाक्ष करती है! क्या तुझे जीवन की आशा कुछ भी नहीं है? आज तेरी बुद्धि क्यों पलट गई है? तू क्या जानती नहीं है कि मैं कौन हूँ? आज मैं तुझ को उचित शिक्षा देता हूँ। तेरी मौत पास है। तू कौनसे साहस से स्वारिनी होकर सिंहिनी की हँसी करती है!"

फ़ैज़ीने आज जो कर्म्म किया है उससे उसकी मौत निश्चय है; फिर उसको सिराजुद्दौलाका भय क्यों होने लगा? जीवन की आशासे निराश होकर उसने धीरे धीरे कहा,—"बाद-शाह! मैं जानती हूँ कि तुम बँगाल-विहार उड़ीसाके भावी नवाव हो। राजकुमार! यद्यपि मैं वेश्या हूँ, यद्यपि मेरा बड़ा नीच पेशा है, तथापि मैं किसी से अनुचित बात नहीं कह सकती हूँ। आप अपनी इच्छानुसार मेरा वध कर सकते हैं अथवा उचित दण्ड दे सकते हैं। परन्तु जो राजा है, उसको विचार करके ही दण्ड देना उचित है। जो कुलकलङ्किनी है, वह क्या कभी एक मनुष्यके प्रेममें बँधी रह सकती है। उसको तो नित्य परपुरुष के सहवास की ही शिक्षा दी जाती है? यदि यही हो सके, तो वह नारि-योंके अमूल्य रत्न सतीत्वको जलाञ्जलि देकर 'सती' नामके वदले घृणित नाम 'वाराङ्गना' क्यों रक्खे? और भी एक बात

आँखोंसे तेरी दुर्दशा न देख लूँगा, तब तक मैं किसी तरह स्थिर न हो सकूँगा।

इस समय जो मैं तेरा पापी मुख देख रहा हूँ, उसके लिये भी मैं समझ रहा हूँ कि मैं बड़ा नालायक़ हूँ।"

फ़ैज़ी मरनेके लिये तय्यार थी, किन्तु यातनामें जब कुछ कमी न हुई तब सिराजुद्दौलाका डर किस बातका रहा? वह बड़े गर्वसे बोली, "सिराज! तुम अबलाको पाकर, बिना दोष ही, अनुचित दण्ड देकर मेरे प्राण लेते हो; किन्तु वास्तवमें मैं इसके लिये अपराधिनी नहीं हूँ। वेश्याओंका स्वभाव और धर्म यही है, परन्तु तुम यह मत ख्याल करना कि तुम को इस अनुचित काम करनेका फल नहीं भोगना पड़ेगा। यदि परमेश्वर है, तो जिस तरह तुम मुझको अकारण कालके गालमें भेज रहे हो; तुम भी उसी तरह अकाल-मृत्युको प्राप्त होगे। तब तुमको मालूम होगा कि मानव-जीवनका मूल्य क्या है।"

यह सुनकर सिराज चौंक पड़ा। किन्तु क्रोध और प्रतिहिंसाके कारण उसका हृदय ऐसा कठोर हो गया था, कि फ़ैज़ीके यह कर्कश वाक्य बहुत देर तक उसके हृदयमें न ठहरे; वरन् जलती हुई आग पर घी पड़ गया। उसने और देर न करके नौकरोंसे कहा कि "मैं इसको और कोई बात सुनना नहीं चाहता। शीघ्र इसको ले जाओ।"

तुरन्त ही हुक्म की तामील हुई। फ़ैज़ीने भी और कोई

यह कठोर हुक्म सुनकर सब काँप गये और जैसेके तैसे ही खड़े रह गये। मनमें सोचने लगे कि, "हाय! फ़ैज़ीके भाग्यमें क्या यही बदा था!"

नौकरोंको चुपचाप खड़े हुए देखकर सिराजुद्दौलाने कहा, "यदि फ़ैज़ीकी तरह तुम लोगोंके भाग्यमें भी यही लिखा हुआ न हो तो मेरे आदेशको शीघ्र ही पालन करो।"

यह सुनकर नौकर चौंक पड़े और प्राणोंके भयसे फ़ैज़ीको जाकर पकड़ा।

फ़ैज़ी यद्यपि बहुत देरसे अपने जीवनके लिये निराश हो चुकी थी, किन्तु बन्द घरके भीतर क़ैद होकर भूखे प्यासे मरना होगा यह सोचकर कुछ विचलित हुई। हाथ जोड़ कर विनय की,—"बादशाह! यदि मैंने अनुचित काम किया है तो मेरे प्राण लीजिये,इसके लिये मैं कुछ नहीं कहती हूँ। परन्तु शहज़ादे! दासीकी यही प्रार्थना है कि घरमें बन्द करके अशेष यातना मत दीजिये, और चाहे जिस प्रकार मार डालिये।"

फ़ैज़ीकी कोई बात सिराजुद्दौलाने नहीं मानी वरन् उसकी विनय पर और भी क्रुद्ध होकर गरज कर कहा,—"तूने जैसा अविश्वासका काम किया है, उसके लिये यह दण्ड भी काफ़ी नहीं है। यदि इसके सिवाय और भी कोई दण्ड कठिन होता, तो उसीको देकर मैं अपने चित्तको शान्त करता। मैं तेरी कोई बात सुनना नहीं चाहता हूँ। जब तक मैं अपनी

आँखोंसे तेरी दुर्दशा न देख लूँगा, तब तक मैं किसी तरह स्थिर न हो सकूँगा।

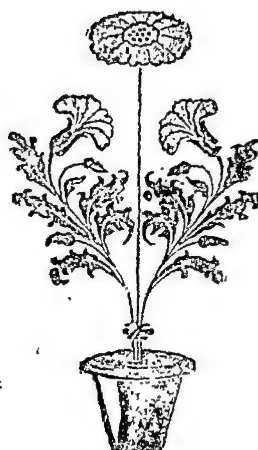
इस समय जो मैं तेरा पापी मुख देख रहा हूँ, उसके लिये भी मैं समझ रहा हूँ कि मैं बड़ा नालायक़ हूँ।"

फ़ैज़ी मरनेके लिये तय्यार थी, किन्तु यातनामें जब कुछ कमी न हुई तब सिराजुद्दौलाका डर किस बातका रहा? वह बड़े गर्वसे बोली, "सिराज! तुम अबलाको पाकर, बिना दोष ही, अनुचित दण्ड देकर मेरे प्राण लेते हो; किन्तु वास्तवमें मैं इसके लिये अपराधिनी नहीं हूँ। वेश्याओंका स्वभाव और धर्म यही है, परन्तु तुम यह मत ख्याल करना कि तुम को इस अनुचित काम करनेका फल नहीं भोगना पड़ेगा। यदि परमेश्वर है, तो जिस तरह तुम मुझको अकारण कालके गालमें भेज रहे हो; तुम भी उसी तरह अकाल-मृत्युको प्राप्त होगे। तब तुमको मालूम होगा कि मानव-जीवनका मूल्य क्या है।"

यह सुनकर सिराज चौंक पड़ा। किन्तु क्रोध और प्रति-हिंसाके कारण उसका हृदय ऐसा कठोर हो गया था, कि फ़ैज़ीके यह कर्कश वाक्य बहुत देर तक उसके हृदयमें न ठहरे: वरन् जलती हुई आग पर घी पड़ गया। उसने और देर न करके नौकरोंसे कहा कि "मैं इसकी और कोई बात सुनना नहीं चाहता। शीघ्र इसको ले जाओ।"

तुरन्त ही हुक्म की तामील हुई। फ़ैज़ीने भी और कोई

बात न कही। वह एक छोटेसे घरमें बन्द की गई, और सब द्वार ईंटोंसे बन्द कर दिये गये। फैजी साँस घुटने और भूख-प्याससे व्याकुल होकर, उस घरमें कितनी आशाओंको लिये हुए अकाल ही में मर गई।



दसवाँ परिच्छेद ।

मङ्गलमय भगवान् जो कुछ करता है, अच्छेके लिये ही करता है। हम लोग अज्ञान हैं, स्वार्थपर हैं, इसलिये बिना समझे और बिना विवेचना किये हुए उसके मङ्गलमय नामको कलङ्क लगाते हैं—उसको निष्ठुर बतलाते हैं। परन्तु उसके सब काम मङ्गलमय हैं; क्योंकि वह तो आप ही मङ्गलमय है।

सिराजुद्दौला बड़ा इन्द्रियपरायण था। सतीके सतीत्व नाश करनेमें उसको कुछ भी सङ्कोच नहीं होता था। इसी कारण उस करुणामय परमेश्वरने यह घटना उपस्थित की। इससे सिराजुद्दौलाकी मतिमें कुछ परिवर्त्तन हुआ। इस घटनासे उसके हृदयमें ऐसी चोट लगी कि स्त्री-जातिसे उसे कुछ कुछ घृणा उत्पन्न हो गई और सती स्त्रियोंके सतीत्वकी रक्षा होने लगी।

यद्यपि सिराजुद्दौलाको स्त्री-जातिसे घृणा होगई थी, किन्तु इस जीवनमें नारी-जातिसे वह बिल्कुल अलग न हो सका। वह लुत्फुन्निसा नामक एक रमणीके सौन्दर्य्य पर मुग्ध होकर,

उसका अनुरक्त हो गया और उसको अपनी पत्नी बनाया। इसके सिवाय और किसी के प्रेममें वह आबद्ध नहीं हुआ।

लुत्फुन्निसा जैसी ही रूपमें अद्वितीय थी, वैसे ही अनुपम गुण भी उसमें थे। वह रूप और गुणमें नारी-कुलकी शिरोमणि थी। क्या पाठकगण उसका हाल जानना चाहते हैं?

शायद आपने मोहनलालका नाम सुना होगा। जिस मोहनलालका नाम इतिहासमें स्वर्णाक्षरोंमें लिखा हुआ है, जिसके अद्भुत वीरत्वकी ख्याति ज़गत्-भरमें प्रसिद्ध है, लुत्फुन्निसा उसी वीर-केशरी मोहनलालकी बहन थी।

मोहनलाल जातिके कायस्थ थे। दरिद्रताके वश दोनों ही भाई बहन नवाब अलीवर्दीके घरमें पले थे। लुत्फुन्निसा साधारण परिचारिकाका काम करती थी और मोहनलाल नवाबकी सेनामें नौकर थे। किन्तु किसीका भाग्य सदैव ही एकसा नहीं रहता। भाग्य-चक्र नियत समय पर चक्कर खाता है। इसी भाग्यचक्रके घूमनेसे, ऐश्वर्यशाली पथका भिखारी हो जाता है, और भिखारी राजा। मोहनलाल और लुत्फुन्निसाका भाग्य फिरा। दोनों ही उन्नतिके शिखर पर पहुँच गये।

लुत्फुन्निसा पहले ही सुन्दरी थी, तिस पर नव-यौवनका आगमन,—रूप मानों फूट निकला।

लुत्फुन्निसाका यह अलौकिक रूप देखकर सिराजुद्दौला मुग्ध हो गया और धीरे धीरे उसका प्रेम उसकी ओर बढ़ता

गया। स्त्री-जातिके ऊपर जो घृणा उसको हो गई थी, वह जाड़ेके आनेसे वर्षाकालके पानीके बादलोंकी तरह, धीरे धीरे आकाशरूपी हृदयसे हटने लगी।

सिराजुद्दौला लुत्फुन्निसाकी तरह तरहसे परीक्षा करने लगा। एक दिन उसने लुत्फुन्निसासे कहला भेजा,—"आज तुमको हमारे साथियोंके साथ आमोद-प्रमोद करना होगा।" उसने कहला भेजा,—"जो नारी पतिके सिवाय और किसी से आमोद-प्रमोद कर सकती है, वह वेश्या है। मैं वेश्या नहीं हूँ। मैं युवराजके अन्न और आश्रयकी पली हुई हूँ, किन्तु इस उपकारसे मैं उनके आनन्दके लिये अपना धर्म नहीं बिगाड़ूँगी।"

इस उत्तर पर सिराजुद्दौला क्रुद्ध नहीं हुआ। वरन् मन ही मन उस पर सन्तुष्ट हुआ।

फिर एक दिन लुत्फुन्निसाकी परीक्षाके लिये, सिराजुद्दौला बहुतसे रुपये और महामूल्य आभूषण इत्यादि लेकर अँधेरी रातमें उसके घरमें घुसा। लुत्फुन्निसा उसको देखकर लज्जा और भयसे घरमें एक ओर खड़ी होकर काँपते हुए गलेसे बोली, "जहाँपनाह! इस अँधेरी रातमें आप किस अभिप्रायसे इस अनाथिनीके घरमें आये हैं? इस समय यदि आपको कोई देखले तो मेरे नाममें कलङ्क लगेगा; इसलिये आप शीघ्र ही इस दुःखिनीके घरसे चले जावें।"

सिराजुद्दौलाने हँसकर कहा, "सुन्दरी! मैं तुम्हारे रूप और नवयौवन पर मुग्ध होकर तुम्हारा प्रेमपात्र बनने को

आया हूँ। तुम्हारे प्रेमके बदलेमें, मैं तुमको यह महामूल्य गहने और रुपये देता हूँ—तुम इनको लेकर मुझको चरितार्थ करो। मुझको तुमसे बड़ा प्रेम होगया है और अब तुम मुझको निराश मत करो।"

यह सुनकर लुत्फुन्निसा काँप गई। उसके सब शरीर से पसीना टपकने लगा। कुछ देर चुपचाप खड़ी रहकर, उसने कहा,—"बादशाह! क्षमा करो। आपके रुपयेके लोभसे, मैं अपना सतीत्व नष्ट नहीं करूँगी। जो स्त्री रुपयेके लोभसे अपना पवित्र सतीत्व-रत्न बिगाड़ती है, उसको मैं घृणाकी दृष्टिसे देखती हूँ। जहाँपनाह! आप मेरी आशा छोड़ दें। यह अभागिनी आपकी आश्रिता और पाली हुई है। आश्रिताके साथ असद् व्यवहार आपको शोभा नहीं देता है। यदि आप ही रक्षक होकर भक्षक बनेंगे, तो रक्षा के लिये किस के पास जाऊँगी? राजा असहाय का सहाय होता है। वही राजा होकर, आप ऐसा अविचारका काम क्यों करते हैं? इस दुःखिनी को सदैवके लिये कलङ्क-सागरमें क्यों डालते हैं? मैं अनूढ़ा हूँ, अनूढ़ाके ऊपर अत्याचार आपको शोभा नहीं देता है। आप मेरी आशा छोड़ दें, मेरी रक्षा करें और दुःखिनीके सिर कलङ्कका टीका न लगावें—अनाथिनी को चिर दुःखसागरमें न डालें।"

सिराज—सुन्दरी! तुम क्यों वृथा आशङ्का करती हो? तुम इन आभूषणों और रुपयों को क्यों नहीं लेती हो?

तुम इनको लेकर मेरी वासना पूरी करो। मैं तुम्हारे रूप पर मुग्ध होगया हूँ। सुन्दरी! और विलम्ब मत करो, मुझ को बहुत कष्ट मत दो। तुम कलङ्क के भयसे डरती क्यों हो? इस अँधेरी रातमें मेरी इच्छा पूरी करने से कौन जानेगा? फिर वृथा बातें करके समय क्यों खो रही हो? आओ, मेरे पास आओ।"

जब कोई उपाय नहीं रहता है, तब रमणी का अन्तिम उपाय रोना है। लुत्फुन्निसा निरुपाय होकर आँखोंमें आँसू भरकर बोली, "बादशाह! यद्यपि मैं आपके अन्न से पली हुई हूँ, यद्यपि मैं मुसल्मान होगई हूँ, किन्तु जब कि मैं हिन्दू-रक्तसे पैदा हुई हूँ तो मुसल्मान होनेपर भी हिन्दुओं की रीति-नीति, आचार-पद्धति कभी नहीं छोड़ सकती हूँ। अन्ना-भावसे मरना है तो मरूँगी, आपके हाथसे प्राण जायँ सो भी मुझे स्वीकार है, किन्तु पतिके सिवाय और किसीके हाथसे नारी के पवित्र सतीत्वरत्न को न जाने दूँगी। जो रमणी धर्मको नहीं मानतीं, पापसे भय नहीं करतीं, रमणीके गौरवधन सतीत्व-रत्नके मर्मको नहीं समझतीं, वही जिसके तिसके हाथमें आत्मसमर्पण कर सकती हैं। मैं प्राण रहते, अधर्म करके और की न हो सकूँगी। जो मुझे धर्मको साक्षी करके पत्नी-स्वरूप ग्रहण करेगा, उसीकी मैं होऊँगी। वही मेरे इस जीवन-यौवनका एक मात्र मालिक होगा। आप मेरी आशा त्याग करें, और शीघ्रही इस दुःखिनीके घरसे निकल

कर मुझको अपवादसे बचावें, परमेश्वर आपका मङ्गल करेगा।"

परीक्षामें लुत्फुन्निसाकी जय हुई। सिराजुद्दौला लुत्फुन्निसाके पवित्र हृदय और दृढ़ सङ्कल्पको देखकर बहुत सुखी और आनन्दित हुआ। मन ही मन उसकी बड़ी प्रशंसा की। लुत्फुन्निसाका हृदय और मन अचल और अटल देखकर, तत्काल ही उसने अपने मन और प्राण उसको समर्पण कर दिये।

और कहा,--"लुत्फुन्निसा! मैं सत्य कहता हूँ कि इस समय मैं तुम्हारी प्रेमाकाङ्क्षाके लिये नहीं आया था, वरन् तुम्हारी परीक्षा करनेको आया था। अब मेरी समझमें आया है, कि तुम क्या चीज़ हो। मैं फ़ैज़ीके व्यवहारसे स्त्री-जातिसे जितनी ही घृणा करता था, तुमने आज अपने उच्च हृदयका परिचय देकर उतना ही मुझको सुखी किया है। मैं यही परीक्षा करने आया था, कि देखूँ रुपयों और आभूषणोंकी अपेक्षा तुम अपने सतीत्वके गौरव और आदरको अधिक समझती हो कि नहीं। तुम उस परीक्षामें पास हो गई। लुत्फुन्निसा! सिराजुद्दौलाकी बेगम बनने योग्य तुम्हीं अकेली हो। आज मैंने तुमको पत्नी-रूपमें ग्रहण किया।

लुत्फुन्निसा अपने इतने बड़े सुख और सौभाग्य पर सहसा विश्वास न कर सकी। कहा,—"बादशाह! मैं आपकी दासी हूँ। दासीका उपहास करना प्रभूको उचित नहीं है।' यह

कहते कहते वह रो उठी और आँखोंका जल कपोलों पर गिरने लगा।

सिराज—लुत्फुन्निसा! मैं तुमसे हँसी नहीं करता हूँ। मैं सत्य कहता हूँ, कि आजसे तुम मेरी प्रधान बेगम हुई। मैंने तुम्हारे रूप और गुण पर मुग्ध होकर तुमको पत्नी-स्वरूप ग्रहण किया। यदि मेरी बात पर तुमको विश्वास न हो, तो मैं परमेश्वरको साक्षी करके कहता हूँ कि तुम मेरी धर्म-पत्नी हुई।

लुत्फुन्निसा और कुछ न कह सकी, मनही मन सोचने लगी,—"क्या सत्य ही मेरा ऐसा बड़ा भाग्य है, कि मैं बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाके नवाबकी बेगम होऊँगी?"

सिराजुद्दौलाने उसे चुपचाप खड़ी देखकर कहा, "लुत्फुन्निसा! क्या सोच रही हो? क्या सिराजके हाथमें आत्म-समर्पण करना नहीं चाहतीं?"

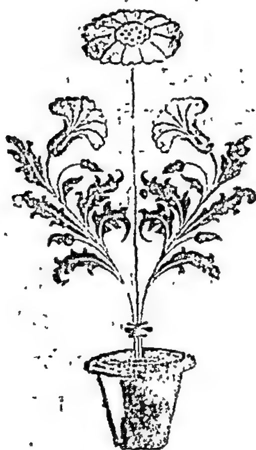
अब लुत्फुन्निसामें बात करनेकी शक्ति आ गई। हँसकर बोली, "आप यदि दया करके यह पद मुझको देंगे, तो क्या दासी कभी असम्मत हो सकती है?" यह कहकर सिराजुद्दौला के हाथमें उसने अपना आत्मसमर्पण कर दिया।

यद्यपि लुत्फुन्निसा आज मुसलमान है, परन्तु मुसल्मानके यहाँ तो वह उत्पन्न नहीं हुई थी। वह परम पवित्र हिन्दू-कुलमें जन्मी थी, हिन्दूके रक्तसे उसका शरीर बना था। वह दरिद्र-ताके वश मुसल्मानके घरमें पली थी। मुसल्मानी नाम भी

रक्खा गया था, किन्तु इस इतनेसे कुलका और रक्ताका गुण क्या लोप हो सकता है ?

लज्जा, दया, भक्ति, श्रद्धा, निष्ठा, भय और पवित्रता इत्यादि गुण,—जिनके लिये हिन्दूनारी संसारमें आदर्श और पूज्य है,—वे गुण लुत्फुन्निसामें क्यों न होने चाहिए ?

ये गुण होनेसे ही लुत्फुन्निसा आज सिराजुद्दौलाकी धर्मपत्नी बनती है।



ग्यारहवाँ परिच्छेद ।

इधर वर्गी लोगोंने गड़बड़ आरम्भ करदी । लोग तरह तरहके दुःखोंमें पड़ गये, प्रायः सभी अपनी अपनी पूँजी खो बैठे । देश भरमें हाहाकार मच गया । दुःख और शोकसे लोग व्याकुल हो उठे । किसीके पास खानेको भी न रहा । महाराष्ट्र लोगोंके दलके दल आते और नगरों और गावोंमें प्रवेश करके जो कुछ पाते लूट ले जाते । जो अतुल ऐश्वर्य-शाली थे, वह भी पथके भिखारी हो गये । किसीके पास कुछ भी न रहा । इतने पर भी, जिनको जन्मभूमिकी माया-ममता न छोड़ सकी, वे ही लोग अपना सब हरण करा कर भी जन्मभूमिमें ही बसे रहे ; नहीं तो गाँव-गाँवमें,नगर-नगरमें यही दिखाई देता था कि बहुतोंने जन्मभूमिकी ममता छोड़ दी और देशान्तरको भाग गये । सब देश, नगर और गाँव खाली हो गये । महाराष्ट्रोंके अत्याचारकी सीमा नहीं थी । फूसके छप्पर जला दिये, खेतोंमें अनाज नहीं छोड़ा ।

यह सम्वाद नवाब अलीवर्दीके पास पहुँचा । इतने बड़े

अदबसे आकर सलाम किया और हाथ जोड़कर बोला,—"देश, नगर और गाँव सब ही मनुष्योंसे रहित हो गये हैं, और श्मशानसे ज्ञात होते हैं।"

नवाब अलीवर्दीने पूछा, "किस कारण देशकी यह हालत हुई है?"

दूतने हाथ जोड़कर कहा,—"बादशाह! बरार प्रदेशसे राघोजी भोंसलाके सेनानायक भास्कर पण्डित और पूनासे बाला जीने आकर नगरोंका यह सत्यानाश कर दिया है। गाँववालों के पास जो कुछ था, सब ही छीन लिया है। सब लोग बड़ा क्लेश भोग रहे हैं। बहुतसे लोग, कुछ भी न रहनेके कारण, देशान्तरको भाग गये हैं।"

यह सुनकर कुछ देर अलीवर्दी चुपचाप रहे, फिर पूछने लगे, "ये लोग कष्ट पहुँचा कर लोगोंका माल ही लेते हैं या लड़ाई भी लड़ते हैं?"

दूत—ज्ञात होता है कि देश, नगर और गाँवों पर अधिकार करनेकी इनकी इच्छा नहीं है। यदि इनका यही उद्देश्य होता तो चोरोंकी तरह भय दिखाकर और अत्याचार करके उनका यथासर्वस्व क्यों लूटते और दरिद्रोंके मुखका ग्रास क्यों छीनते?

अलीवर्दी—तो इनका उद्देश्य क्या है?

यह मैं नहीं जानता कि ये युद्ध अथवा राज्यको चाहते हैं या नहीं; परन्तु यह मैं जानता हूँ कि केवल रुपया चाहते हैं।

यह सुनकर सभाके सब लोगोंने हँसी करके कहा,—"तो ज्ञात होता है कि ये लोग चोर हैं।"

दूत—यदि चोर ही हैं, तो साथमें सेनाका क्या काम है?

अलीवर्दी—उनके साथ कितनी सेना है?

दूत—अनुमानसे दस हज़ार होगी।

अलीवर्दी—दोनों दल क्या आपसमें मिल गये हैं?

दूत—नहीं, दोनों ही अलग अलग गाँव लूटते हैं।

अलीवर्दी—दोनों पक्षोंके सेनानायक कौन कौन हैं?

दूत—मैं पहिले कह चुका हूँ, राघोजी की ओरसे भास्कर पण्डित सेनापति होकर आये हैं। और बालाजी की ओरसे स्वयं वही हैं।

अलीवर्दीने कुछ देर सोचकर सेनाको युद्ध-यात्राके लिये तय्यार होनेका हुक्म दिया,और उसी दिन सेना सहित कटवार की ओर चल दिये। नवाब अलीवर्दी ने सोचा कि यदि मैं सेना लेकर महाराष्ट्र-दल पर चढ़ाई करूँगा, तो वह शायद डरकर भाग जायँ, किन्तु यह उनका भ्रम था; और शीघ्र ही वह भ्रम जाता भी रहा। उन्होंने वहां पहुँच कर देखा, कि उन लोगोंने कटवारका क़िला अपने हाथमें कर लिया है। यह देखकर नवाबने सोचा कि केवल भय दिखानेसे यह लोग क़िला नहीं छोड़ेंगे, युद्ध करना होगा। यह दृढ़ करके, नवाबने अपने शिविर वहां लगवा दिये और महाराष्ट्र लोगोंको लड़ाई की ख़बर भेज दी; किन्तु वह लोग तय्यार नहीं हुए। ऐसा

ज्ञात हुआ कि लड़ना उनको अभीष्ट नहीं था, इसके लिये उन्होंने एक कौशल रचा। अर्थात् कुछ सेना तो उन्होंने अलीवर्दी से लड़नेको भेजी और कुछके कई हिस्से करके नगर लूटनेको भेज दी। और यहां तक नौबत आ गई, कि रातको नवाबके शिविर तकमें से सेनाके कपड़े, हथियार और खाने पीनेकी चीज़ें तक चुरा चुरा कर वे ले जाने लगे।

अलीवर्दी यह देखकर बड़े व्यग्र हुए और एक प्रकारसे मरहट्टोंके सामने हार खा गये। अन्तको नवाबने दिन रात लड़ाईकी ठानी। मरहट्टोंका उद्देश्य तो लड़ना था ही नहीं; उनको तो केवल रुपयेकी इच्छा थी। परन्तु तो भी जो कुछ थोड़ा बहुत नवाबसे लड़ते थे, उससे उनका यही आशय था कि नवाब दुचित्ते बने रहें और उनके लूटनेमें कोई विघ्न न डालने पावें।

लूटनेवालोंने सुयोग पाकर और मौका समझ कर मुर्शिदाबाद जा घेरा और अतुल ऐश्वर्य्यके अधीश्वर, कुवेरके प्रिय पुत्र, फतहचन्द जगत्सेठका खज़ाना लूट लिया। बनियोंके घर, दरिद्रियोंके घर, जो सामने आये सभी लूट लिये। यदि नहीं लूटा तो केवल राजप्रासाद।

अलीवर्दी को और लड़ाई नहीं लड़नी पड़ी। यह सम्वाद पाकर कि मरहट्टा लोग मुर्शिदाबाद लूट रहे हैं, नवाब बड़े चिन्तित हुए और लड़ाई छोड़कर राज्यप्रासाद और परिवार की रक्षाके लिये मुर्शिदाबादको चल दिये।

अलीवर्दी मुर्शिदाबाद आ गये और मरहट्टा लोग भी मुर्शिदाबाद छोड़कर चल दिये। नवाबने राजधानीमें आकर देखा, कि बर्गियोंके कारण मुर्शिदाबाद बिल्कुल ही श्रीभ्रष्ट हो गया है! मानवशून्य है! मनुष्य अपने पासका खोकर पथके भिखारी हो गये हैं! हाहाकार और रोना चिल्लाना मचा हुआ है! जगत्‌सेठके खज़ानेसे प्रायः एक करोड़ रुपया चला गया है!

अलीवर्दी यह देखकर और सुनकर बड़े उद्विग्न हुए। यद्यपि लोगोंको समझा बुझा कर उन्होंने स्थिर किया, किन्तु मन ही मन नवाब बड़े चिन्ताकुल हुए। क्योंकि जब उन्होंने जगत्‌सेठ का खज़ाना ही लूट लिया है, तो राजप्रासादके लूटने में क्या देर लगती है! और जब तक बर्गियोंको परास्त करके भगा न सकें तब तक राज्य और प्रजाका मङ्गल नहीं है। अधिकतर तो यही सम्भावना है, कि राज्यपरिवार पर भी वे अत्याचार न करने लगें।

इस प्रकार बहुत कुछ सोच विचार कर नवाबने स्थिर किया, कि जब तक इन लोगोंको यहां से निकाल न सकें तब तक राज्यपरिवार की रक्षाका भार किसी उपयुक्त आदमीको सौंप दें। क्योंकि यदि परिवारको रक्षित स्थान पर न रक्खेंगे, तो निश्चय ही बर्गियोंके हाथसे अपमानित होना पड़ेगा और आप भी बेखटके उनको दमन न कर सकेंगे।

विचक्षण अलीवर्दी ने मन ही मन यह स्थिर करके, पद्मा और महानन्दा नदियोंके सङ्गम पर गोदागाड़ी नामक स्थानमें,

वास-भवन निर्दिष्ट करके, वहाँ सब परिवारको भेज दिया और अपने दामाद नवाजिश मुहम्मदको उनके रक्षणका भार सौंप दिया ।

इस प्रकारसे परिवारको रक्षित रखनेमें नवाबका एक और भी प्रधान उद्देश्य था, कि यह दोनों नदियाँ बड़ी वेगवान् हैं, इनको पार करके मरहट्टा लोग गोदागाड़ी गाँवमें सहज ही घुसकर अत्याचार नहीं कर सकते थे। यही सोच कर, नवाब ने यह स्थिर जगह रहनेके लिये बनाई थी ।

केवल परिवार ही को रखकर; नवाब निश्चिन्त नहीं हो गये। बर्गियोंकी गड़बड़ और राज्यमें अशान्ति फैली हुई थी और अराजकता हो रही थी। उस सबको निवारण करके, शान्तिकी प्रतिष्ठा और अपनी राजशक्तिकी जयघोषणाके लिये भी उन्होंने पूरा पूरा बन्दोबस्त किया। उन्होंने सिराजुद्दौलाको मुर्शिदाबादकी रक्षाका भार दिया। दीवान राजवल्लभको ढाके का, जैनुद्दीनको पटने का, और सय्यद अहमदको पुर्नियाका भार सौंपा।

किन्तु ऐसे अच्छे बन्दोबस्त होने पर भी बर्गियोंको निवारण न कर सके। मरहट्टा लोग मुसल्मानोंको आँखोंमें धूल डालकर लूटमार करने लगे। लोग व्याकुल हो उठे और बारम्बार नवाबके पास जा जाकर अपने दुःख-दुर्गतिको कथा सुनाने लगे। बहुतोंने अपने अपने वास-स्थान छोड़ दिये और जङ्गलमें जाकर आश्रय लिया।

नवाबने देखा कि मरहट्टोंको दमन करना अथवा निकाल देना सहज नहीं है। वह चोर डाकुओंसे भी अधिक भयानक हैं। डाकू लोग राजदण्डसे डरते हैं, चोर लोगोंका धनरत्न चोरीसे लेते हैं: किन्तु बर्गी तो राजदण्डसे भी नहीं डरते हैं और लोगोंका धन प्रकाशमें छीन लेते हैं और युद्ध माँगने पर युद्ध भी करते हैं। ऐसे अत्याचारियोंको छलबल और कौशलसे जिस प्रकार हो सके वशीभूत करके अथवा समूल नष्ट करके ही निस्तार पा सकते हैं अन्यथा नहीं।

नवाब अलीवर्दी व्याकुल हो गये। दिन-रात पगड़ी उतारने और तलवार छोड़कर विश्राम करने तक का अवसर नहीं था; केवल सेना लिये वह मरहट्टोंको दमन करनेके लिये उनके पीछे पीछे घूमने फिरने लगे।

मरहट्टोंको युद्धमें परास्त करना कठिन समझ कर, अलीवर्दी ने एक अपूर्व्व जाल रचा। अर्थात् बालाजीके पास सन्धि-प्रार्थनाके लिये दूत भेजा।

यथासमय दूत बालाजीके शिविर-द्वार पर पहुँचा। दूत का सम्वाद बालाजीके पास पहुँचा। बालाजीने उसको भीतर आनेको कहा। दूतने बालाजीके पास पहुँच कर बड़े अदबसे सलाम किया। बालाजीने उसको बैठनेकी आज्ञा दी। दूत बैठ गया। बालाजी पूछने लगे, "दूत! तुम कहाँसे आ रहे हो?"

दूतने धीरे धीरे कहा, "मैं नवाब अलीवर्दीके शिविरसे आ रहा हूँ।"

यह सुनकर बालाजीके विस्मयकी सीमा न रही। नवाब उनके प्रबल शत्रु थे, नवाबने दूत भेजा है इसका क्या कारण है? बहुत ही कौतूहलवश होकर बालाजी पूछने लगे, "दूत! नवाबने तुमको मेरे पास किस मतलबसे भेजा है?"

दूत—आपके साथ सन्धि करनेको।

बालाजी बड़े गर्वसे बोले, "तो क्या नवाबको अब हमारे बलका हाल मालूम हुआ? और क्या युद्धमें हमसे पार न पाकर उसने सन्धिका प्रस्ताव किया है? अच्छा अच्छा, मैं उसकी इस सुमति पर खुश हो गया हूँ। मरहट्ठोंके साथ युद्ध करना अथवा उनके दमन करनेकी चेष्टा करना, बुड्ढे नवाबका काम नहीं है। यदि नवाब हमारे साथ सन्धिका प्रस्ताव न करता, तो अन्तमें उसको मुर्शिदाबादकी मसनद तक निश्चय ही छोड़ देनी पड़ती। किन्तु अब मैं समझ गया हूँ कि नवाब बड़ा बुद्धिमान और चतुर है। इसीसे उसने मरहट्टोंसे युद्धमें हारकर, अपनेको हास्यास्पद बनानेसे पहिले ही, सन्धिका प्रस्ताव करके, अपने प्रतापको अछूता बनाये रखनेकी अभिलाषा की है। अच्छा, मैं उसके प्रस्तावसे सम्मत हो गया।

बालाजीके यह गर्वके वाक्य दूत सह न सका। उसने हाथ जोड़कर नम्र वचनोंमें धीरे धीरे कहा, "वीरवर! यदि बातचीत

में इस दासके मुखसे कोई अनुचित बात निकल जाय तो क्षमा कीजियेगा। किन्तु आपने जो कुछ अनुमान किया है, वह आपका भ्रममात्र है। नवाब अलीवर्दी यद्यपि वृद्ध हो गये हैं, तब भी इस समय उनमें इतना बल है कि आप क्षण मात्र भी उनके सामने तलवार लेकर युद्धमें ठहर नहीं सकते। यह मरहट्टोंकी सेना क्या है! नवाब आपकी सेना देखकर विचलित नहीं हुए हैं। विशेषकर दिल्लीश्वर मुहम्मद शाहके रहते भी जो स्वाधीन भावसे बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाका शासन कर रहा है, वह इन मुट्ठी भर मरहट्टोंको देखकर विचलित होगा ऐसा आप न समझना और सामने सामनेके युद्धमें भी वह हटनेवाले नहीं हैं।

बालाजी—अच्छा, जो कुछ तुम कहते हो उसका मैं विश्वास करता हूँ। किन्तु उनकी फौज कितनी है?

दूत—क्षमा कीजिये, इस प्रश्नका उत्तर मैं नहीं दे सकता हूँ। किन्तु यह आपकी भूल है। युद्धमें फौजकी संख्या से क्या हो सकता है? लड़ाईमें तो युद्ध-कौशल ही मुख्य है। जो इस कौशल को नहीं जानता, वह असंख्य सेना और बढ़िया बढ़िया हथियारोंके होने पर भी पराजित ही होता है।

दूतकी इस युक्तिपूर्ण बातको सुनकर बालाजी मन ही मन सन्तुष्ट हुआ और बोला, "परन्तु मैं एक बात पूछता हूँ कि यदि नवाब अलीवर्दी मरहट्टोंकी सेना और बालाजी के पराक्रमसे भयभीत नहीं हुए हैं, तो सन्धिका प्रस्ताव क्यों किया है?"

दूतने यह सुनकर, कुछ मुस्कराकर उत्तर दिया, "इसका और मतलब है।"

बालाजी—वह क्या बात है, तुम जानते हो ?

दूत—हाँ, मैं जानता हूँ।

बालाजी—तुम दूत होकर नवाबका अभिप्राय किस प्रकार जानते हो ? उन्होंने क्या अपने मनका हाल तुमसे कहा है ?

दूत—नहीं, मुझसे कहा नहीं है।

बालाजी—तो तुमने किस तरह जाना ?

दूतने हँसकर कहा—"जो दूतका काम करता है, वह अपने मालिककी अवस्थाको देखकर उसके चित्तका भाव जान लेता है। यदि इस तरह जान न ले, तो दूतका काम किस भाँति करे ?"

बालाजी—तो तुम बतला सकते हो कि नवाबने किस अभिप्रायसे मरहट्टोंके साथ सन्धिका प्रस्ताव किया है ?

दूत—हाँ, बतला सकता हूँ ; किन्तु नवाब बहादुरने सब मरहट्टोंके साथ सन्धिका प्रस्ताव नहीं किया है, केवल आप ही के साथ ऐसा करनेकी इच्छा है।

बालाजी विस्मयके साथ पूछने लगे, "सब मरहट्टोंके साथ सन्धिका प्रस्ताव न करके, केवल मेरे ही साथ ऐसा करनेसे उनका क्या प्रयोजन है ?"

दूत—नवाब-बहादुर डाकुओंकी प्रकृतिवाले भास्कर

पण्डित से भीतर भीतर घृणा करते हैं। जो आदमी युद्ध न करके डाकुओंकी तरह ही लोगोंका यथासर्वस्व लूट लेता है, उसके साथ क्या बङ्गाल-बिहार-उड़ीसाके नवाब कभी मित्रता कर सकते हैं? मरहट्टा होने पर भी भास्कर पण्डित डाकू है। वीर-हृदय अलीवर्दी डाकूके साथ मित्रता नहीं कर सकते हैं। आप योद्धा और तेजस्वी पुरुष हैं; इसी कारण नवाब बहादुर केवल आप ही के साथ सन्धि-सूत्रमें आबद्ध होनेकी अभिलाषा कर रहे हैं। उनका गूढ़ अभिप्राय यह है, कि आप सरीखे योग्य योद्धाकी सहायतासे दिल्लीका सिंहासन अधिकारमें लावें।

दूतकी चातुरीके आगे बालाजी और कुछ न कह सके। बोले, "सन्धिकी शर्तें कैसी हैं?"

दूत—यदि आप नवाबकी सहायता करेंगे और उस सहायतासे नवाब बहादुर मुहम्मद शाहको परास्त करके दिल्लीका सिंहासन प्राप्त कर लेंगे, तो आपको यही मुर्शिदाबादकी मसनद मिलेगी और आप नवाब होंगे।

बालाजी—मैं इस प्रस्तावसे सम्मत नहीं हूँ। मुसल्मान दिल्लीके सिंहासन पर बैठे और मैं मरहट्टा मुसल्मानके आधीन होकर रहूँगा, यह कभी नहीं हो सकता।

दूत—तो आप किस तरह पर सन्धि करनेको उद्यत होंगे?

बालाजी—मैं रुपया चाहता हूँ। यदि अलीवर्दी मेरे

साथ सन्धि करनेको प्रार्थी हुआ है, तो मैं रुपयेके सिवाय और किसी बात पर सम्मत नहीं हूँ।

दूत मनही मन हँसा और बोला, "आप कितना रुपया चाहते हैं?"

बालाजी—एक करोड़ रुपया।

दूत—इतना मिलने पर आप इस देशसे चले जावेंगे?

बालाजी—हाँ, और क्या।

दूत—फिर कभी तो इधर आनेकी इच्छा न होगी?

बालाजी—यदि नवाबको फिर कभी सहायताकी आवश्यकता हो तो आ सकता हूँ; नहीं तो नहीं।

दूत—तो फिर सन्धि होना स्थिर हो गया। आप अपना इच्छित रुपया लेकर सन्धि-पत्र पर हस्ताक्षर कर देंगे। अब मैं विदा होता हूँ। यह कहकर दूत चला गया।



बारहवाँ परिच्छेद।

बालाजी के साथ सन्धिका प्रस्ताव तो एक तरह पर ठीक हो ही गया, परन्तु रुपया कहाँ है, जो दिया जावे? अलीवर्दी ने देखा कि खज़ानेमें एक करोड़ रुपया नहीं है, यह देखकर वह अपार चिन्तासागरमें डूब गये। यदि बालाजी का चाहा हुआ रुपया नहीं देंगे, तो मरहट्टोंके अत्याचारसे राज्यकी दुर्गति होगी, लोग भूखों मरेंगे और देश छोड़कर भाग जावेंगे। प्रजासे ही राजाका राज्य है, प्रजाके सुखमें राजाका सुख है, प्रजाका धन है सो राजाका धन है, प्रजाकी शान्ति राजाकी शान्ति है, और प्रजा ही के मङ्गलमें राजाका मङ्गल है। जब राजा और प्रजामें ऐसा घनिष्ट सम्बन्ध है, तब यदि प्रजा अत्याचारसे देश छोड़े, अनाहारसे भूखों मरे, तो राजाके राज्य का क्या होगा और वह राजा किसको लेकर राज्य करेगा?

नवाब अलीवर्दी मन ही मन इसी तरहकी आलोचना करते करते बड़े व्याकुल हो गये। वह दिन-रात अस्थिर चित्तसे रुपयेकी चिन्तामें रहने लगे। रुपयेके अतिरिक्त बालाजी और किसी बातसे सन्धि करने पर सम्मत नहीं होगा, और जब तक बालाजी वशमें न होगा, तब तक बर्गियोंका उपद्रव बन्द न होगा,

प्रजा भी रक्षा न पावेगी, राज्य भी न रहेगा, यह सब बातें नवाबने अच्छी तरह समझ ली थीं। इसलिये वह रुपयेके लिये बहुत व्याकुल हुए। जैसे राजा हरिश्चन्द्रको विश्वामित्रका ऋण चुकानेके लिये सब संसार अन्धकारमय दिखलाई देता था, उसी तरह आज अलीवर्दी को भी ज्ञात हुआ।

जब नवाबके बहुत सोचने विचारने पर भी रुपया जमा करनेकी कोई तरकीब समझमें न आई, तो सिराजुद्दौला को बुला भेजा।

नाना के बुलाने पर सिराजुद्दौला शीघ्र ही हीरा झीलसे राजभवनमें आ पहुँचा। नवाब उसके आनेकी राह देख ही रहे थे। दौहित्र को बड़े आदरसे लिया और मन्त्रणागृहमें ले जाकर अपने पास बैठाया। कुशल पूछनेके बाद कहा, "सिराज! बर्गियोंके मारे तो राज्य उथल-पुथल हुआ जाता है। प्रजा बड़े कष्टमें है। कोई तो देश छोड़कर देशान्तर को चले गये हैं, कोई जङ्गलमें आश्रय लिये हुए हैं। प्रजासे ही राजाका राज्य है। राजा यदि प्रजाके धन-प्राण और कुल-मानकी रक्षा न करे और प्रजाके दुःखसे दुःखी न हो, उसके दुःखमोचनका यत्न न करे, तो उस राजाका राज्य नहीं रह सकता। इस बर्गियोंके हङ्गामेको यदि निवारण न कर सके, तो शीघ्र ही यह राज श्मशान हो जावेगा। सिराज! इस समय क्या उपाय है? किस भाँति राज्यकी रक्षा करनी चाहिये?"

सिराज—नानाजी ! मरहट्टोंके दमन करनेके लिये किस बातकी चिन्ता है ? युद्ध करनेमें वे पराजित हो जावेंगे । आप की तलवारके आगे मरहट्टों की क्या ताक़त है कि युद्ध कर सकें ।

यह सुनकर नवाब कुछ कुछ विषादकी हँसी हँसकर बोले, "सिराज़ ! तलवार की सहायतासे यदि मैं मरहट्टोंको दमन कर सकता अथवा राज्यसे निकाल सकता, तो फिर सोच किस बातका था ? यदि ऐसा होता, तो वह लोग कभीके इस देश को छोड़कर भाग गये होते ; किन्तु सिराज ! युद्ध करके उनको हराना अथवा निकाल देना सहज नहीं है।"

सिराज—तो क्या मरहट्टे ऐसे योद्धा हैं, कि उनका पराजय करना आपके लिये असम्भव है ?

नवाब—हाँ सिराज ! एक प्रकारसे मैं उनके सामने परास्त ही हो चुका हूँ। यदि वह आमने-सामने युद्ध करते तो कोई चिन्ता नहीं थी ; परन्तु उनका अभिप्राय तो देशको लूटना है । वे जो कुछ लड़ते हैं, सो लूटनेके सुभीतेके लिये । वास्तवमें वह युद्ध करना नहीं चाहते हैं ।

सिराज—क्या आपने क़ायदेके साथ उनसे युद्ध किया था ?

अलीवर्दी—मैंने उन पर आक्रमण किया था, किन्तु उन्होंने कुछ थोड़ी सी सेना मेरे साथ लड़नेको छोड़कर, शेषको लूटमार के लिये रहने दिया। वे बड़े चालाक हैं। यदि उनको वश में न कर सका, तो राज्य-रक्षाकी आशा दुराशामात्र है

विशेषकर बालाजी बड़ा चतुर है। उसके पास सेना भी अधिक है। पहले वह वशमें हो जावे; फिर भास्कर पण्डित को तो सहज ही में हरा दूँगा।

सिराज—जब बालाजी ऐसा दुर्दमनीय है, तो आप उसको किस प्रकार वशमें करेंगे?

अलीवर्दी ने हँसकर कहा, "वत्स! वह उपाय मैंने सोच लिया है। बालाजी मेरे साथ सन्धि करनेको राज़ी है।"

सिराज—यदि बालाजी सन्धि करना चाहता है, तो फिर आप देर क्यों कर रहे हैं? शत्रु जितनी शीघ्रतासे सन्धि-सूत्र में बाँधा जा सके, उतना ही अच्छा है।

अलीवर्दी—यह मैं खूब समझता हूँ, किन्तु एक विशेष अभावके कारण सन्धि अभी तक नहीं हो सकी है।

सिराजुद्दौला ने बड़े विस्मयसे पूछा, "नानाजी! किस बात का अभाव है?"

अलीवर्दी—रुपयेके सिवाय और किसी बात पर बालाजी राज़ी नहीं होता है।

सिराजुद्दौला ने हँसकर कहा, "यदि शत्रु राज्य न लेकर केवल रुपया ही लेकर सन्धि करने पर राज़ी है, तो मेरी समझ में यह बहुत ही अच्छी बात है।"

अलीवर्दी कुछ अप्रसन्नतासे बोले, "बात तो ठीक है सिराज! किन्तु इतना रुपया कहाँ है?"

सिराज—क्या खज़ानेमें इतना रुपया नहीं है, कि जिसको देकर बालाजी के साथ सन्धि हो जावे?

अलीवर्दी—जितना है, उतनेसे काम नहीं चल सकता।

सिराज—बालाजी को कितना देना होगा?

अलीवर्दी—एक करोड़ रुपया। इतने रुपयेके न होनेसे, बालाजी के साथ सन्धिका प्रस्ताव हो जाने पर भी, सन्धि नहीं कर सकते हैं। परन्तु उसके साथ सन्धि न करनेसे राज्यकी रक्षा करना बड़ा कठिन है। सिराज! तुमको एक काम करना होगा।

सिराज—कौन काम? आज्ञा कीजिये।

अलीवर्दी बड़े कातर भावसे बोले, "सिराज! तुमसे मैं और कुछ नहीं कहता हूँ, यदि तुम किसी उपायसे मुझको ३० लाख रुपया एकट्ठा करके दे सको, तो मैं बालाजी के साथ सन्धि करके राज्यकी रक्षा करूँ; नहीं तो बर्गियोंके कारण राज्यका सत्यानाश हो जावेगा।"

सिराजुद्दौलाने हँसकर कहा, "नानाजी! आप इसके लिये इतनी चिन्ता क्यों करते हैं? आप अपने आधीन राजा, महाराजा और ज़मींदार लोगोंसे इतना रुपया बड़ी आसानीसे ले सकते हैं।"

अलीवर्दी—वह लोग देनेको राज़ी क्यों होंगे? और विशेष करके यदि इस समय उनको रुपयेके लिये तङ्ग किया जावे, तो वह मरहट्टोंके साथ मिल भी सकते हैं। सिराज! राज्य करना

बड़ा कठिन है। बात बातमें इसके शत्रु हैं; पद पद पर विपद है; और सदा सर्वदा ही इसमें आशङ्का है। बहुत सोच समझ कर काम करनेसे, तीव्र दृष्टि रखनेसे और लोगोंके हृदयका हाल समझ कर काम करनेसे राजाका राज्य रचा पाता है। सिराज! इस समय मैं राजा महाराजाओंसे रुपया लेना नहीं चाहता हूँ। क्या मालूम कि वह दुःखी होकर मरहट्टोंके पचमें हो जावें।

सिराज—नानाजी! आप उन लोगोंसे रुपया सदैवके लिये तो लेते ही नहीं हैं, आप तो ऋण लेते हैं। इसके लिये वह क्यों असन्तुष्ट होंगे? आप उनको ऋण लेनेके लिये पत्र लिखिये, वह आपको निश्चय ही मिल जावेगा।

यह सलाह अलीवर्दी को पसन्द आई। उन्होंने मानों मँझधारमें किनारा पाया। बड़े आनन्दसे सिराजकी ठोड़ी पकड़ कर कहा, "सिराज! आज तुम्हारे बुद्धिबल से मैं ऐसे दुष्कर कार्य्यमें सफल होता हुआ जान पड़ता हूँ। तुम्हारी बुद्धि और सलाहको धन्य है। अब मैंने समझ लिया कि बर्गियोंके हङ्गामेसे राज्य रचा पा जावेगा।

सिराज—नानाजी! आपने रुपये देकर अकेले बालाजी के साथ सन्धि करनेको कहा है, परन्तु भास्कर पण्डितके विषयमें क्या स्थिर किया है?

अलीवर्दी—बालाजी के साथ सन्धि हो जावे, फिर मैं भास्कर पण्डितसे नहीं डरता हूँ। सिराज! तुम निश्चय

जानना कि जिस दिन बालाजी बङ्गालसे अपने देशको जावेगा, उसके दूसरे ही दिन बर्गियोंका हङ्गामा शेष हो जावेगा।

सिराज—भास्कर पण्डित और बालाजी दोनों ही भिन्न देशोंके हैं, फिर बालाजी के साथ सन्धि करने पर, भास्कर पण्डित उसमें किस प्रकार आबद्ध होगा? बालाजी तो सन्धि होने पर स्वदेशको चला जावेगा; किन्तु भास्कर पण्डितके साथ तो कोई बात नहीं हुई है; वह अत्याचार उपद्रव करनेसे क्यों रुकेगा?

अलीवर्दीने कुछ हँसकर कहा, "सिराज! राजा, महाराज़ा, बादशाह और सम्राट सब ही के लिये एक कौशल ही सबसे अधिक बल है। असंख्य सेना होने पर भी जो जय नहीं पाता, जिसके पास यथोचित रुपया नहीं है, वह कौशल ही से जय लाभ करता है। वत्स सिराज! इस समय मैं वह कौशल प्रकाश करना नहीं चाहता, क्या मालूम कि अन्तमें वह खुल जाय। कौशलसे जब कोई काम करना हो, तो उसके होनेसे पहले उस कौशलको कहना न चाहिये। जिस उपायसे मैं बर्गियोंके हङ्गामेको दमन करके राज्य-रक्षा करूँगा, वह शीघ्र ही तुमको मालूम हो जावेगा।"

सिराजने फिर और कोई बात नहीं पूछी और अपने नाना से विदा होकर हीरा झीलको चला आया। अलीवर्दी ने भी ऋणपत्र लिखकर, राजा, महाराज और ज़मींदारोंके पास भिजवा दिये।

तेरहवाँ परिच्छेद ।

स न्धि हो गई । बालाजी ने अलीवर्दी के राज्य में और किसी प्रकारका अत्याचार-उपद्रव अथवा युद्ध-विग्रह इत्यादि नहीं किया और बङ्गालसे सेना लेकर पूना जा पहुँचा ।

एक करोड़ रुपया बालाजी ने लिया और सन्धि कर ली, यह बात नवाबने चारों ओर प्रकाशित कर दी। और यह भी घोषणा करदी, कि यदि भास्कर पण्डित भी इसी तरह रुपया लेकर सन्धि करने को सम्मत हो, तो उसके साथ भी सन्धि करने को नवाब प्रस्तुत हैं ।

यह बात चारों ओर फैलगई । भास्कर पण्डित ने सुना कि नवाब अलीवर्दी रुपया देकर सन्धि करने को तय्यार हैं, तो वह सोचने लगा कि,—"इस समय क्या करना चाहिये ? इसी तरह देशको लूटना चाहिये या रुपया लेकर अलीवर्दी से सन्धि कर लेनी चाहिये ?"

भास्कर पण्डित बड़ा चिन्ताकुल हुआ । कौन सा पथ अवलम्बन करना अच्छा है, यह बहुत सोचने पर भी तय न कर सका । अन्तमें, उसने अपने विश्वासी प्रभुभक्त सहकारी

देववर को बुलाकर सलाह की और कहा, "देववर! अलीवर्दी ने जो घोषणा की है वह तो तुमको मालूम ही होगी?"

देव—हाँ, प्रभो! मालूम है।

भास्कर—देववर! हमको अब क्या करना उचित है? इसी तरह देशको लूटना अच्छा है, या रुपया लेकर बालाजी की तरह नवाब से सन्धि करना ठीक है? मैंने बहुत सोचनेपर भी कोई बात स्थिर नहीं कर पाई है, तुम इन दोनों में से कौनसी युक्ति पसन्द करते हो?

देववर ने हाथ जोड़कर कहा, "प्रभो! इस सम्बन्धमें जो आप मुझसे परामर्श लेते हैं, इसके लिये मैं अपने को सौभाग्यशाली समझता हूँ; किन्तु मैं तो आपका एक लघु सेवक हूँ, मैं आपको क्या राय दे सकता हूँ? और विशेष करके सन्धिके प्रस्तावमें,—इस काममें मङ्गल है कि अमङ्गल है, लाभ है कि हानि है, इन बातोंको बारीक निगाह से देखकर स्थिर करना, मेरे से साधारण सिपाही के लिये बड़ा ही कठिन है। प्रभो! मैं सत्य कहता हूँ, कि इस सम्बन्ध में अपना मत प्रदान करनेमें मुझको बहुत डर मालूम होता है।"

भास्कर—तुम्हारा इस प्रकार डरनेका क्या कारण है?

देव—क्या मालूम कि परिणाम में कोई ख़राबी हो जावे। भास्कर पण्डित कुछ हँसकर बोला, "देववर! इसके लिये तुम कुछ मत डरो। तुम सामान्य सैनिक हो, पर तुम्हारी

बुद्धि, कौशल और युक्ति, असाधारण और बड़े कामकी होती है। तुम्हारी सलाह और विवेचना को अच्छी समझ कर हो, आज मैं तुमसे परामर्श लेता हूँ। तुम निर्भय होकर कहो कि इस समय हमको क्या करना चाहिये?"

देव—प्रभो! जब कि आप बारम्बार मुझसे पूछ रहे हैं, तब मेरी समझमें नवाब अलीवर्दी से सन्धि करने ही में मङ्गल है।

भास्कर— नवाब से सन्धि करने ही में हमारा मङ्गल है, यह तुमने क्या समझ कर कहा?

यह सुनते ही देववर डरगया और सूखे हुए मुँह से हाथ जोड़कर कहा, "प्रभो! यदि यह बात मैंने ठीक नहीं कही है, तो क्षमा कीजिये। मैं तो पहले ही विनय कर चुका हूँ, कि मैं आपका सामान्य दास हूँ। मेरी विवेचना और युक्ति कभी आपको पसन्द न आवेगी। केवल आपके हुक्म से अपनी क्षुद्र बुद्धि और विवेचना से जो कुछ मङ्गल-जनक ज्ञात हुआ वही कहा है। प्रभो! इसमें यदि अपराध हुआ हो, तो क्षमा कीजिये।" यह कह कर देववर भास्कर पण्डितके चरणों में गिरने को उद्यत होगया।

भास्कर पण्डित ने उसको रोककर हँसते हुए कहा, "देववर! क्या करते हो? शान्त होओ। तुम क्यों वृथा शङ्का करते हो? मैं तुम पर अप्रसन्न नहीं हुआ हूँ, वरन् मैं इतना सन्तुष्ट हुआ हूँ जिसका पार नहीं है। तुम्हारी

सलाह को मैंने बड़े आदरसे ग्रहण किया है और अलीवर्दी के साथ सन्धि करने में ही हमारा मङ्गल है और सुभीता है, इसको मैंने बहुत अच्छी तरह समझ लिया है। परन्तु तुम से पूछने का कारण यही है, कि जिस बात को मैं किसी प्रकार स्थिर न कर सका, उसको तुमने एक क्षणमें किस प्रकार और किस तर्क-बलसे स्थिर कर लिया। इसीके जानने को मैं इच्छा करता हूँ।"

यह सुनकर देववर का भय कुछ दूर हुआ। घुटनों के बल बैठ कर और हाथ जोड़ कर बोला, "प्रभो! मैंने यह सोचा, कि बालाजी की सेना की संख्या हमारीसे अधिक होने पर भी, जब वह एक करोड़ रुपया लेकर स्वदेश को लौट गया, तो हमको अपनी छोटीसी सेना से नवाब से युद्ध करनेमें सुभीता नहीं। विशेषकर, उस समय हमलोगों के दो दल थे। एक दूसरे से सहायता पाता था। नवाब एक पक्षको दमन करने जाता, उसी समय दूसरा दल देश लूटने में लगजाता। किन्तु हमारा अब एक ही दल रहगया है, हमारे उद्देश्य-साधन में नवाब बाधा देकर युद्ध करेगा। उस समय हमारे स्वार्थ-साधन में कठिनता पड़ेगी। नवाब के साथ युद्ध, विवाद, सैन्य-संहार और रक्तपात न करके बिना प्रयास ही हमारा मतलब सिद्ध होता है, तो उसके साथ वृथा लड़ाई झगड़ा करना क्या आवश्यक है?

भास्कर पण्डित यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ। बड़े

आदर से देववरका हाथ पकड़कर अपने पास बैठा लिया और कहा, "देववर! तुम्हारी विलक्षण विचार-शक्ति के कारण मुझको तुमसे बड़ी प्रीति होगई है। तुमने जिस कारण से नवाब के साथ सन्धि करनेमें मेरी भलाई बतलाई है वह बहुत ही अच्छी बात है। अब मैं दुष्कार कार्य्य पड़ने पर तुमसे ही राय लिया करूँगा।"

देव—दासके प्रति आपका यथेष्ट स्नेह और अनुग्रह है; तभी दया करके आप ऐसी बात कहते हैं।

भास्कर—नहीं देववर! तुम यथार्थ मन्त्री हो! मैं अब की बार स्वदेश जाकर, राघोजी से तुम्हारी पदोन्नति की बाबत कहूँगा।

देव—यह आपकी कृपा है।

कुछ देर दोनों चुप-चाप रहे। अन्तमें भास्कर पण्डित ने कहा, "देखो देववर! जब कि अलीवर्दी के साथ सन्धि करना ही निश्चय हुआ है, तो कुछ अधिक रुपये की बाबत क्यों न कहें?"

देव—हाँ, मालूम होता है कि नवाब इस पर भी सम्मत होजावेगा; क्योंकि बङ्गाल की भूमि से सुवर्ण उत्पन्न होता है।

भास्कर—तुम सच कहते हो। इसी कारण, इसके ऊपर सब ही लोगों की चाह भरी निगाह रहा करती है। इसको तो कामधेनु की तरह दुहना ही चाहिये। देववर!



नवाब अलीवर्दी खाँ।

NARSINGH PRESS CALCUTTA.

चौदहवाँ परिच्छेद।

यह सम्बाद पाकर अलीवर्दी मन ही मन हँसे। वह भी डेढ़ करोड़ रुपये देकर भास्कर पण्डितसे सन्धि करनेपर राज़ी होगये। सन्धि का दिन भी स्थिर हो गया। किन्तु नवाबने यह बात प्रकाशित करदी कि वह बीमार हैं और मरहट्टा-सेनापति भास्कर पण्डित सन्धिके दिन अधिक सेना न लावे। हकीमोंने उनको चुपचाप रहनेको कहा है। अधिक गड़बड़ होने से बीमारी बढ़जाने का डर है। और जिस तरह की बीमारी उनको है, ऐसी बीमारी की हालतमें विदेशमें रहना उनके लिये कभी अच्छा नहीं है। इसी कारण सन्धि करने के लिये वह और भी व्यग्र हो रहे हैं। सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर होते ही, वह मुर्शिदाबाद को चले जावेंगे। जब तक सन्धि नहीं होती है और जब तक मरहट्टा-सेनापति भास्कर पण्डित उनके शिविरमें नहीं आता है तब तक तो विवश होकर उनको इसी हालतमें रहना होगा। एक तो वह बीमारी के कारण क्लेशमें हैं और तिसपर युद्ध-विग्रह की गड़बड़ के मारे एक दम अवसन्न हो गये हैं। सन्धि होते ही

वह राजधानी को चले जाना चाहते हैं। यदि मरहटा वीर द्विविधा न करके केवल अपने शरीर-रक्षकों को साथ लेकर उनके शिविरमें आवे, तो उसके सौजन्य पर नवाब चिरवाधित होंगे।

इस बात पर मरहटा वीर भास्करने कोई आनाकानी नहीं की। सरल विश्वास पर निर्भर होकर, निर्दिष्ट दिन वह अलीवर्दी के शिविरमें आगया। साथमें थोड़ेसे शरीर-रक्षक सिपाही थे।

मानकरा के बड़े मैदान में नवाब अलीवर्दीका शिविर था। नवाबके शिविरके चारों ओर बड़े बड़े प्रधान मन्त्रियों और सेनापतियों के शिविर थे, उनके बाद नौकरों और सिपाहियों इत्यादि के थे। इन सब शिविरोंने नवाब के शिविरको इतना घेर रक्खा था, कि शत्रुपक्ष सहसा उनके ऊपर किसी तरह आक्रमण न कर सकता था।

भास्कर पण्डितने नवाब के शिविरके सामने पहुँचकर देखा, कि मुसल्मान-सेना रणसाज से सज्जित है। नङ्गी तलवारें हाथोंमें लिये हुए श्रेणीबद्ध दलके दल खड़े हैं। किसी के मुखसे एक अक्षर तक नहीं निकलता है, सब चुपचाप मानों काठ-पुतले से खड़े हैं।

भास्कर पण्डितको आता देखकर, नवाब की सेनाने बड़े अदब से तलवार झुकाकर सलाम किया। सेनापति नवाबकी सेनाकी अभिवादन-पद्धतिको देखकर मन ही मन बड़ा सन्तुष्ट हुआ।

इसी समय नवाब के मन्त्री राजा जानकीराम ने आकर भास्कर पण्डित की अभ्यर्थना की और बड़े आदर से उसको नवाब-शिविर के भीतर ले गये।

भास्कर पण्डितने शिविरके भीतर जाकर जो कुछ देखा उसने उसके विस्मय की सीमा न रही। उसने देखा कि बड़े भारी पटमण्डप की दीवारों पर नाना प्रकार की कारीगरी की हुई है। पटमण्डपमें बहुत से कमरे हैं और सभी में साज-सज्जा की तुलना नहीं है। सोने चाँदी और रत्नमणियों के सामान चारों ओर चकाचौंध कर रहे हैं। तिसके ऊपर मखमल कामखाब इत्यादि उत्तम उत्तम महामूल्य कपड़ोंके बिछौने इत्र गुलाबसे महक रहे हैं। भास्कर पण्डित यह देखते देखते मुग्ध हो गया।

राजा जानकीराम जिस कक्षमें उसको लेगये,वह सभागृह था। और दिनों की अपेक्षा, आज सभागृह की बनावट कुछ अधिक थी। इस कारण मरहट्टा-सेनापति जिस ओर निगाह उठाता उसी ओर देखता रहजाता।

राजा जानकीरामने यथोचित आदरके साथ भास्कर पण्डित को एक चाँदीके सिंहासन पर बैठाया। तब भास्कर पण्डित बोला, "आज वही सन्धिका दिन है। आपकी घोषणाके अनुसार मैं उसी सन्धि-सूत्रमें आबद्ध होने के लिये आया हूँ।"

राजा जानकीरामने शिष्टाचार दिखलाकर बड़ी मीठी बोलीमें कहा, "आपके कहने के अनुसार हमलोग भी तय्यार

हैं। सन्धिके लिये जो रुपया देने की बात थी, वह यह देखिये, सब रक्खा हुआ है।"

भास्कर पण्डितने देखा, कि सचमुच ही उसके पास कई एक तश्तरियोंमें ढेर के ढेर रुपये रक्खे हुए हैं। यह देखकर उसके मनमें जो थोड़ा बहुत सन्देह था वह भी जाता रहा। उसने पुलकित होकर कहा, "आपके यहां सन्धि की तो मैं सब तय्यारी देखता हूँ, किन्तु नवाब बहादुर क्यों नहीं आये हैं?"

जानकी—मैं तो पहले ही निवेदन कर चुका हूँ कि नवाब बहादुर बीमार हैं।

भास्कर—क्या सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर करने के समय भी वह नहीं आवेंगे?

जानकी—उनके उपस्थित होने की आवश्यकता ही क्या है? हस्ताक्षर तो आप ही करेंगे।

भास्कर—हस्ताक्षर तो मैं ही करूँगा, यह सत्य है; परन्तु वह भी यदि इस समय होते तो काम बड़ी अच्छी तरह होता।

जानकी—मैंने यह बात नवाब बहादुरसे कही थी; किन्तु उन्होंने कहा, "मैं बीमार हूँ और मैं वहाँ रहकर क्या करूँगा? बालाजीके साथ जिस नियम से सन्धि हुई है, उसी नियम से आपके साथ भी हो जावेगी।"

भास्कर—खैर, जो कुछ हो, किन्तु जब कि सदैव की

शत्रुता छूटती है और जब कि मैं उनके शिविर में आया हूँ, तो क्या उनके साथ एक बार साक्षात् भी न होगा?

यह सुनकर राजा जानकीराम हँस कर बोले, "इसका उत्तर मैं नहीं दे सकता; परन्तु मैं एक बार फिर जाकर आपका अभिप्राय नवाब बहादुर से निवेदन करता हूँ। देखूँ, वह क्या कहते हैं।"

भास्कर—मेरा नाम लेकर आप कहियेगा कि भास्कर पण्डितको एक बार आपसे मिलने की बड़ी अभिलाषा है।

जानकी—न मिलने का और कोई विशेष कारण नहीं है, केवल इसी बात का भय है कि बातचीत करने से बीमारी कुछ बढ़ न जावे।

भास्कर—नवाब बहादुर की शासन व्यवस्था बड़ी ही सुन्दर है! आपके पास इतने आदमी और इतनी सेना है, तो भी यह मालूम होता है कि यह स्थान मानों जनशून्य है।

जानकी—सब ही राजशक्ति के वशीभूत हैं।

भास्कर—मैं इस राजशक्ति ही की तो प्रशंसा करता हूँ। आप एक बार नवाब बहादुर से मेरे साथ मिलने की बात कहिये, मैं उनसे मिलकर और भी सुखी हूँगा।

राजा जानकीराम यह सुनकर चल दिये और कुछ देर बाद लौट कर कहा, "यद्यपि नवाब बहादुर आपसे मिलने को तय्यार हैं, किन्तु वह कोई बातचीत न कर सकेंगे, जो कुछ कहेंगे इशारे में ही कहेंगे।

इसी समय कई एक नौकर एक पलँग चांदीका उठा लाये, जिसके ऊपर कमख्वाबके बिछौने पर नवाब लेटे हुए थे। नवाबने बड़े कष्ट से हाथ बढ़ाकर भास्कर पण्डित की अभ्यर्थना की।

भास्कर पण्डित नवाब की अभ्यर्थना और शिष्टाचार से बहुत सन्तुष्ट होकर बोला, "मैं आपसे मिलकर बड़ा प्रसन्न हुआ हूँ। परन्तु आप बीमार हैं, इसलिये कोई बातचीत नहीं हो सकती। न मालुम फिर कब आपसे मुलाक़ात होगी।"

इसके उत्तरमें नवाबने हाथ के इशारे से अपना ललाट दिखलाया। इसके बाद जानकीरामको इशारा किया, वह इशारा सिवाय उनके और कोई न समझा।

भास्कर—नवाब क्या कहते हैं?

जानकी—नवाब पूछते हैं कि सन्धिका क्या हुआ? वास्तव में उस इशारे का मतलब भास्कर पण्डित कुछ न समझा और जानकीराम की बात पर सरल विश्वास करके कहा, "नवाब बहादुर! जब कि आपके साथ में सन्धि करने पर राज़ी हूँ, और आपके शिविरमें आया हुआ हूँ तब और कुछ नहीं हो सकता है। केवल एक बार आपसे मिलने की इच्छा थी।"

नवाबने फिर जानकीराम की ओर इशारा किया। उसका मतलब जानकीराम समझ गये और कहा, "नवाब बहादुर सन्धिके लिये बड़े ही व्यग्र हो गये हैं और कहते हैं कि अब

किस बात की देर है? शुभ कार्य्य जितना ही शीघ्र हो उतना ही अच्छा है।"

भास्कर—यदि नवाब बहादुर सन्धिके लिये इतने व्यग्र हैं, तो सन्धि-पत्र लिखना चाहिये।

जानकी—पहले अपने कहे हुए रुपये ले लीजिये; क्योंकि अर्थ ही अनर्थ की जड़ है।

भास्कर पण्डितने हँसकर कहा, "आप जो कुछ कहते हैं, सो सब सत्य है। जहाँ अर्थ है वहीं अनर्थ भी है, परन्तु ऐसा नहीं मालुम होता कि अर्थके लिये नवाब बहादुरके साथ कोई अनर्थ होवे। क्योंकि आप लोगों की भद्रता और सौजन्यतासे मुझे आप लोगों से बड़ी प्रीति हो गई है।" यह कह कर ज्योंही वह रुपया लेने को झुका, त्योंही नवाबके इशारे से पास बैठे हुए मुस्तफ़ाख़ाँ ने एक छलाँग मारकर भास्कर पण्डितको पकड़ लिया। इस आकस्मिक घटनासे भास्कर पण्डितने इतना भी अवकाश न पाया कि कमरसे बँधी हुई तलवार भी खींच सके, केवल इतना कहा, "नवाब! क्या यही तुमारा धर्म है? क्या सरल विश्वासका यही परिणाम है?" परन्तु इतनी बात कहते कहते ऊपर से तलवारके आघातसे उसका शरीर दो खण्ड होगया, लोहूका सोता बहने लगा और वह अमूल्य सिंहासन रक्तात्क्लिन्न हो गया।

काम सिद्ध हो गया। नवाब की बीमारी भी जाती रही। वह शय्या पर से कूदकर उठ बैठे और सिंहकी तरह

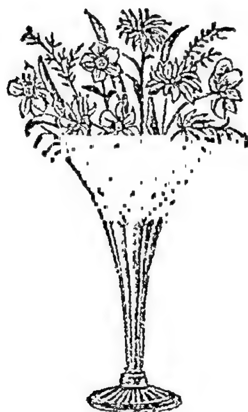
गरज कर बोले, "शीघ्र मरहटा-फ़ौजको पकड़लो, कि जिससे एक भी मनुष्य भागने न पावे" यह कह कर, वह स्वयं मरहटों की सेनाके नाशार्थ दौड़े।

अभ्यर्थनाके बहाने अलवर्दीने पहले ही से अपनी सेना युद्धके लिये तैयार कर रक्खी थी। अलीवर्दी को झपटते देखकर उनकी सेना भी दौड़ पड़ी और सिपाहियों को चारों ओरसे घेर लिया।

मरहटा-सेनाको कभी स्वप्नमें भी यह ध्यान नहीं था, कि मुसल्मान ऐसे विश्वासघातक होते हैं—वे कोई भी बात सच नहीं कहते, तो फिर उनको अलीवर्दीका विश्वासघात करके भास्कर पण्डितके प्राण-हरण का और पीछे आक्रमण करने का ख्याल कैसे आता; इसीलिये वह लोग निःशङ्क-चित्तसे आमोद-प्रमोद कर रहे थे। सहसा उनका आक्रमण देखकर और सेनापति भास्करकी नृशंस हत्या सुनकर सबका उत्साह जाता रहा। किसीने भी युद्ध न किया, क्योंकि उसके लिये वे तैयार ही न थे और न अवसर ही मिला। कुछ तो अपने प्राण लेकर भाग गये और कुछने लड़कर जान दी। नवाब की जय हुई। नवाब-पक्षकी सेना की प्रसन्नता की सीमा न रही। अलीवर्दीने पांच लाख रुपये अपने हाथ से अपनी सेना को और पांच लाख रुपये भास्कर पण्डितके हत्याकारी मुस्तफ़ा खां को पुरस्कारमें दिये।

अलीवर्दीने कौशल से, विश्वासघात से, भास्करकी हत्या

करके शत्रुको निर्मूल सा कर दिया, किन्तु वह सदैव के लिये कलङ्कित हो गया। आज भी मानकरा की भूमि अलीवर्दी के कलङ्क-स्तम्भको अपने वक्षस्थल पर धारण करके 'अलीवर्दी विश्वासघातक है,'—यह बात स्वदेशी क्या विदेशी सब ही से कहती है।



पन्द्रहवाँ परिच्छेद ।

आ स्कर पण्डित की हत्या की बात बहुत दिनों तक छिपी न रह सकी। ज्योंही वह हत्या-कहानी राघोजी के कानों में पड़ी, त्योंही विश्वासघातक मुसल्मानोंके ऊपर विजातीय घृणा और क्रोध उसको उत्पन्न हुआ और बदला लेने की उत्कट आगके वशवर्त्ती होकर, मुसल्मानी राज्यको उखाड़ फेंकने की इच्छा करके, बड़ी भारी सेना लेकर स्वयं बङ्गालको चल पड़ा।

राहमें राघोजीको और भी बहुतसे सङ्गी मिल गये। मुस्तफ़ा खाँ भी उससे मिल गया। यद्यपि मुस्तफ़ा खाँने भास्कर पण्डित को मारा था, किन्तु राघोजीने अपने मतलबके सिद्ध होनेके लिये उस बात की कोई चर्चा भी नहीं की और न उसका कोई प्रतिशोध ही लिया। मुस्तफ़ा खाँको प्रधान सहायक समझ कर अपना मित्र बना लिया और बड़े वेग से बङ्गाल की ओर बढ़ने लगा।

बड़ी भारी सेना लेकर राघोजी बङ्गाल में आ रहा है, यह सम्वाद पाकर नवाब बड़े भयभीत और चिन्तायुक्त हुए।

मुस्तफ़ा खाँ राघोजी से मिल गया है, यही अलीवर्दीके डरका प्रधान कारण हुआ। इस समय वह सोचने लगे कि राजद्रोहके अपराधमें मुस्तफ़ा खाँ का निर्वासित कर देना ठीक न हुआ, यदि उसको मैं निकाल न देता तो आज वह राघोजी से न मिल जाता। राघोजी एक प्रबल शत्रु है, तिस पर घर का भेदी मुस्तफ़ा खाँ मिल गया, अब राज्यके सब गुप्त भेद वह जान सकता है। मुस्तफ़ा खाँ जिस कामके करने को उद्यत हुआ था, ऐसे विश्वासघातक को तो प्राणदण्ड देना अथवा क़ैद करना ही अच्छा होता, फिर राघोजी से भी इतना भयभीत और चिन्तायुक्त न होना पड़ता।"

राघोजी को आता सुनकर नवाब अलीवर्दी भी निश्चिन्त न रहे। उन्होंने अपने राज्यमें यह घोषणा कर दी कि, "राघोजी इस बार बड़ी भारी सेना लेकर बङ्गालको आरहा है। विश्वासघातक, राजद्रोही मुस्तफ़ा खाँ भी उसके साथ है, उसका मन्त्रणादाता और पथ-प्रदर्शक बना है। यदि इस डाकू के हाथसे अपना मान, जाति-धर्म और धन-रत्नकी रक्षा करना चाहो तो सब लोग सावधान हो जाओ, किसी निरापद स्थानको चले जाओ, अथवा अपना अपना बल विक्रम प्रकाश करके डाकुओं को उचित दण्ड देनेके लिये तलवार हाथमें लेओ। जो अपने धन और प्राणों की रक्षा न कर सकता हो, उसी का मरहटा लोग सर्वनाश करेंगे। हमको राज्य-रक्षाके लिये राघोजी से सदैव ही लड़ाई करनी होगी। ऐसी अवस्था में न मालूम वह

लोग किसका सर्वनाश करें, यह भी नहीं जान सकते। अतएव सब लोग पहले ही से सावधान होजाओ, अपने अपने धन और प्राणों की रक्षाके लिये बलवृद्धि करो।"

नवाब की घोषणा बहुतों को शापरूपमें वर होगई। राजा महाराजा सुभीता पाकर सैन्यबल बढ़ाने लगे। चतुर अँगरेज़ लोगों को भी जिस बात की बहुत दिनों से आवश्यकता थी, उसको उन्होंने भी सुयोग पाकर पूरा कर लिया। क़ासिमबाज़ार में एक छोटा सा क़िला बनवा लिया और शत्रु के उपद्रवसे कलकत्ते की रक्षा करने के हेतु, उसके पूर्व और उत्तर की ओर, खाई खुदवाली और धीरे धीरे अपना सैन्यबल बढ़ाने लगे। (यही खाई अब मरहटा-खाईके नाम से मशहूर है)।

परन्तु यह सब काम सिराजको कब अच्छे लगते, वह तो सदैव से अँगरेज़ों का शत्रु था। उसने अपने नानासे कहा, "नानाजी! आप यह सब क्या कर रहे हैं?"

सिराजुद्दौला नवाबके स्नेहकी पुतली और आदरका धन था। इसी स्नेहके कारण वह उसको बालक समझते थे। सुतराँ, उसकी अधिकांश बातों पर ध्यान नहीं देते थे और हँसी करके उड़ा देते थे।

इस समय सिराजुद्दौला की बात सुनकर नवाबने सोचा, "बालक सिराज देखें अब की बार क्या नया झगड़ा लाया है।" प्रकाश में हँसकर कहा, "सिराज! तुमारे आदर और हठकी

बातें सुनते सुनते मेरे कान भन्नाने लगे हैं। अब मैं तुम्हारी बात और नहीं सुनना चाहता, न मालूम तुम्हारी यह बालकों की सी बातें कब जावेंगी कि जिससे बात-बात में हमको फ़रियाद न सुननी पड़े।"

"नानाजी! आपके सामने तो मैं आज भी बालक ही हूँ और सदैव ही रहूँगा। आप मुझको स्नेह की दृष्टिसे देखते हैं और प्राणोंसे भी अधिक चाहते हैं, इसी कारण मेरी हर एक बातको शिशुता कह कर टाल देते हैं। परन्तु नहीं मालूम, आप कब तक मुझे इसी भांवसे देखेंगे और मेरी बातों की उपेक्षा न करके उनके ऊपर ध्यान देंगे। ध्यान देने पर आपको मालूम होगा कि मैं क्या कहता था।" यह बातें सिराज ने बड़े दुःखके साथ कहीं।

अलीवर्दीने बड़े आदर से सिराजके कपोलों को चूमकर कहा, "क्यों भाई! क्या मैं तुम्हारी सब ही बातों की उपेक्षा करता हूँ? यदि मैं तुम्हारी बातों को नहीं मानता हूँ, तो बीच बीच में परामर्श क्यों करता हूँ? सिराज! मैं तुमको अपने सामने बालक समझता हूँ। भाई सिराज! स्नेह के कारण ही मुझको ऐसा दिखलाई देता है।"

सिराज—नानाजी! आप मुझसे सलाह अवश्य लेते हैं; किन्तु वह सब अपने प्रयोजन पड़ने पर। मैं जिस समय जो कुछ कहता हूँ, क्या सब ही आप मान लेते हैं, वरन् बालक कह कर हँसीमें उड़ा देते हैं। एक बार भी ध्यान

देकर आप नहीं देखते कि मैं क्या कर रहा हूँ। यदि मेरी सब बातों को ध्यान से सुनकर, समझ कर, आप यह कह दें कि यह बात तुम ठीक नहीं कहते हो और तब आप उसको न मानें तो मुझको कुछ भी दुःख न हो। यही चित्तमें आता है कि कोई बात आपसे न कहूँ। परन्तु किसी काममें ख़राबी होती देख कर और भविष्यत् में उससे कुछ अनिष्ट होने के डरसे, बिना कहे भी नहीं रहा जाता। अब उपस्थित में, यही जो काम आपने किया है, यह क्या आप जैसे प्रवीण नवाबको करना उचित था? मालूम नहीं, क्या समझ कर आपने इस नीति-मार्गके विरुद्ध काम को अनुमति दे दी है।"

अलीवर्दी—सिराज! तुम क्या कहते हो? मैंने ऐसा कौन सा काम नीति-विरुद्ध किया है?

सिराज—राजा, महाराजा और अँगरेज़ सौदागरों इत्यादि को अपना अपना बल बढ़ानेकी क्षमता क्यों दी है?

अलीवर्दी—इसमें नीति-विरुद्ध क्या काम हुआ है?

सिराज—मेरी जहाँ तक समझ पहुँचती है वहाँ तक मेरा ऐसा ख्याल है, कि इस क्षमताका देना बिल्कुल ही अनुचित हुआ है। राजा अपनी प्रजाको कभी भी ऐसा बल प्रदान नहीं करता है।

अलीवर्दी—क्यों सिराज! इसमें क्या दोष है?

सिराज—नानाजी! आप थोड़ा ध्यान देकर सोचें कि ऐसी अनुमति देनेसे अन्तमें कैसे अनिष्टकी सम्भावना है!

अलीवर्दी—सिराज! मेरी समझमें तो मैं इसमें कुछ भी दोष नहीं पाता हूँ; वरन् आधीन लोगोंको बल-वृद्धिकी क्षमता देनेसे, बर्गियोंके हङ्गामेसे उनके धन-प्राण, कुल-मानकी रक्षाका उपाय हो जायगा। इतनी क्षमता न देनेसे वह लोग डाकू मरहट्टोंके हाथोंसे किस तरह रक्षा पावेंगे? विशेष करके, इस बार राघोजी जिस रूपसे विपुल सेना लेकर आ रहा है, ऐसी दशामें प्रजावर्ग को बलवृद्धि की क्षमता न देनेसे, राघोजीं से रक्षा पाना बड़ा कठिन है। सिराज! मैंने यही समझ कर राजाओं और प्रजाको बल बढ़ानेकी क्षमता दी है। इससे मङ्गलके सिवाय अमङ्गलकी तो मैं कोई बात नहीं देखता हूँ।

सिराज—नानाजी! आप राजाओं और प्रजा-मण्डलीको बलवृद्धिकी क्षमता देकर मरहट्टोंके हाथसे रक्षा पानेकी इच्छा रखते हैं, किन्तु इस विष-वृक्षको रोपण करनेसे भविष्यत्में उससे कैसा भयङ्कर फल उत्पन्न होगा, इसको क्या आपने एक बार भी सोचा है?

अलीवर्दी—सिराज! मैंने खूब समझ कर प्रजावर्गको यह क्षमता दी है, परन्तु मेरी समझमें नहीं आता कि तुम क्यों इसको दोषपूर्ण समझते हो, और परिणाममें किस अनिष्टकी सम्भावना है?

सिराज—नानाजी! आप सरल दृष्टिसे देखते हैं, इससे आप अनुमान नहीं कर सकते कि इसका कैसा भीषण परिणाम हो सकता है। किन्तु यदि आप सूक्ष्म दृष्टिसे देखें, तो

आपकी समझमें आ जायगा कि राजा लोगों और प्रजाको बल-वृद्धिकी क्षमता देनेसे आपने कितना अन्याय किया है। ऐसे तीक्ष्णदर्शी होने पर भी, क्या आपकी समझमें यह बात नहीं आती है, कि यदि कोई लता जो वृक्ष पर चढ़ी हुई है उस वृक्षको चारों ओरसे ढक ले, तो अवसर पाने पर वही लता वृक्षके नाशका कारण होजाती है ?

अलीवर्दी—हां वत्स ! यह बात ठीक है, किन्तु मेरे आधीन राजा लोगों और प्रजासे इस बातकी कुछ भी आशङ्का नहीं है।

यह बात सुनकर सिराजुद्दौला ने कुछ हँसकर कहा, "नानाजी ! आप ऐसा भरोसा न करें। आपका ऐसा सरल विश्वास ठीक नहीं है। क्या आपको मालूम नहीं है कि असावधानतासे अपने ही दांत अपनी जिह्वाको काट देते हैं ? आपके आधीन राजा लोग, क्षमताहीन और उपाय-विहीन रहनेसे ही, आपको श्रद्धाभक्ति दिखला सकते हैं किन्तु क्षमता पाने पर वह भक्ति-श्रद्धा उस भावकी कदापि नहीं रह सकती है, यह आपको दृढ़ निश्चय कर लेना चाहिये।

अलीवर्दी—वत्स ! जिन राजा महाराजा और ज़मीन्दारों की सहायतासे मैं बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाके सिंहासन पर बैठा हूँ, उन्हीं के द्वारा मेरा अनिष्ट होगा यह सम्भव नहीं है।

सिराज—नानाजी ! आज न होवे, आपके रहते न होवे, किन्तु भविष्यत्‌में मुसल्मान-शक्ति पददलित अवश्य होगी,

मुसल्मान-राज्य लोप हो जावेगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

सिराजकी इन बातोंको नवाब उपेक्षा अथवा अवहेलना न कर सके। वह समझ गये कि सिराज जो कुछ कह रहा है, वह सब सत्य है। आधीन लोगोंको बलवृद्धिकी क्षमता देनेसे वे लोग कभी न कभी उसको अवश्य प्रकाश करनेकी चेष्टा करेंगे।

यद्यपि नवाब ये सब बातें समझ गये थे, परन्तु इस समय प्रजाको यह क्षमता न देनेसे राघोजी के हाथसे राज्यको किस तरह रक्षा होगी, यह सोचकर उन्होंने कहा, "सिराज! यदि बलवृद्धिकी क्षमता राजाओं और प्रजाको न दूँ, तो वर्गियों से राज्यकी रक्षा किस प्रकार होगी?"

सिराज—यह बलवृद्धिकी क्षमता उन लोगोंको न देकर आप स्वयं ही कर सकते हैं।

अलीवर्दी बड़े दुःखित स्वरसे बोले, "सिराज! तुम जानते हो कि कोषमें रुपया नहीं है। ऐसी अवस्थामें, मैं किस प्रकार बलवृद्धि कर सकता हूँ?"

सिराज—राज्यकी रक्षा राघोजी से करनेके लिये आपको प्रजाके ऊपर कर स्थापन करना चाहिये था। उनको बलवृद्धि की क्षमता न देनी चाहिये थी, विशेषतः अँगरेज़ लोगोंको तो कदापि यह शक्ति न देनी चाहिये। क्योंकि एक तो वह लोग बिना कर दिये ही व्यापार कर रहे हैं; उस पर तुर्रा यह कि

दिल्लीश्वरके अनुमति-पत्रकी दुहाई देकर और लोगोंसे महसूल वसूल करते हैं। इन लोगोंसे मुझको बड़ी ही घृणा है।

अलीवर्दी—सिराज! तुम्हारे कहनेसे पहले ही मेरे मनमें यह बात उत्पन्न हो चुकी है, किन्तु इसका उपाय ही क्या है?

सिराज—ऐसी चेष्टा करनी चाहिये कि यह लोग कर देने लग जावें।

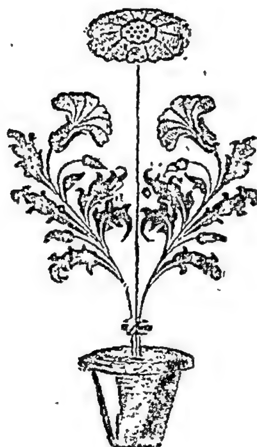
अलीवर्दी—सिराज! ईस्ट इण्डियन कम्पनी तो कर न देगी। उसने दिल्लीश्वर शाहजहाँ से, बिना कर दिये व्यापार करनेकी, अनुमति ले ली है। हमको भी उसी पर चलना चाहिये।

सिराज—तो क्या अँगरेज़ व्यापारी सर्वदा ही बिना कर दिये बङ्गाल देशमें वाणिज्य करेंगे—खुद भी न देंगे और अपने जातिवालोंसे भी आप ही ले लेंगे? यह बातें देख सुन कर भी यदि इनका कोई बन्दोबस्त न होगा, तो हम लोगोंके राज्य करनेका प्रयोजन ही क्या है? और इस तरह होते रहने से हमको राजा समझकर हमसे कोई डरेगा भी नहीं।

अलीवर्दी—सिराज! इस समय अँगरेज़ व्यापारियोंसे लड़ने झगड़नेका समय नहीं है। सबसे पहले राघोजी को परास्त करना आवश्यक है। यह न करके, यदि अँगरेज़ोंसे कलह की जावेगी तो वह लोग अवश्य ही राघोजी का साथ देंगे। इस अवस्थामें, कठिनाई और भी बढ़ जावेगी। वत्स! मेरी बात सुनो और अब शान्त हो जाओ। पहले राघोजी को

परास्त करो, फिर अँगरेज़ोंके साथ झगड़ा किया जायगा। अग्निको एक ही समयमें चारों ओर फैल जानेसे उसका बुझाना बड़ा कठिन होता है।

नानाकी ये बातें सुनकर, सिराज कुछ खिन्न हो गया और उसने कुछ न कहा।



सोलहवाँ परिच्छेद ।

अदृष्ट फिर गया। भाग्यदेवी ने मीरजाफ़र पर अपनी कृपा-दृष्टि की। मीरजाफ़र ने सामान्य पदवीसे बड़ा सम्मान और गौरवका पद पाया। उसको 'सिपहसालार-आज़म' अर्थात् प्रधान सेनापतिकी पदवी मिली। नवाब अलीवर्दी की कुल सेना उसके अधिकारमें हो गई। समय फिर गया। देशमें मान हो गया। राजा, महाराजा, ज़मीन्दार और उमराव इत्यादि सभी लोग उसको 'सेनापति' कहकर पुकारने लगे।

किस कारणसे और किस घटनासे, किसकी उन्नति अथवा अवनति होती है यह कौन कह सकता है? मरहट्टोंका आक्रमण ही मीरजाफ़र की उन्नतिका मूल हुआ। नवाब अलीवर्दी शरीरके अस्वस्थ होनेके कारण मरहट्टोंको दमन करनेके लिये न जा सके। अपने विश्वासी, नितान्त अनुगत और विशेष कर भगिनीपति, मीरजाफ़र को सेनापति करके बर्गियोंके हङ्गामेको दमन करनेके लिये भेज दिया।

मीरजाफ़र सेनापति होकर, दस हज़ार सेना साथ लेकर,

बड़े समारोहसे मरहट्टोंके दमन करनेके लिये चल दिया। अलीवर्दी को विश्वास था कि मीरजाफ़र मरहट्टोंको दमन कर लेगा; किन्तु उनकी सब आशा, उनका सब भरोसा व्यर्थ हुआ। मीरजाफ़रमें ऊपरी ठाटबाट बहुत थे। मरहट्टोंका सामना करना तो दूर रहा, वह मेदिनीपुर पहुँचते ही विलास-तरङ्गमें डूब गया, वार-वनिताओंको लेकर रसरङ्गमें मस्त हो गया। दिन-रात नाचगाने और आमोद-प्रमोदमें कटने लगे। मरहट्टों को दमन तो दूर रहा, आमोद-प्रमोद ने उसका स्थान ग्रहण कर लिया।

यह बात अलीवर्दी से भी छिपी न रही। बहनोईकी इस कार्रवाईसे वह बहुत अप्रसन्न हुए। उन्होंने आशा की थी, कि मीरजाफ़र इस नये उच्च पदको पाकर अपना बाहुबल दिखलावेगा, मरहट्टोंके वीर राघोजी को मार भगावेगा और वीरों की नामवरी लूटेगा; किन्तु उनकी यह सब आशा दुराशामें बदल गई, वह बड़ी विपत्तिमें पड़ गये और सोचने लगे कि अब किसको सेनापतिके पद पर नियुक्त करके मरहट्टोंके दमन को भेजें।

किन्तु बहुत देर सोचना न पड़ा, उनको अताउल्लाकी याद आ गई। अताउल्ला रणकुशल, साहसी और योग्य था। वही सेनापतिके पद पर नियुक्त हुआ।

वह बहुत दिनोंसे सुयोग ढूँढ़ रहा था। आज अकस्मात् यह अवसर पाते देखकर बोला, "नवाब बहादुर! जब हुज़ूर

मेरे ऊपर दमन करनेका भार रख रहे हैं, तो मैं इस कार्य्यको प्राण देकर भी पूरा करनेका प्रयत्न करूँगा।"

अलीवर्दी—तो देर न करके, इसी समय बारह हज़ार सेना के साथ राघोजी से लड़नेको जाओ।

अताउल्ला—'जो आज्ञा' कहकर चल दिया।

एक मसल है,—"जो लङ्काको जावे वही राक्षस होवे।" यही मसल यहाँ भी चरितार्थ हुई।

अताउल्ला बारह हज़ार सेना लेकर मेदिनीपुर पहुँचा। वहाँ अपना शिविर स्थापन करके, वह अपनी दुरभिसन्धिके साधनके उपाय सोचने लगा और मरहट्टोंको दमन करना भूल गया।

धूर्त्त अताउल्लाने मन ही मन स्थिर किया, कि जब तक मीरजाफ़र को अपने वश न करूँगा, तब तक मतलब सिद्ध न होगा, क्योंकि वही प्रधान सेनापति है। सब फ़ौज उसकी आज्ञाके आधीन है। अतएव उद्देश्य साधनके लिये, पहले उसको ही वश करना चाहिये।

धूर्त्तको छल कपट भी बहुतसे याद होते हैं। अताउल्लाने एक कौशल-जाल फैलाया। नवाब अलीवर्दी के नामका एक जाली पत्र बनाकर, उस पत्रको लिये हुए मीरजाफ़रके शिविर में पहुँचा और बोला, "सेनापति! आपको दिखलाई नहीं देता है कि आपका सर्वनाश उपस्थित है?"

मीरजाफ़रने बड़े भयसे पूछा, "क्यों अताउल्ला! क्या हुआ?"

अताउल्लाने बड़े दुःखित भावसे कहा, "मैं उसकी बाबत क्या कहूँ? नवाब बहादुर आपके सर्व्वनाश करने पर उद्यत हो गये हैं।"

यद्यपि नवाब बहादुरके अनुग्रहसे मीरजाफ़र सेनापति हो गया था, किन्तु सेनापतिके योग्य वीरत्व अथवा रणकुशलता उसमें कुछ भी न थी। वह केवल नवाबका भगिनीपति होने ही से सेनानायक हो गया था।

अताउल्ला की बात सुनकर वह बड़ा भयभीत हो गया और कहा, "क्यों अताउल्ला! नवाब बहादुर क्या मेरे ऊपर अप्रसन्न हैं?"

अता—आप नवाबके किस कामके लिये आये थे, क्या आपको उसकी याद है? आप तो यहाँ आकर आमोद-प्रमोद में लिप्त हो गये हो और नगर बेखटके लुट रहा है। नवाबने क्या आपको इसीलिये भेजा था? राजाज्ञाकी अवहेलना की है, इसलिये नवाब आपको राजदण्डसे दण्डित करनेके लिये उद्यत हुए हैं। आप देखते हैं कि आपका सर्व्वनाश उपस्थित है।

मीरजाफ़रका मुख सूख गया। कण्ठ रुँध गया। वह एकटक अताउल्लाके मुखकी ओर देखने लगा।

अताउल्लाने इस अवसर पर भय दिखाकर अपनी अर्थ-सिद्धिके लिये कहा, "नवाब बहादुर आपके इस कामसे बड़े ही रुष्ट हो गये हैं और आपको क़ैद करनेके लिये मुझे भेजा

है । यह देखो नवाबका क्या आदेशपत्र है," यह कहकर अपने अँगरखेसे एक पत्र निकालकर मीरजाफ़र के हाथमें दे दिया ।

पत्र पढ़कर मीरजाफ़रका माथा घूम गया, छाती धड़कने लगी, जिह्वा सूख गई, ओठ पीले पड़ गये और कुछ न बोल सका । चुपचाप एक दृष्टिसे उस पत्रकी ओर देखने लगा ।

धूर्त्त अताउल्लाने कहा, "सेनापति ! नवाबका आदेश-पत्र आपने देख लिया, अब आप क्या करेंगे ? सहज ही में बन्दी हो जावेंगे या युद्ध करेंगे ?"

मीरजाफ़रने बड़े कष्टसे उत्तर दिया, "अताउल्ला क्या इसका कोई उपाय नहीं है ?"

अता—सेनापति ! आप किस उपायकी बात कहते हैं ?

मीर—जिससे मैं रक्षा पाऊँ, बन्दी न होऊँ, क्या ऐसा आप कोई उपाय नहीं कर सकते हो ?

चतुर अताउल्ला काँप उठा और बोला, "सेनापति ! यह आप क्या कह रहे हैं ? नवाबका आदेश उल्लङ्घन करनेसे अन्त में मेरे लिये भी वही दण्ड है ।"

डरपोक मीरजाफ़र सत्य-असत्यके निर्णय करनेका क्लेश न उठाकर, अताउल्लाका कपट कुछ भी न समझ सका । भयके मारे उसकी ज्ञानबुद्धि लोप हो गई । अताउल्लाकी बातों पर उसने सत्य ही विश्वास कर लिया और छुटकारा पानेकी आशासे अताउल्लाका हाथ पकड़ कर सजल नेत्रोंसे कहने लगा, "अताउल्ला ! इस समय मेरी रक्षा करो । इस विपत्तिसे

मैं छुटकारा पाऊँ, तो सदैव तुम्हारा ऋणी रहूँगा और तुम्हारा यह उपकार कभी न भूलूँगा। अबकी बार मुझको वहाँ न ले चलो, यह कहकर सेनापति बार बार कातरता दिखलाने लगा। इसके आँसुओंसे अताउल्लाके हाथ भीग गये। वह मीरजाफ़रकी व्याकुलता देखकर मन ही मन हँसने लगा।

धूर्त्त अताउल्लाने देखा कि दवा असर कर गई और भीरु मीरजाफ़र वशमें आ गया है। उसने देखा कि कार्य्य-सिद्धिका उपाय ठीक हो गया है—बोला, "देखो सेनापति! बचानेमें मुझको नवाबके साथ विवाद करना पड़ेगा। आपके लिये नवाबके साथ अनर्थक झगड़ा करनेसे मेरा क्या लाभ है? किन्तु आपकी कातरता देखकर मैं आपका यह काम करना चाहता हूँ, पर जैसा मैं कहूँ यदि उसी तरह पर आप चलें तो मैं आपकी रक्षा कर सकता हूँ।"

मीर—अताउल्ला, मैं पैग़म्बरकी सौगन्ध खाकर कहता हूँ, कि यदि तुम मुझको इस आफ़तसे बचा दो, तो जो कुछ तुम कहोगे वही मैं करूँगा।

अता—देखो सेनापति! आपकी रक्षा करनेमें निश्चय ही मुझको नवाबके साथ झगड़ा करना पड़ेगा। परन्तु कुछ भी हो, मैं उससे नहीं डरता हूँ। यदि मेरे द्वारा आपकी जान बच जाय, तो मैं उसके करनेको प्रस्तुत हूँ। किन्तु एक बात है, कि मैं मुर्शिदाबादके सिंहासन पर बैठूँगा और आप पटनाके नवाब होंगे। यदि इस प्रस्ताव पर आप सम्मत हो जावें,

तो मैं आपकी रक्षा कर सकता हूँ; नहीं तो आपके वास्ते नवाब के साथ अनर्थक विवाद करनेसे अपनी भविष्यत्की उन्नतिकी आशामें बाधा नहीं डालना चाहता हूँ।

मीरजाफ़र अभी तक अताउल्ला की दुरभिसन्धिके विषय में कुछ भी न समझ सका। वह पटना की नवाबी पानेके आनन्दमें विह्वल हो गया और कहा, "मैं तुम्हारे इस प्रस्तावसे पूर्णरूप से सहमत हूँ, किन्तु अलीवर्दीको सिंहासनच्युत किस तरह करोगे?"

अताउल्लाने हँस कर कहा,—"हम दोनों की शक्ति मिल जाने पर अलीवर्दीको सिंहासन से उतारने में कितनी देर लगेगी? सेना तो इस समय हम लोगोंके ही आधीन है। हम लोग जो कुछ हुक्म देंगे, वही करेगी। ऐसा सुयोग फिर कभी न मिलेगा। हम लोग यदि अस्त्र धारण कर लें, तो निश्चय ही अलीवर्दी पराजित होंगे। नवाब जिस तरह एक सामान्य कारण के लिये आपको क़ैद करना चाहते हैं, उनको भी उसी तरह सपरिवार बन्दी करेंगे।"

मीरजाफ़र लोभमें आकर राज़ी हो गया और अलीवर्दीको सिंहासनच्युत करनेके लिये षड़यन्त्र रचने लगा।



सत्रहवाँ परिच्छेद ।

अलीवर्दी की विश्वास की आशा दुराशा होगई। शरद ऋतुका निर्मल आकाश प्रलयके बादलों से घिर गया। गुप्तचरने आकार सम्वाद दिया कि, "नवाब बहादुर! सर्वनाश आ उपस्थित हुआ! अताउल्ला मीरजाफ़रको कौशलसे अपने हाथमें करके राजद्रोही हो गया है! राज-सिंहासन लेने के लिये षड्यन्त्र रच रहा है! मरहट्टोंको दमन करने की तो बात गई, पटनाके सिंहासन पर मीरजाफ़र और मुरशिदाबादकी मसनद पर अताउल्ला बैठेगा, यह बात स्थिर हुई है।"

यह सुनकर नवाब काँप उठे। अपने कुटुम्बियोंकी यह विश्वासघातकता सुनकर उनकी सौम्य शान्त मूर्त्ति भयङ्कर हो गई, आँखोंसे मानों आगकी चिनगारियाँ निकलने लगीं, दाँत किटकिटा कर कहने लगे, "क्या अताउल्लाको इतना साहस हो गया कि मेरे ही अन्नसे पलकर मेरे ही सिंहासन की ओर दृष्टि करे? कैसा धर्म्म-विरुद्ध कार्य्य है!" और दूतसे कहा, "अच्छा दूत। तुमने किस प्रकार उसकी यह चाल जान पाई?"

दूतने हाथ जोड़कर कहा, "नवाब बहादुर! लोग जो चोरी किया करते हैं, उसीका पता लगाना हम लोगोंका काम है, इसीलिये हमारा नाम गुप्तचर है। किन्तु प्रभो! अताउल्ला तो प्रकाशरूप में ही विद्रोही हुआ है।"

अली०—और मीरजाफ़र?

दूत—मीरजाफ़र विद्रोही नहीं है, यह मैं नहीं कह सकता हूँ, किन्तु दोनों की आशाएँ अलग अलग हैं।

दूतकी बातें सुनकर नवाबको बड़ा आश्चर्य्य हुआ और पूछा, "किसका क्या उद्देश्य है और किसकी क्या आशा है?"

दूत—अताउल्लाका लक्ष्य यह है कि मुरशिदाबादकी मस-नद पर बैठकर स्वाधीन हो जावे और मीरजाफ़रकी अभिलाषा है कि प्राण-रक्षा पाकर पटना की नवाबी ले।

यह सुनकर अलीवर्दीका कौतूहल और भी बढ़ा। उन्होंने आग्रह के साथ पूछा, "दूत! मीरजाफ़रको मारनेवाला अब कौन है?"

दूत—आप ही ने तो मीरजाफ़रके प्राण लेनेका आदेश दिया है।

अली०—किस लिये?

दूत—राजकार्य्यमें अवहेलना करनेके कारण से।

नवाबने दूतसे फिर कोई प्रश्न नहीं किया। वह अताउल्ला का कौशल और चतुरता सब समझ गये। अताउल्लाकी विश्वासघातकता व राजद्रोहके कारण उनका मस्तक मानो

जलने लगा। उन्होंने तत्क्षण सिराजुद्दौलाको बुला भेजा। उसके आ जाने पर अलीवर्दीने कहा, "सिराज! अताउल्लाके राजद्रोहका हाल तुमने सुना? वह मुरशिदाबादकी मसनद पर बैठना चाहता है और स्वाधीन होना चाहता है।"

सिराज—यदि अताउल्ला राजद्रोही हो गया है, तो अभी तक क़ैद क्यों नहीं किया गया?

अली०—सिराज! अताउल्लाको इस समय क़ैद करना सहज नहीं है, मेरी बारह हज़ार सेना इस समय उसके आधीन है।

सिराजुद्दौलाने बड़े विस्मयसे कहा, "अताउल्लाको इतनी सेना कहाँ मिल गई?"

अलीवर्दीने विमर्षभावसे कहा, "सिराज! यह सब सेना हमारी ही है, किन्तु घटना-चक्रसे वह इस समय अताउल्लाके आधीन है।"

सिराजुद्दौला और अधिक विस्मयसे पूछने लगा, "इतनी सेना उसके हाथमें किस तरह पहुँची?"

अली०—वत्स! मीरजाफ़रको सेनापति करके मैंने मरहट्टोंके दमन करनेको भेजा था; परन्तु वह मेदनीपुर पहुँच कर विलासमें मग्न हो गया। मरहट्टोंका दमन करना तो दूर रहा, वह आमोद-प्रमोदमें मत्त हो गया। अन्तमें मैंने कोई और उपाय न पाकर, अताउल्लाको सेनापति करके भेजा। परन्तु यह किसे ज्ञात था, कि वह ऐसा विश्वासघातक है।

वह दुष्ट मेदनीपुर पहुँचा और कापुरुष मीरजाफ़रको झूठा भय दिखा कर अपने वश कर लिया। अब यह स्थिर हुआ है, कि मीरजाफ़रको पटनाकी नवाबी देकर, आप मुर्शिदाबादके सिंहासन पर बैठे। इस समय वे दोनों विद्रोही हैं और लड़ाईकी तय्यारी कर रहे हैं।

इतनी देर बाद सिराजुद्दौलाकी समझमें सब घटना आ गई।

वह बोला, "नानाजी! इस अवस्थामें और देर करना उचित नहीं है। विद्रोही लोग आगे न बढ़ आवें, इसके पहले ही हमें उनको घेर लेना चाहिये।"

अली—इसी परामर्शके लिये मैंने तुमको बुलाया है। मैं अब मेदिनीपुर जाता हूँ, तुम राजधानीमें रहकर राज्यकी रक्षा करो।

सिराज—नहीं नानाजी! मैं आपके साथ चलूँगा। क्या आपकी समझमें, मेरे आपके साथ रहनेसे, आपको कोई सहायता न होगी?

सिराजुद्दौला का आग्रह देख कर नवाबने और कुछ नहीं कहा। सिराज अपने नानाके साथ हो लिया। उसी दिन बीस हज़ार फ़ौज लेकर दोनों ही मेदिनीपुर की ओर रवाना हुए।

इधर अताउल्ला ने यद्यपि मुर्शिदाबाद के सिंहासनको अपना लक्ष्य बना लिया था, किन्तु जब सुना कि नवाब

अलीवर्दी और सिराजुद्दौला बीस हज़ार फौज लेकर मेदिनी-पुरको आरहे हैं, तो वह और मीरजाफ़र दोनों ही ऐसे भयभीत हुए, कि जिसका पार नहीं। सिंहासनका अधिकार करना तो भूल गये, इसका उपाय ढूँढ़ने लगे कि नवाब के राजदण्डसे और सिराजुद्दौलाके कोपानलसे किस प्रकार रक्षा पावें।

नवाब ने समझा कि अताउल्ला और मीरजाफ़रके दमन करने में न जाने कितना युद्ध करना होगा, कितना रक्त बहाना होगा, कितनी सेना क्षय होगी; किन्तु युद्ध न हुआ, एक बन्दूक भी न चलानी पड़ी, गोला गोली और बारूद कुछ भी नष्ट न हुआ। नवाब के मेदिनीपुर पहुँचते पहुँचते, दोनों सेनापतियों ने आकर आत्मसमर्पण कर दिया और क्षमा-प्रार्थी हुए।

नवाब ने जब देखा कि मीरजाफ़र और अताउल्ला ने बिना युद्ध किये ही आत्मसमर्पण कर दिया है, तो बड़े सन्तुष्ट हुए और दोनों ही को क्षमा कर दिया; किन्तु सिराजुद्दौला इस बातसे बहुत अप्रसन्न हुआ, राजद्रोही विश्वासघातकको क्षमा करना उसको अच्छा नहीं लगा। वह उन दोनों को बन्दी करने के लिये बारम्बार हठ करने लगा। सो भी यहाँ तक, कि नवाब की भर्त्सना तक करने लगा।

सिराजुद्दौला के हठ और भर्त्सनायुक्त वाक्योंसे परिणाम-

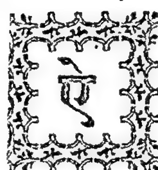
दर्शी वृद्ध नवाब अलीवर्दी के चित्तमें कोई चञ्चलता न हुई; वरन् सिराजुद्दौला को एकान्तमें लेजाकर समझाने लगे कि, "देखो सिराज! केवल क्रोधके वशीभूत होनेसे काम नहीं चलता है। क्षमा ही मनुष्यका प्रधान गुण है। जिसके हृदयमें क्षमा नहीं है, जो दया-माया से शून्य है, उसको मानों पूरा मनुष्यत्व प्राप्त नहीं हुआ है। तुम इस समय यौवनके आवेग से चञ्चल हो रहे हो, इसीसे क्षमाकी महिमा अच्छी तरह नहीं जानते हो। मैं भी एक समय तुम्हारी ही तरह था, किन्तु इस समय मैं अनेक विषयों में तुम्हारी अपेक्षा अधिक समझता हूँ। तुम जब मेरी वयस को पहुँचोगे, तो तुमको ज्ञात होगा कि दण्डनीति सब ही समयोंमें अच्छी नहीं होती है। विशेष करके मीरजाफ़र और अताउल्ला ने विना युद्ध किये हुए, विना रक्त बहाये ही, आत्मसमर्पण किया है। इस अवस्थामें किसी प्रकार का दण्ड देने से, हम लोगों को साधारण लोगोंका विरागभाजन बनना पड़ेगा; और हमारे शत्रु मरहट्टे लोग समझ लेंगे कि मुसल्मानोंमें आपसमें झगड़ा फैल रहा है। इससे उन लोगोंका बल-विक्रम और साहस बढ़ जायगा। इसके अतिरिक्त एक और बात है, कि पहिले बाहरके शत्रुको दमन करना चाहिये, तिस पीछे घरके शत्रुको शास्ति देनी चाहिये। इस समय उसी विषय पर अधिक लक्ष्य रखना चाहिये, कि जिससे हमलोग सहसा बलहीन न हो जायँ।

इतना सुन चुकनेके पीछे सिराजुद्दौलाने कुछ न कहा। मनकी आग मन में ही रही

दूसरे दिन नवाब अपनी सेना लेकर राघोजी की ओर चले। मरहट्टोंने कभी भी सामने होकर युद्ध नहीं किया था, अब भी नहीं किया। स्वयं अलीवर्दी को ससैन्य आते हुए देख कर, वह लोग भाग गये; युद्धके लिये इतना आयोजन किया गया, परन्तु युद्ध नहीं हुआ।



अठारहवाँ परिच्छेद।


सा ज्ञात होता है, कि विश्राम और शान्तिसुख राजाके भाग्यमें नहीं होता है। राजा युद्ध, विग्रह, विद्रोह, विप्लव के मारे सदैव ही चिन्तित रहता है। दारुण चिन्ता से दिन-रात चिन्ताकुल रहता है। शयन भोजन किसी समय भी स्वस्थचित्त नहीं होता है। सर्वदा गिद्ध की सी दृष्टि चारों ओर रखनी पड़ती है। कौन कहाँ षड़यन्त्र रच रहा है; कौन विद्रोही हो रहा है; कौन किस स्थानपर राज्यके अमङ्गल की चेष्टा कर रहा है।

राजा की अपेक्षा प्रजा सुखी है। प्रजा की शत्रु-संख्या कम होती है। राजाके शत्रु स्थान-स्थान पर उपस्थित हैं। प्रजा कर चुका कर निश्चिन्त चित्तसे अपनी पर्ण-कुटीमें रहती है, शाक-भाजी खाकर स्वच्छन्द विश्राम-सुखसे रहती है, तृणशय्या पर सुखसे सोती है। परन्तु जो राजा है उसको यह प्रजाका सुख कभी एक बार मिलता है कि नहीं, इसमें भी सन्देह है; इसीसे राजा की अपेक्षा प्रजा अधिक सुखी है।

कुछ ही दिन कटे होंगे, कि सम्वाद आया कि अफ़ग़ानोंने

पटना-प्रदेश पर अधिकार कर लिया है। जैनुद्दीन मारा गया है और हाजी अहमद कारागारमें अनाहारके कष्टसे प्राण त्याग रहा है। अमीना बेगम अपने पुत्र और कन्याके साथ अफ़ग़ानों की बन्दी हो रही है।

इस मर्मभेदी सम्वादके प्रथम आघात को नवाव अलीवर्दी सह न सके, वह मूर्च्छित होकर गिरपड़े। चारों ओर हाहाकार मचगया। लोग इधर उधर दौड़-धूप करने लगे। कोई पङ्खा झलने लगा, कोई आँखों और मुख पर जल छिड़कने लगा। हकीम आया, नाड़ी देख कर कहने लगा, "भय नहीं है, तो भी चैतन्यता होने में देर लगेगी।"

हकीमके आश्वासन-वाक्योंसे सबको आशा होगई। भय जाता रहा। किन्तु सबही विषम मुखसे और उत्सुक चित्तसे राह देखने लगे, कि देखें कब तक नवाव को चैतन्यता होती है। इस समय राजप्रासाद मानों जनशून्य था, किसीके मुखसे कोई बात नहीं निकलती थी।

बड़ी देर बाद नवाव को चैतन्य लाभ हुआ। चैतन्य होने पर नवाव भाई और जँवाईके शोक से अधीर हो उठे। कन्या और दौहित्र-दौहित्री की दुर्गतिका स्मरण करके, स्त्रियोंकी तरह उच्च स्वर से रो रो कर कहने लगे, "अरे भाई! हे वत्स जैनुद्दीन! तुम कहाँ गये! तुमने किस तरह से अफ़ग़ानोंके हाथसे जीवन विसर्जन किया! हे वत्स अमीना, तुम्हारे भाग्य में क्या यही बदा था! तुम बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाके

नवाब अलीवर्दी की कन्या होने पर भी अफ़ग़ान-शिविरमें वन्दी होकर अशेष दुःख भोग रही हो! धिक्कार है मेरे राजत्व को! और धिक्कार है मेरे वीरत्वको! धिक्कार है मेरे बाहुबल को! धिक्कार है मेरे जीवित रहने को! मैं बड़ा ही भीरु कापुरुष हूँ, इसी कारण हीनवीर्य्य की तरह चुपचाप बैठा हूँ।" इसी प्रकार नवाब अलीवर्दी शोकरूपी बिच्छूके काटनेसे तड़पने लगे, और शिर पर कराघात करके वारम्बार रोने लगे। उनकी दोनों आखोंसे अश्रुधाराएँ वह चलीं।

नवाब को अनेकोंने अनेक प्रकारसे समझाया, परन्तु किसीके समझाने से कुछ लाभ न हुआ। केवल घोर आर्त्तनाद से आकाश गूँजने लगा, राज्यकार्य्य सब बन्द होगया।

बुद्धिमती नवाब-पत्नी ने देखा कि उपदेश से अथवा प्रबोध-वाक्योंसे नवाबका शोक कम न होगा, वरन् और भी बढ़ेगा,—यह सोच कर उन्होंने एक नई युक्ति नवाबकी सान्त्वनाको निकाली।

एक दिन, सन्ध्याके उपरान्त, नीले आकाशमें पञ्चमीका क्षीण चन्द्रमा चमक रहा था। उसकी क्षीण रजत धाराएँ पृथ्वी पर पड़ रही थीं।

नवाब अलीवर्दी अब दरबारमें नहीं जाते हैं, राज्यका कोई काम नहीं देखते हैं, किसीसे बहुत बातें भी नहीं करते हैं, केवल अन्तःपुरमें शोकमग्न बैठे रहते हैं।

नवाब शयनगृहमें पलँग पर बैठे हैं, पास ही चिन्ताकुल-

चित्त बेगम बैठी हुई हैं; उस घरमें और कोई नहीं है, दोनों चुप-चाप हैं। इसी समय सिराजुद्दौला उस कक्षमें आया। उसको आते देख कर नवाब-पत्नीने उससे बैठने को कहा। सिराजुद्दौलाके बैठ जाने पर बेगमने कहा, "सिराज! आज क्या बात है जो तुम रात्रिके समय अपनी हीरा झीलको छोड़ कर राजप्रासादमें आये हो?"

सिराज—नानीजी! बहुत कुछ कहना है, इसलिये आया हूँ; किन्तु मैं किससे कहूँ, और उसको सुनने वाला ही कौन है?

बेगम—क्यों सिराज! कोई और सुननेवाला न सही, हम तो हैं, कहो क्या चाहते हो?

सिराजुद्दौला ने आँखोंमें आँसू भर कर कहा, "नानीजी! पिता और पितामहने तो अफ़गानों के हाथोंसे प्राणविसर्जन किये; परन्तु मेरी माता, भाई और बहिन जो जीवित हैं, क्या उनका उद्धार करना आप लोगों को अभीष्ट नहीं है?"

इतने दिनोंसे जो सुयोग बेगम ढूँढ़ रही थीं, वही आज मिलगया। उन्होंने कहा, "सिराज! बोलो क्या करें? जो कन्याका उद्धार करने वाले हैं, वह तो तुम्हारे पिता और पितामहके शोकसे अधीर हो रहे हैं! समझाने से समझते नहीं। यदि कोई बात कही जाय तो वह सुनते नहीं। राज्यके सब काम बन्द हैं। यदि कुछ पूछा जाय

तो उत्तर नहीं देते हैं, नहीं मालूम इस तरह पर कैसे काम चलेगा!"

सिराज—नानीजी! तो क्या नानाजी की अफ़ग़ानोंके हाथ से मेरी माता और भाई बहिनों को छुटाने की इच्छा नहीं है?

बेगम—सिराज! मेरे अनुमानमें तो यही बात है; नहीं तो जँवाई और भाई को जिसने मारा है, उसको उचित दण्ड न देकर, शत्रुके हाथ से कन्याका उद्धार न करके, इस प्रकार शोक और दुःखमें निश्चेष्ट क्यों पड़े हुए हैं? वत्स सिराज! तुम अब अपने नानाकी राह मत देखो। चलो, अपनी फ़ौज लेकर अफ़ग़ानों पर आक्रमण करो। अपनी जननी और भाई बहिनों को छुड़ानेके लिये दृढ़व्रत हो जाओ। अब वृथा इनकी अनुमतिके भरोसे मत रहो।

सिराज—ऐसा होनेसे नानाजीके वीर नाममें क्या कलङ्क नहीं लगेगा?

बेगम—वत्स! कलङ्कमें अब शेष ही क्या रहगया है! जो समग्र बङ्गाल-बिहार और उड़ीसाके नवाब हैं, जिनके इशारे मात्रसे दिल्लीका सिंहासन पर्यन्त अधिकारमें आसकता है, वह अपने भाई और जँवाई की हत्याका बदला न लेकर, कन्याके उद्धारका कोई उपाय न करके, चुपचाप बैठे हुए हैं, उनमें वीरत्व अब कहां रह गया है? क्या तुम जानते नहीं हो कि अफ़ग़ानोंके डरसे, शोकका बहाना करके अन्तःपुर में आश्रय लिया है? सिराज! तुम ऐसे भीरुके पास

मत ठहरो, और अनुमति भी मत लो। जाओ, तुम अपनी माता और भाई बहिनका उद्धार करो। पिता और पितामहके घातीको उचित दण्ड दो। वृथा देर करके शत्रुकी स्पर्द्धा न बढ़ाओ।

पत्नीके ऐसे तिरस्कारयुक्त वचन सुन कर, नवाब अलीवर्दी का मोह छूट गया। हृदयाकाश से विषाद-मेघ हट गया। हृदयमें शोकतापके बदले अफ़ग़ानोंके प्रति दारुण क्रोधकी आग जल उठी। दामाद और भाईकी हत्याका बदला लेनेकी इच्छासे व्याकुल होगये। धीरे धीरे कहा, "बस करो; तुमको और अधिक कहने की आवश्यकता नहीं। इतने दिनों तक शोकमें डूबे रहकर, और अफ़ग़ानों को दण्ड न देकर मैंने कापुरुषोंका काम किया है। अब मैं अफ़ग़ानों को और अधिक क्षमा न करूँगा। मैं आज प्रतिज्ञा करके कहता हूँ, कि या तो अफ़ग़ानोंको इस नृशंस हत्याका पूरा बदला लूँगा, नहीं तो समर-सागरमें अपना जीवन विसर्जन करके भाई और जामाताके ही पास जाऊँगा।"

नवाबकी मोह-निद्रा खुल गई, वह दृढ़प्रतिज्ञ हुए। नवाब-पत्नीने भी समझ लिया कि उनकी ही उत्तेजनासे, नवाब अपना शोक और ताप दूर करके प्रकृतिस्थ हुए हैं। यह देख कर बेगमके आनन्दकी सीमा न रही।

उन्नीसवाँ परिच्छेद।

बारेका बहुत बड़ा मैदान है। दोनों पक्षों की सेनाएँ शिविर स्थापन करके युद्ध की राह देख रही हैं। वह विस्तीर्ण मैदान सेनाओंसे प्रायः भरा हुआ है।

जानोजीके आधीन मरहट्टा-फ़ौज आकर पहिले ही से अफ़ग़ानोंसे मिल गई है। इसके लिये अलीवर्दी वृथा देर न करके युद्धके लिये तय्यार होगये। उन्होंने यह भी सोच लिया कि यदि और देर की जायगी, तो सम्भव है कि अफ़ग़ान लोग और भी संख्या बढ़ालें। राघोजी भी आकर मिल सकता है। अलीवर्दीने युद्ध आरम्भ कर दिया।

दोनों पक्षोंकी फ़ौजें अस्त्र-शस्त्रोंसे सुसज्जित होकर मैदानमें आकर खड़ी हो गईं। अलीवर्दीने अपनी सेनाके दो भाग किये। एक भागका सेनापति मीरजाफ़र हुआ; दूसरेका परिचालक हबीबबेग हुआ। अलीवर्दी दोनों दलों के बीचमें रह कर, सेनाको चलाने और शत्रु पर आक्रमण करने लगे। समय समय पर सेनानायकों को युद्ध-कौशल भी बतलाते जाते थे। सिराजुद्दौला नवाबका पृष्ठ-रक्षक बना।

नवाबकी सेनाका सञ्चालन देखकर, अफ़ग़ानोंके हृदयमें आतङ्क उत्पन्न होगया, वह लोग बड़े भयभीत हुए। किन्तु इससे क्या अफ़ग़ान लोग नवाबके गलेमें बिना युद्धके ही जयमाल पहिना देंगे? नहीं, यह नहीं हो सकता है। क्या अफ़ग़ान वीर नहीं हैं? उनकी देहमें क्या वीर-रक्त नहीं बहता है? उनका अस्त्रधारण करना क्या केवल शरीरकी शोभाके लिये ही है? नहीं, कभी नहीं। वह समर-भूमिमें अपना जीवन विसर्जन करनेमें कभी कातर न होंगे। वह ऐसा ही यत्न करेंगे, जिससे इतिहासके पृष्ठों पर उनका नाम गौरव और वीरत्वके साथ सोनेके अक्षरोंमें लिखा जाय। शरीरमें जान रहते, शत्रुकी आधीनता स्वीकार न करेंगे,—यही अफ़ग़ानोंका दृढ़ संकल्प है।

अफ़ग़ानों की भीतरी इच्छा यही है, कि यदि किसी प्रकार जय लाभ करें, तो स्वाधीन हो जावें, और उनमें से ही कोई एक पटनाके सिंहासन पर बैठे, और वह नवाब कहलावे। और यदि जयलक्ष्मी उनकी ओर न फिरना चाहे, यदि उनको स्वाधीनताके प्रयासमें समर-सागरमें प्राण विसर्जन करने पड़ें तो इसमें भी उनकी अक्षय कीर्त्ति और गौरव है।

इसी साहस, उत्साह और आशासे हृदय कड़ा करके, नवाबकी असंख्य सेना देख कर भी, अफ़ग़ान लोग संग्रामसे हटे नहीं। भय पाकर भी रणस्थलको छोड़ा नहीं।

किन्तु मरहट्टोंने जो अफ़ग़ानोंसे मिलना विचारा था, सो उनका आशय कुछ और ही था, अर्थात् नवाब-सेना और अफ़ग़ान लोग परस्पर युद्धमें लगे रहेंगे, तब हम लोग सुयोग पाकर दोनोंके शिविरों को लूटेंगे, यही उनका उद्देश्य था। मरहट्टा जानोजी बड़ा धूर्त्त था। यह बात उसके चित्तमें कभी न आई थी, कि अपनी हानि करके अफ़ग़ानोंकी सहायता करेगा।

युद्धके लिये दोनों पक्ष तैय्यार हैं। रण-क्षेत्रमें दोनों पक्षों की फ़ौजें एक दूसरे के सामने खड़ी हुई हैं, और युद्धकी राह देख रही हैं। सेनाके आगे तोपें लगी हुई हैं, तोपोंके पीछे पैदल सेना है, जिसके हाथमें सङ्गीन चढ़ी हुई बन्दूकें हैं। पैदलोंके पीछे नङ्गी तलवार हाथमें लिये हुए अश्वारोही सेना है। दोनों पक्षोंकी सेना शत्रु-संहारके लिये व्यग्र है। उनकी आँखोंसे बदला लेनेकी अग्नि निकल रही है। उसी अग्निसे ही मानों एक दूसरे को संहार करेंगे।

रण का बाजा बजने लगा। रणके बाजेके भीम गम्भीर नादसे सैनिकोंका हृदय युद्धके लिये और भी उत्साहित हो गया। नवाब की ओरसे एक दमसे बारह तोपें बड़े भीम रव के साथ चारों दिशाओं को कँपाती हुई चलीं।

परन्तु आँधी आनेसे पहिले ही वृक्ष गिर पड़ा, अर्थात् युद्ध आरम्भ होते ही एक गोला जाकर सरदार ख़ाँ के लगा। उस पर्वत भेदी गोलेके आघातसे हतभाग्य सरदार ख़ाँ के

प्राण जाते रहे। उसीके साथ स्वाधीनता की आशा भी समाप्त हुई।

सरदारखाँ के मरते ही, उसकी सेना प्राण-भयसे भागने की इच्छा करने लगी। शमशेरखाँने सरदारखाँको मरा हुआ देख कर, और सेनाको भागनेके लिये उद्यत देख कर; मुस्तफ़ा खाँके ऊपर सेनाका भार अर्पित किया और, छत्रभङ्ग सेना-दल को इकट्ठा करनेके लिये, इधर उधर दौड़ने लगा। नवावने अच्छा अवसर समझ कर, भयभीत पलायनोद्यत सेनाको घेर लिया, और पागलकी भाँति अफ़ग़ान सेनाकी ओर को चल दिये।

अलीवर्दी की तलवारके आघात से बहुत सी सेना कट कट कर गिरने लगी। किन्तु पृष्ठ-रक्षक सिराजुद्दौलाने देखा कि नवाब अपनी सेनाका व्यूह छोड़ कर बहुत दूर आगये हैं। अफ़ग़ान लोग क्रमशः पीछे हटते हटते नवाबको बहुत दूर लिये जा रहे हैं; और एक ओर से मरहट्टा-दल उनपर आक्रमण करनेके लिये बढ़ रहा है। सिराजुद्दौलाने अपने नानाकी भूल और विपक्षियोंका कौशल देखकर अपने नानासे कहा, किन्तु इस समय नवाब रणरङ्गमें उनमत्त थे,उनको कुछ भी दिखाई न देता था, न किसी बातको सुनते थे, केवल अफ़ग़ान-सेना पर तलवार चला रहे थे।

बालक होने पर भी सिराजुद्दौलाने अफ़ग़ानोंका कौशल और मरहट्टा-दल की चतुरता समझ ली। नानाको यह बात

बतलाने पर भी जब कोई उत्तर नहीं मिला, तो वह और विलम्ब न कर सका, और नानाकी अनुमतिकी अपेक्षा न करके, कुछ थोड़ी सी सेना लेकर, स्वयं मरहट्टा दल पर आक्रमण किया। मरहट्टा-दल बाधा पाकर और आगे न बढ़ सका; युद्धमें प्रवृत्त होगया। घोरतर युद्ध होने लगा। अस्त्रों की झनकार, तोपों की भयङ्कर गर्जन, वीरोंकी हुङ्कार-ध्वनिसे रणस्थल परिपूर्ण होगया। दोनों पक्षोंसे केवल मार-मार काट-काटका शब्द सुनाई देता था।

रणोन्मत्त सैनिकोंके पैरोंकी धूल और आग्नेय अस्त्रोंके धुएँके कारण आकाश श्यामवर्ण होगया। दिनमें मानों रात होगई। सूर्य्यदेव एकबारगी ही छिप गये।

देखते देखते दोनों पक्षों की असंख्य सेना गिर कर सदैवके लिये महाशय्या पर सोगई। मरे हुए सैनिकोंसे रणभूमि परिपूर्ण होगई। मनुष्योंके रक्तका सोता बह निकला। रण-भूमिमें कीचड़ हो गयी। स्यार और कुत्ते नर-रक्तके पीनेको एवं नर-मांसके खाने को चारों ओर रणक्षेत्रमें घूमने लगे। गिद्ध और कव्वे मांसाहारी पक्षी आकाशमें उड़ने लगे। पृथ्वी पर पड़े हुए सैनिक करुण स्वरसे "जल जल" कह कर पुकारने लगे। किन्तु इस समय जल कौन देवे? कौन इस समय स्नेहवश होकर, भाई समझ कर, उनकी रक्षा करे? सब लड़ाईमें उन्मत्त हैं। अपने अपने बल विक्रम और वीरत्वके प्रकाश करनेमें प्रवृत्त हैं। दया करने और आत्मीयबन्धु समझने

का समय नहीं है। इस समय वीरोंके हृदयसे दया,माया, स्नेह, ममता सभी विदा हो गये हैं। हृदय वज्र की अपेक्षा अधिक कठिन हो गये हैं ; इसीसे आज मनुष्य, मनुष्य के प्राण संहार करने में कुछ भी संकोच नहीं करता है। मरणोन्मुख सैनिकोंकी करुणा-भरी विलाप-वाणी सुनकर भी हृदय विचलित नहीं होता है। सामने, पीछे, पैरोंके नीचे, चारों ओर मृत्युशय्या पर सोये हुए साथियोंको देखकर भी भीत अथवा दुःखी नहीं होते हैं। केवल 'मार-मार काट-काट' का शब्द ही सुनाई पड़ता है।

सिराजुद्दौलाका लक्ष्य केवल इसी पर था, कि मरहट्टा एक पग भी आगे न बढ़ सकें।

अविराम युद्ध होने लगा। दोनों पक्षोंमें तुमुल संग्राम होने लगा। तोपोंके मुखसे निकले हुए धुएँके पुञ्जसे अन्धकार हो जानेके कारण शत्रु मित्र सब एक से होगये। नवाबकी सुशिक्षित सेनाके आगे अफ़ग़ान-सेना प्रतिक्षण तलवारके आघातसे, बन्दूककी गोलीसे, प्राण छोड़ने लगी।

मरहटोंने देखा कि विपक्षियोंका बल अधिक है, तो पीछे हटे और युद्ध एक प्रकारसे बन्द ही कर दिया। शमशेरख़ाँ अपनी सेनाकी चाल को और अधिक न रोक सका। उसकी सेना नवाबकी सेनाकी तलवार के आघातसे, और बन्दूककी गोलीसे, क्षतविक्षत होकर चारों ओरको भागने लगी। शमशेरखां छत्रभङ्ग सेनाको इकट्ठी करनेको गया और शत्रुके बीच

में फँस गया। इसी बीचमें नवाब के सुदच सेनापति हबीब-बेगने सुयोग पाकर अपने घोड़ेसे कूदकर, शत्रुके हाथी पर चढ़कर विद्रोही शमशेरखाँका सिर काट लिया। शमशेरखाँ-का धड़ हाथी पर से पृथ्वी पर गिर पड़ा।

हबीबबेगने बड़े उत्साहसे शमशेरखाँका काटा हुआ सिर ले जाकर रणोन्मत्त अलीवर्दीके हाथ में प्रदान किया। नवाब, शमशेरखाँका काटा हुआ सिर पाकर आनन्दसे चिल्ला उठे। इतने ही में उनकी सेनाने बड़े ऊँचे स्वरसे गरज कर कहा, "जय! नवाबकी जय!"

और युद्ध नहीं हुआ। शमशेरखाँको मरा हुआ देखकर अफ़ग़ान लोग रण छोड़कर भाग गये। मरहटे पहिले ही से हट गये थे। नवाबने देखा कि युद्धमें जय हुई। प्रधान शत्रु सरदारखाँ, शमशेरखाँ और मुस्तफ़ाखाँ मारे गये। अफ़-ग़ान-सेना प्राणोंके भयसे भाग गई। जानोजीके आधीन मरहटा-सेना रणचेत्र छोड़कर चली गई। बारेका विस्तीर्ण चेत्र शत्रुहीन होगया।

युद्धमें नवाबकी जय हुई। परन्तु सिराजुद्दौलाके बुद्धि-कौशलके विना यह जय-लाभ होता कि नहीं, यह कौन कह सकता है? सिराज यदि नवाबकी पृष्ठरचा करना छोड़ देता, यदि वह मरहटोंके कौशलको न समझता, यदि वह मरहटों पर यथासमय आक्रमण न करता, तो बहुत सम्भव है, कि नवाबको अफ़ग़ानोंसे पराजित होना पड़ता।

बीसवाँ परिच्छेद।

युद्धमें जय लाभ करके नवाब अलीवर्दी कन्या के उद्धारके लिये व्यग्र हो उठे। वह युद्धक्षेत्रमें वृथा अधिक विलम्ब न करके, सेना सहित पटनाको चले गये। वहाँ राजभवनमें प्रवेश करके देखा कि कन्या, दौहित्र, दौहित्री और अन्यान्य रमणी सभी कारागारमें बन्द दीन-हीनकी तरह बड़े कष्टसे बैठी हुई हैं। सभीके हाथ पैर लोहेकी जञ्जीरोंसे बँधे हैं। साधारण कपड़े पहिने हैं। बिना खाये और बिना सोये शरीर जीर्ण-शीर्ण और विवर्ण होरहे हैं। कष्टकी सीमा नहीं, दुर्गतिका पार नहीं। देखते ही अलीवर्दीकी आँखोंसे आंसू निकल पड़े। वह एक वीर पुरुष होनेपर भी स्त्रियोंकी तरह उच्च स्वरसे रोने लगे। नवाब-महिषी भी दुहिताकी दुर्गति देखकर स्थिर न रह सकीं। उन्होंने दौड़कर अमीनाको छातीसे लगा लिया। माँ बेटी दोनों व्याकुल-हृदयसे रोने लगीं। कारागारमें रोने चिल्लानेसे शोर मच गया।

माता-पिता और पुत्र सिराजुद्दौलाको देखकर अमीनाको

पति-शोक याद आ गया। वह हृदयविदारक आर्तनाद और विलाप करने लगी, कि जिससे करुणाके मारे पत्थर भी पिघलता था।

जननी, भ्राता, भगिनी और अन्यान्य रमणियोंकी दुर्गति देखकर इतने दुःखमें भी सिराजुद्दौलाको क्रोध ही आया। वह क्रोधसे उन्मत्त होकर बदला लेनेके लिये उद्यत होगया। उसने कहा, "नानाजी! अफ़ग़ानोंने जिस प्रकार मेरी माता, भगिनी और भ्राताको कारागारमें जंजीरोंसे बांधकर अशेष यातना दी है, उसी तरह आज मैं भी उनके परिवारको अशेष यन्त्रणा देकर उनका जीवन-संहार करूँगा। आज वह मेरे हाथसे किसी प्रकार नहीं बच सकते हैं। इसमें आपकी क्या अनुमति है?"

अलीवर्दीके जवाब देनेसे पहिले ही नवाब-महिषीने कहा, "नहीं सिराज! मैं तुम्हारे इस नृशंस प्रस्ताव का अनुमोदन नहीं करूँगी!"

सिराजुद्दौलाने क्रोधकम्पित स्वरसे कहा, "आपलोग इस प्रस्तावसे क्यों असम्मत होते हैं? मेरी माता, भाई और बहिनको जिन्होंने कारागारमें डालकर अशेष यातना दी है, उनके परिवारको हाथमें पाकर भी क्या बदला न लूँ? क्या आप मुझको नितान्त कापुरुषकी तरह अफ़ग़ानोंके किये हुए अत्याचारको चुपचाप सहनेके लिये कहते हैं? मैं तो कभी इस तरह नहीं कर सकता हूँ।"

बेगम—सिराज! क्या इसीका नाम बदला लेना है? तुम किससे बदला लेनेको उद्यत हो?

सिराज—क्यों, अफ़ग़ानोंके परिवारसे बदला लेना चाहता हूं।

बुद्धिमती नवाब-महिषीने युक्ति दिखलाकर कहा, "सिराज! अकारण क्रोध छोड़ दो। विवेचना करके देखो, इसमें अफ़ग़ानोंके परिवार का क्या दोष है? तुम एकके अपराधमें दूसरेको दण्ड देनेकी इच्छा करते हो? तुम्हारी यह इच्छा नितान्त ही अनुचित है। ऐसी इच्छाको आश्रय देनेसे तुमको जनसमाजमें निन्दनीय होना पड़ेगा। विशेषकर यदि तुम इस अधर्मके काममें प्रवृत्त होगे, तो तुमको परमेश्वरके सामने भी अपराधी बनना पड़ेगा। और भी देखो, कि जिन्होंने तुम्हारी मा, बहिन और भाईको अकारण कष्ट दिया है, दुःख-सागरमें डाल दिया है, पिता और पितामहको बिना दोषके सँहार किया है, उन्हीं निठुर अफ़ग़ानोंने उसका उचित फल पाया है। फिर क्यों प्रतिहिंसाके वश होकर, उनके अनाथ परिवारके ऊपर अत्याचार करनेको उद्यत होते हो? इसमें तुम्हारा क्या पौरुष है? पौरुष तो रण-क्षेत्रमें दिखला चुके हो, वही वास्तविक पौरुष है। जो अबलाके ऊपर अत्याचार करता है, उसके तुल्य निर्बोध, अधम जगत् में और कौन है? सिराज! तुम उच्च वंशमें जन्मे हो, वीरोंकी सी ख्याति पाई है। भविष्यत्में जब तुम बङ्गाल

विहार और उड़ीसाके सिंहासनपर बैठोगे, तब क्या यही अप कीर्त्ति लेकर सिंहासन पर बैठोगे? जो बड़े वंशमें उत्पन्न हुआ है, जो उच्च पदपर बैठेगा, उसीके अनुरूप उच्च हृदयका परिचय दो, जिससे समग्र देश जाने कि सिराजुद्दौला, नवाब अलीवर्दीका उपयुक्त उत्तराधिकारी है।"

इतना सुननेपर सिराजुद्दौलाने फिर कुछ उत्तर नहीं दिया। वह चुपचाप खड़ा खड़ा कुचले हुए साँप की तरह भीतर ही भीतर क्रोधसे जलने लगा।

अलीवर्दी, सिराजुद्दौलाको क्रोधमें भरा हुआ देखकर बोले, "सिराज! तुम क्या हमारे अवाध्य होना चाहते हो? और विशेष करके जिस काममें पौरुष नहीं है, ख्याति नहीं है, उसको करनेसे क्या फल होगा? उन अनाथा, असहाया रमणियोंके ऊपर अयथा अत्याचार करके क्या प्रतिशोधकी प्यास मिटाना चाहते हो? वत्स! यदि हमारी बातोंसे तुम्हारे क्रोधकी शान्ति न हो, तो अपनी मातासे पूछो। तुम्हारी जननी यदि इस कामका अनुमोदन करे, तो हम कुछ न कहेंगे।"

मालूम नहीं, सिराजकी माता अमीना बेगमकी क्या इच्छा थी? किन्तु उसने पिता-माताको असम्मत देखकर कहा, "वत्स सिराज! क्रोध छोड़ दो। मेरे भाग्यमें जो कुछ लिखा था, वही हुआ है। विधिके लिखेको मेटनेकी क्षमता किसमें है? वत्स! जिन दुराचारियोंने मुझको

पतिधनसे वञ्चित किया है, उनको तो उचित दण्ड मिल ही गया है। मैं जिस तरह पति-शोकसे कातर हूँ, उनका परिवार भी उसी तरह शोक-दुःखमें डूब गया है! वैधव्य-यन्त्रणासे बढ़कर नारीके लिये और कोई भी यन्त्रणा नहीं है। वत्स! मेरे अनुरोधसे तुम शान्त हो जाओ, अनाथा अफ़ग़ान-रमणियोंके ऊपर और अत्याचार करना आवश्यक नहीं है।"

सिराजुद्दौलाने किसी बातका उत्तर नहीं दिया, केवल अपनी कमरसे लटकती हुई तलवारको बारम्बार देखने लगा।

इसी तरहकी बातचीत हो रही थी, कि अफ़ग़ान-रमणी दलबद्ध होकर रोती रोती वहाँ आकर उपस्थित हुई। वह सब शोक-दुःखसे अधीर और भयसे काँप रही थीं, और श्रावणके मेघकी तरह अविरल आँसुओंकी धाराएँ कपोलों पर बह रही थीं। उनमेंसे कोई पतिके, कोई पुत्रके, कोई पिताके और कोई भाईके शोकसे उन्मादिनी हो रही थी। वह हाहाकार करती हुई, शिरमें कराघात करते करते, अलीवर्दीके पैरों पर गिरकर करुण स्वरसे कहने लगीं, "नवाब बहादुर! हमलोग आपकी शरण हैं, हमारी रक्षा करो! हम अबला स्त्री-जाति हैं! हमारे पति पुत्रादिकोंने आपके साथ शत्रुता की है, किन्तु इसमें हमारा क्या दोष है? विशेष करके हमलोग आपकी प्रदाश्रिता हैं। आप हमलोगों पर

प्रसन्न होवें।" यह कहकर, सब रमणियां उच्च स्वरसे रोदन करके अनुनय-विनय करके कातरता दिखलाने लगीं।

नारीका चित्त स्वभावसे ही कोमल है, कठिन होनेपर भी कोमल होता है। नवाब-पत्नी वीराङ्गना थीं, इस वीराङ्गनाके हृदयमें भी वीरोचित कठोरताका अभाव न था, किन्तु वह हृदय दया-माया और स्नेह-ममताका आकर था। अफ़ग़ान-महिलाओंके विलाप और कातरतासे उनका करुण हृदय पिघल गया। शत्रु-रमणी होनेपर भी उनके दुःखसे बेगमकी आँखोंमें जल आगया। बोलीं, "अफ़ग़ान-रमणीगण! रोओ मत, कोई भय नहीं है। यद्यपि तुम्हारे पति, पुत्र, पिता और भ्राता इत्यादिने शत्रुता करके हम लोगोंको बड़ी क्षति पहुँचाई है, अनेकोंको धन और प्राणोंसे मारा है, किन्तु उन्होंने अपने किये का उपयुक्त प्रतिफल पा लिया है। उनके अपराधसे हम तुमको किसी प्रकारका कष्ट देना नहीं चाहते हैं। तुम लोग निर्भय होकर जहां जाना चाहो चलो जाओ।"

अफ़ग़ान-महिलायें नवाब-पत्नीको इस दयाको देखकर मन ही मन उनकी प्रशंसा करने लगीं। वास्तवमें नवाब-पत्नी अफ़ग़ान-रमणियोंके लिये हो नहीं, वरं बुद्धि-विवेचना और दया-मायामें सभीके लिये सुख्यातिकी पात्री थीं।

उनके चले जानेपर नवाब-महिषीने कहा, "सिराज! प्रतिहिंसाके वश होकर जिनके ऊपर तुम अत्याचार करनेको उद्यत थे, वही तुम्हारे भयसे तुम्हारी शरण आई हैं। इन

अनाथिनी अफ़ग़ान-रमणियोंके प्रति शत्रुताका आचरण करनेसे तुम, और लोगोंके सामने निन्दनीय और जगदीश्वरके सामने अपराधी होते। वत्स! क्षमा करना सीखो। जगत्में क्षमासे बढ़कर मनुष्यके लिये और कोई गुण नहीं है।"

अमीना—माँ! हमारा सिराज अभी बालक है! बालक की तरल् बुद्धि होती है, अच्छा बुरा कुछ नहीं समझता है।

बेगम—नहीं बेटा! सिराज क्रोधके वशवर्त्ती है, मैं उसको छोटेपनसे देखती हूँ, जिसको पकड़ता है उसको फिर नहीं छोड़ता है। जिसके ऊपर लोगोंका धन, प्राण, कुल मान निर्भर है,वह यदि ऐसा क्रोधके वश हो तो उसका मङ्गल कभी नहीं हो सकता है। यह बात सिराजको समझमें नहीं आती है, शिक्षा देनेसे भी नहीं सीखता है।

अली—अब यह बातें रहने दो। एक मतलबकी बात तुमसे पूछता हूँ, कि अब पटनाका शासन-भार किसको दिया जाय?

बेगम—जब तक सिराजुद्दौला बङ्गाल,बिहार और उड़ीसा के सिंहासन पर न बैठे, तब तक सिराज ही को यहाँ अपने पिताके सिंहासन पर बैठना चाहिये। विशेष करके पटनाके सिंहासन पर जब उसीका पूर्ण अधिकार है, तो और किसीको न देकर सिराजको ही प्रदान करना चाहिये।

अली—यदि पटनाका सिंहासन सिराजको ही देना

चाहती हो, तो क्या तुम उसको अपने पाससे अलग रख सकोगी ?

बेगम—नहीं, नवाब बहादुर ! मैं उसको एक पलके लिये भी आँखों की ओट नहीं रख सकती हूँ ।

अली—तो फिर वह किस तरह पटनाका शासन करेगा ?

सिराज—नानाजी ! मैं अपना पैतृक सिंहासन नहीं छोड़ूँगा, पटनाका शासन-भार मुझको ही देना पड़ेगा ।

नवाबने हँसकर कहा—"तुम पटनाके सिंहासन पर बैठो, हमको इसमें कोई इनकार नहीं है। परन्तु इसमें एक ही अड़चन है, कि तुमको छोड़कर हम न रह सकेंगे।" (थोड़ी देर सोचकर) "अच्छा उसको तुम अपना ही रक्खो, किन्तु यहाँ अपना प्रतिनिधि-स्वरूप एक आदमी रक्खो, जो राजकार्य करता रहे।"

इसके अनन्तर बड़े समारोहसे सिराज पटनाके सिंहासन पर बैठा। सबने जान लिया कि सिराजुद्दौला पटनाका नवाब हुआ।

सिराजुद्दौला पटनाके सिंहासन पर बैठ तो गया; किन्तु राजा जानकीराम नवाब अलीवर्दीका बड़ा विश्वासी और प्रधान मन्त्री था, इसलिये वही उसका प्रतिनिधि हुआ। पटनाका शासन-भार उसको सौंपा गया, सिराजुद्दौला केवल नामका नवाब हुआ।

राजा जानकीरामके ऊपर शासन-भार अर्पण करके, नवाब

अपनी सेना और परिवारको लेकर मुर्शिदाबादको चल दिये। सिराजुद्दौलाने समझा कि यह नवाबका पद जो नानाजीने दिया है, सो लड़कोंका सा खेल किया है। उसको यह अच्छा नहीं लगा, और बड़े विषण्ण चित्तसे राजधानीमें आया।



इक्कीसवाँ परिच्छेद ।



सिराजुद्दौलाके हीरा झीलमें पहुँचने पर लुत्फुन्निसाने हँसकर कहा, "प्रणाम है पटनाके नवाबको।"

सिराजुद्दौलाने उसके गलेमें बाहें डाल कर कहा, "लुत्फुन्निसा! तुमसे यह बात किसने कही?" लुत्फुन्निसाने अति मधुर हँसी हँसकर कहा, "रज़िया बेगमने।"

रज़िया बेगम सिराजुद्दौला की बहिन थी।

कृष्णपक्षके अँधेरे आकाशमें बिजलीकी भाँति लुतफुन्निसाकी मधुर हँसीने सिराजुद्दौलाके विषादपूर्ण हृदयको आलोकित कर दिया, परन्तु वह आलोक आते ही विलीन हो गया। उसने विषण्णभावसे उत्तर दिया, "प्राणाधिके! तुमने जो कुछ सुना है वह सत्य है, परन्तु अब समझमें आता है कि वास्तवमें नहीं, केवल नाममात्रको है।"

लुत्फुन्निसाको यह सुनकर भरोसा नहीं हुआ। वह अपनी स्वाभाविक हँसीसे हँसती हुई बोली, "यदि वास्तवमें

पटनाका राज्य-सिंहासन आपका हुआ है और सब लोग आपको पटनाका नवाब जानते हैं, तो फिर क्या चाहिये ?

सिराज—प्रियतमे ! ऐसी बहुतसी बातें हैं, यह बात क्या तुमने कभी नहीं सुनी है कि जिसका पेड़ है वह फलभोगी नहीं है ? मेरा यह पटनाका सिंहासन-आरोहण और नवाबी पदकी प्राप्ति भी इसी तरहकी है।

यह सुनकर लुत्फुन्निसा कुछ विस्मित होकर बोली, "यह क्या बात है नाथ ! सभी तो जानते हैं, कि जिसका वृक्ष होता है वही उसका फल भोग करता है। आज आपसे मैंने यह नई बात सुनी है।"

सिराज—प्राणाधिके ! यह एक नई बात है। यदि नई होगी तो मैं कहूँगा ही क्यों ? जो सदैवसे चली आती है, यदि वैसी न हो तो लोग उसे नई कहते हैं। मेरी यह सिंहासन-प्राप्ति भी एक नई ही तरहकी है।

लुत्फुन्निसा सिराजुद्दौलाकी यह बात सुनकर और भी विस्मित होकर बोली, "क्यों नाथ ! इसमें नूतनता क्या है ?"

इस बार सिराजुद्दौलाके विषण्ण मुख पर हँसीके चिन्ह दिखाई दिये। वह ईषत् हास्य करके बोला, "प्रियतमे ! इसमें सभी बातें नई हैं। पटनाका नवाब मैं हुआ हूँ, किन्तु राज्य-शासन जानकीराम करेगा। मैं नाम मात्रका नवाब हूँ—नाममात्रका सिंहासनका अधिकारी हूँ।"

अब लुत्फुन्निसाकी समझमें आया। उसने पूछा "यदि

सिंहासन आपका हुआ है, तो शासन-भार जानकीरामको क्यों दिया गया ? क्या आप इसपर स्वीकृत हुए हैं ?"

सिराज—प्राणाधिके ! अपना सुख-ऐश्वर्य कौन अपनी इच्छासे दूसरेको देता है ? जिसने पटनाका सिंहासन मुझको दिया है, उसीने उसका शासन-भार भी जानकीराम को दिया है।

लुत्फुन्निसा—आपने उसमें आपत्ति क्यों नहीं की ?

सिराज—लुत्फुन्निसा ! मैंने बहुत कुछ आपत्ति की, किन्तु नानाजीने मेरी एक बात भी न सुनी।

लुत्फु—न सुननेका क्या कारण है ?

सिराज—उन्होंने कहा कि मुझको वह एक पलको भी दूर करना नहीं चाहते हैं।

लुत्फु—मालूम होता है कि पटनाका राज्यसिंहासन नवाब बहादुर आपको देना नहीं चाहते, केवल अनुरोधमें पड़कर देना पड़ा है, इसीसे नाममात्रको दिया है। यदि वास्तवमें देनेकी इच्छा होती, तो जानकीरामको राज्यभार कभी अर्पण न करते। नवाब बहादुरने आपको प्रेमके भुलावेमें रक्खा है। परन्तु आप उस प्रेमके लोभमें भूलकर शासन-भारको छोड़ आये, यह अच्छा नहीं किया।

सिराज—लुत्फुन्निसा ! क्या करता, केवल नानाजी और नानीके अनुरोधसे ही पटना छोड़ आया हूँ। यद्यपि इस

समय मेरी समझमें आया है, कि नानाजीने मुझे स्नेहके लोभमें भुलावा दिया है; परन्तु मैं किसी तरह भुलावेमें नहीं आऊँगा और उनका कोई भी अनुरोध न सुनूँगा। लुत्फुन्निसा! मैं शपथ खाकर कहता हूँ, कि सुयोग पाते ही पटना पर आक्रमण करके जानकीरामके हाथसे शासन-भार छीन लूँगा। मेरे पैतृक राज्यका शासन जानकीराम करे, शासनका सत्व भी उसीका होवे, और मैं उसके अनुग्रह का पात्र होकर, उसकी दी हुई सामान्य वृत्ति लेकर, सन्तुष्ट हो जाऊँ, यह नहीं होगा।

लुत्फु—तो क्या आप नवाब बहादुरके अवाध्य होना चाहते हैं?

सिराजुद्दौलाने गर्वसे उत्तर दिया, "अवाध्य? स्वार्थरक्षाके लिये यदि अवाध्य होना पड़े तो क्या डर है? परन्तु यह सोचकर, अपना स्वार्थ नष्ट करके, बच्चोंकी तरह लोभमें भूला नहीं रहूँगा। मेरे सामनेसे मेरी खाद्यवस्तु दूसरा लेकर सुखसे भोजन करे, और मैं कापुरुषकी तरह चुपचाप बैठा अपनी आँखोंसे देखा करूँ? जिसकी देहमें वीर रक्त है, हृदयमें तेज है, बाँहोंमें बल है, और तेज़ तलवार जिसकी कमरसे बँधी है, वह अपने मुखका ग्रास दूसरेको नहीं दे सकता है। मैं जानकीराम पर आक्रमण करके पटनाकी शासन-क्षमता उसके हाथसे छीन लूँगा। इससे यदि नानाजी असन्तुष्ट हों तो होते रहें, मुझे अवाध्य समझें तो समझते

रहें, मैं उनकी प्रीतिके लिये अपना निजका स्वार्थ नहीं छोड़ सकूँगा।"

सिराजुद्दौलाकी इस दृढ़ प्रतिज्ञाको सुनकर लुत्फुन्निसा कुछ भयभीत हुई और स्वामीकी इस बुद्धिको परिवर्त्तन करनेके लिये एक युक्ति दिखाकर कहा, "जब आप ही नवाब बहादुरके न रहने पर उनके एकमात्र उत्तराधिकारी हैं, जब कि बङ्गाल-बिहार और उड़ीसाका सिंहासन आप ही का होगा, तो फिर तुच्छ पटनाका सिंहासन लेकर नानाके साथ लड़ाई झगड़ा करना क्या उचित है ?"

सिराज—नहीं लुत्फुन्निसा! भविष्यत्की मुर्शिदाबादकी मसनदकी आशासे, वर्तमान पैतृक सिंहासनको मैं कभी न छोड़ूँगा। जो भविष्यत् सुखके भरोसे पर उपस्थित सुख छोड़ता है, उसके भाग्यमें सुख-भोग है भी कि नहीं, इसमें सन्देह है। भविष्यतकी आशासे मैं पटनाके सिंहासनका अधिकार नहीं छोड़ूँगा। इसके लिये यदि नानाजीका अवाध्य होना पड़े तो होना पड़े, यदि लड़ाई झगड़ा करना पड़ेगा तो करलूँगा, परन्तु अपना स्वार्थ नष्ट करके जानकीराम की कृपा का पात्र बनकर नहीं रहूँगा।

लुत्फुन्निसाने इसके सम्बन्धमें फिर कुछ नहीं कहा। केवल इतना कहा,—"आपकी विवेचनामें जो अच्छा हो वही करना, अबला रमणी कूट राजनीतिको क्या समझे, तोभी दासी यह जानती है कि वह आपका पदाश्रित है।"

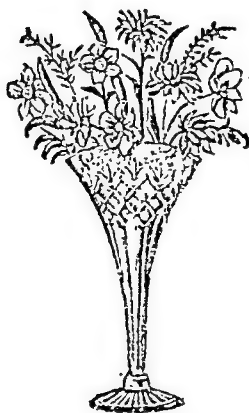
इस बार सिराजुद्दौलाका प्रेम उमड़ आया; उसने बड़े प्रेमसे और आदरसे लुत्फुन्निसाके गुलाबी कपोलोंका चुम्बन करके कहा, "प्राणाधिके! तुम्हारा प्रेम इस जीवनमें कभी न भूलूँगा, जब तक जीवित रहूँगा—सुखमें, दुःखमें, सम्पद्में, विपद्में—तुम्हारे सिवाय सिराजके हृदयमें और कोई स्थान न पावेगा। प्राणेश्वरी! सिराजुद्दौला तुम्हारे ही प्रेमका भिखारी है।"

लुत्फु०—नाथ! यह दासी आप ही की है। आपके सिवाय इस जगत्में मेरा और कोई नहीं है। विपद्में सहाय करनेवाला, शोकमें सान्त्वना देनेवाला, विषादमें समवेदना दिखलानेवाला, आपके अतिरिक्त और कौन है? आपके सिवाय दासी और कुछ नहीं जानती है। दासी आपके सुखमें सुखी और दुःखमें दुखी है। आप पर विपद् पड़नेपर दासीपर भी विपद् है, आपकी सम्पद्में दासीकी भी सम्पद् है। नाथ! इतना देखे रहना कि चरण-सेवासे यह दासी वञ्चित न होजाय और सदैवके लिये संगिनी बनी रहे।

कहते कहते लुत्फुन्निसा अपने पूर्व-जीवन और वर्तमान अवस्थाका स्मरण करके हर्ष और विषादसे रोने लगी। कानों तक विस्तृत नयन-कमलोंसे मोती बहने लगे। यह दृश्य प्रेमिककी आँखोंके लिये कैसा सुन्दर है! सिराज थोड़ी देरके लिये अपने आपको भूल गया, और लुत्फुन्निसाकी आँखोंका जल पोंछ कर सान्त्वनाके वाक्योंमें कहने लगा,

"लुत्फुन्निसा! प्राणाधिके! यह बात क्यों कहती हो? तुम जो सिराजुद्दौलाके जीवनमें मिल गई हो, तो अब सिराजमें शक्ति नहीं है कि तुमको त्याग कर सके। आहा! मैंने बड़े कष्टसे इस रत्नको पाया है!"

कहते कहते दोनों ही दोनोंके प्रेममें विह्वल होगये। एक दूसरेके गलेमें बाहें डालकर प्रेमकी सुख-माधुरी भोग करने लगे। वह सुख, वह माधुरी, भाषाके द्वारा कही नहीं जा सकती है। वही जान सकता है, जिसने उसको कभी भोगा है।



बाईसवाँ परिच्छेद।

सोनेमें सुहागा मिल गया। सिराजुद्दौला इतने दिनोंसे जिस सुयोगको ढूँढ़ रहा था, वह मिल गया। दूतने आकर नवाब अलीवर्दीको सम्वाद दिया कि मरहटोंने फिर अत्याचार उपद्रव आरम्भ कर दिया है, प्रजावर्गमें हाहाकार मच रहा है। अलीवर्दीने और विलम्ब नहीं किया। अपनी सेना लेकर मेदिनीपुरको चल पड़े। बेगम भी साथ चलीं, किन्तु इस बार दौहित्रको साथ नहीं लिया।

इस बार सिराजने बीमारीका बहाना कर दिया। मन ही मन वह कुछ और ही सोच रहा था। उसने पटना का शासन-भार जानकीरामके हाथसे अपने हाथमें लेनेके लिये मेंहदी निसार खाँ से परामर्श किया।

मेंहदी निसार खाँ सिराजके बड़े भरोसेका सेनापति था। सिराजने उससे अपने मनकी बात कह डाली। निसार खाँने भी उसको आशा देकर उत्साहित किया और चुपके-चुपके सेना संग्रह करने लगा।

बन्दोबस्त ठीक होगया। सिराजने देश-भ्रमणके मिस

मुर्शिदाबाद छोड़ दिया। शरीर-रक्षक के स्वरूप में निसार-खाँ भी तीन हज़ार सेना लेकर साथ हुआ। नाना अथवा नानी राजधानी में नहीं हैं, सुतरां देश-भ्रमणके लिये इतनी सेना लेजानेमें बाधा डालनेवाला कौन था? जगत्सेठ महतावचन्द इत्यादि जो लोग थे, वह सभी उसकी हठी प्रकृति को जानते थे। उन लोगोंने एक बात तकके पूछने का साहस नहीं किया। सिराजका हृदय आशा और उत्साह से परिपूर्ण था, वह बड़े उत्साह से पटना की ओर चला। सबने जाना कि वह देश-भ्रमण के लिये बाहर निकला है, परन्तु उसके मनकी बात किसी को समझ में न आई।

न समझ सकने का एक और भी कारण था, कि इतनी सेना साथ लेजानेमें मन्त्री अथवा और राजपुरुष कुछ सन्देह करें, इसलिये उसने चतुरता करके बेगम लुत्फुन्निसा को भी अपने साथ ले लिया। सिराज अनेक बार नानाके साथ युद्धमें गया था, नवाब-महिषी भी प्रति बार नवाबके साथ रहती थीं; किन्तु सिराजुद्दौला कभी भी लुत्फुन्निसा को साथ नहीं ले गया था, इस बार लुत्फुन्निसा को लेजाते देखकर किसी को भी सन्देह नहीं हुआ।

पटना पहुँचतेही सिराजने अपना छद्मवेश छोड़ दिया, और राजप्रासादके भीतर प्रवेश करनेसे पहले ही, एक पत्र लिखकर जानकीरामके पास दूत भेजा। पत्र नीचे लिखे अनुसार था:—

"जानकीराम!

"पटनाका राज्य और राजसिंहासन मेरा है; मैं ही पटना का नवाब हूँ, तुम मेरे प्रतिनिधिमात्र हो, इतने दिनों तक मैंने अपने राज्यसे कोई सम्बन्ध न रक्खा सही, परन्तु अब मैं अपने स्वार्थको पददलित करनेके लिये प्रस्तुत नहीं हूँ। मैं पटनाका वास्तविक नवाब हूँ। सुतरां, मैं केवल महीनेके महीने वेतन लेकर सदैवके लिये अपना अधिकार तुम्हारे लिये छोड़ दूँ, ऐसी आशा मत करो। अभी तक जो मैंने अपने स्वार्थकी ओर ध्यान नहीं दिया है, सो केवल नानाजीके कारण। परन्तु अब उनके प्रसन्न रखने के लिये मैं अपने सुख-ऐश्वर्य और पदप्रतिष्ठा को नष्ट नहीं करूँगा। इस समय तुम मेरा राज्य मुझको दोगे कि नहीं? यदि न दोगे तो मेरा तुम्हारा युद्ध होगा। वीर की महिमा मैं अच्छी तरह जानता हूँ। युद्धमें मैं निरस्त न रहूँगा।

"तुमने इतने दिनों तक जो प्रतिनिधि रूपसे पटनाका शासन करके धनसञ्चय किया है, वह मैं नहीं चाहता हूँ। मेरी इच्छा केवल यही है, कि मैं अपने राज्यका आप ही शासन करूँ। अतएव मेरा पत्र पढ़ते ही पटनाका शासन-भार मेरे हाथमें देकर, अपना धन-रत्न लेकर चले जाओ; नहीं तो मेरी सेना युद्धके लिये प्रस्तुत है। तुम्हारा अभिप्राय क्या है, इसीके जानने के लिये मैंने अभी तक राजप्रासाद पर आक्रमण नहीं किया है। अतएव शीघ्र और कुछ न करके अच्छी तरह सोच

समझ कर, अपना कर्त्तव्य स्थिर करलो । समरानल प्रज्वलित होने पर शीघ्र ठण्डी न होगी। उस समय मैं तुमको किसी तरह क्षमा न करूँगा, तुम्हारा सञ्चित धन भी तुमको न लेने दूँगा और तुम्हारी मुक्तिकी आशा भी न रहेगी। इति

नवाब मन्सूरुल मुल्क सिराजुद्दौला शाहकुलीखाँ
मिरज़ा मुहम्मद हैबतजंग बहादुर।"

सिराजुद्दौलाका यह पत्र पढ़ कर, राजा जानकीरामका सिर चकरा गया। उसको इस समय क्या करना चाहिये, कौनसा पथ अवलम्बन करनेसे सब काम ठीक होंगे, इसका कुछ निर्णय वह न कर सका। यदि पटनाका शासन-भार सहज ही में सिराजुद्दौलाके हाथमें दे देवे, तो अन्तमें नवाब अली-वर्दी उसके ऊपर दोष रख सकते हैं, और यदि सिराजुद्दौला के आदेश की अवहेलना करे तो बहुत सम्भव है कि चञ्चल-मति सिराज युद्ध आरम्भ कर दे; जिससे उसका और राज्य दोनों ही का अनिष्ट सम्भव है। विशेष करके सिराजुद्दौलाका जैसा उद्धत स्वभाव है, उससे विवाद होजाना निश्चय है।

राजा जानकीरामने बहुत कुछ सोचा विचारा, अन्तमें यही उचित मालूम हुआ कि नवाब की अनुमतिके बिना सिराजुद्दौलाके हाथमें पटनाका शासन-भार न देना ही युक्ति-सङ्गत है। उसने तत्क्षण एक लम्बा चौड़ा पत्र लिखकर, उसीमें सिराजुद्दौलाका पत्र रख कर, एक दूत नवाबके पास भेज दिया।

राजा जानकीरामके हाथमें पटनाका शासन-भार रहने पर भी, उसकी ऐसी इच्छा न थी कि वह स्वाधीन हो जाय। वह नवाब अलीवर्दी का विश्वस्त मन्त्री और उनका एक विशेष मङ्गलाकाङ्क्षी था। लड़ाई झगड़ा उसके स्वभावमें नहीं था। इसलिये उसने बड़ी खुशामदसे सिराजुद्दौला से कहला भेजा, कि, "मैं आपका प्रतिनिधि अवश्य हूँ और पटनाके सिंहासन पर मेरा कुछ भी अधिकार नहीं है; परन्तु फिर भी नवाब बहादुरने मुझको विश्वासी और अनुगत समझकर मेरे हाथमें पटनाका शासन-भार अर्पण किया है, आपका वेतन मैंने नियत नहीं किया है, जो कुछ नवाब बहादुरने नियत कर दिया है, वही मैं देता चला जाता हूँ। अभी तक उसमें मैंने कोई परि-वर्त्तन नहीं किया है। परिवर्त्तन करने की मुझमें क्षमता भी नहीं है, मेरे हाथमें पटनाका शासन-भार होने पर भी मैं नवाब बहादुरका एक भृत्यमात्र हूँ। भृत्य होकर प्रभु की अवहेला नहीं कर सकता हूँ। वास्तवमें आप ही पटनाके नवाब हैं, राज्य और राजसिंहासन आपका पैतृक धन है, और मैं आपका प्रतिनिधि मात्र हूँ, यह सब बातें मैं बहुत अच्छी तरह जानता हूँ; किन्तु जब कि नवाब साहबने मुझको प्रतिनिधि नियुक्त किया है, और शासन-भार मेरे हाथमें दिया है, तो ऐसी अवस्थामें नवाब बहादुरकी अनुमतिके बिना वह भार मैं आपके हाथमें किस प्रकार अर्पण कर सकता हूँ? भृत्य होकर प्रभु की अनुमति बिना कोई काम करने की मुझमें क्षमता

नहीं है । आप कृपा करके कुछ दिन ठहर जायँ, मैंने नवाब बहादुरका अभिप्राय जानने के लिये दूत भेजा है । उनकी अनुमति आते ही, उसी क्षणमें पटनाका शासन-भार आपके हाथमें दे दूँगा, किन्तु जब तक दूत न लौटे तब तक आप मुझको क्षमा करें।"

राजा जानकीरामने दूतद्वारा बहुत कुछ अनुनय-विनय की बातें सिराजुद्दौलाको कहला भेजीं, और पीछेसे सम्भव है कि सिराजुद्दौला नवाबके उत्तर की प्रतीक्षा न करके राजप्रासाद पर अधिकार करले, इस भयसे उसने दुर्गका द्वार बन्द कर लिया।

सिराजुद्दौलाको विश्वास था कि जानकीराम उसका आगमन सुनकर और पत्र पढ़ कर, बिना आपत्तिके पटनाका शासन-भार छोड़ देगा। परन्तु जब उसने देखा कि उसका विश्वास भ्रमात्मक था, तो क्रोधके मारे जलने लगा। उसकी उस समय की रौद्रमूर्त्ति देखकर सेनाने समझ लिया कि युद्ध अवश्यम्भावी है। लुत्फुन्निसा डर गई। दास दासी सभी भयभीत हो गये।

लुत्फुन्निसाने दरिद्रके घरमें जन्म लिया था; परन्तु उसकी बुद्धि, चित्तकी दृढ़ता और हिताहित-ज्ञान असाधारण था। उच्च वंशमें जन्म लेनेसे, उच्च सहवाससे, सर्वदा सदुपदेश और सुशिक्षा पानेसे रुचि की प्रकृति जिस तरह मार्जित और उन्नत हो जाती है, लुत्फुन्निसा की भी वैसी ही थी।

अपने हृदयके गुणसे गर्वित, स्पर्द्धी और घोर आत्माभिमानी सिराजके हृदयके ऊपर उसने अधिकार पा लिया था।

सिराजुद्दौलाको क्रोधसे पागल देखकर लुत्फुन्निसाने विनय वचनों में कहा, "नाथ! मेरी विनती सुनो, रोष छोड़ दो। इस समय जैसी अवस्था देख रही हूँ, उससे एक प्रकारकी प्रलय हो जायगी। क्रोधके वशीभूत होकर युद्ध करनेसे निरर्थक लोगोंका क्षय होगा; प्रभुको क्या भृत्यके साथ युद्ध करना शोभा देता है? विशेष करके जब नवाब बहादुर वर्त्तमान हैं, तो उनसे न पूछ कर युद्ध करना उचित नहीं है। शान्त हूजिये, और जब तक नवाब बहादुरका कोई सम्वाद न आजावे तब तक ठहर जाइये।"

इसी तरह पर लुत्फुन्निसाने सिराजुद्दौला को बहुत कुछ समझाया-बुझाया, पैरों पर गिरकर बहुत कुछ अनुनय-विनय की, किन्तु किसीसे कुछ नहीं हुआ। जानकीरामने भृत्य होकर उसकी स्त्रीके सामने उसके आदेश की अवहेलना की है, राजप्रासादमें जाने न देकर दुर्ग-द्वार बन्द कर दिया है, इस अपमानके मारे वह जर्ज्जरित होगया, उसके मर्ममें आघात लगा। प्राणाधिका प्रियतमा लुत्फुन्निसाका अनुरोध भी कुछ न कर सका। जानकीरामके दुर्व्यवहारका बदला लेनेके लिये उसने दृढ़ प्रतिज्ञा करली। उसने कहा, "लुत्फुन्निसा! तुम इस विषयमें मुझसे कोई अनुरोध मत करो। इस मामले में, मैं तुम्हारे अनुरोधकी रक्षा करने में अक्षम हूँ। देखो,

जानकीराम मेरा ही प्रतिनिधि है, किन्तु नवाब की अनुमतिके बिना पटनाका शासन-भार छोड़ने में असम्मत है। अतएव मैं अपना राज्य अपने ही बाहुबलसे अधिकारमें लाऊँगा। नवाबकी अनुमति का रास्ता नहीं देखूँगा। भृत्य होकर जो प्रभुका अपमान करे, आज्ञा न मानकर अपनी स्वाधीनता दिखलाना चाहे, उसको क्षमा न करना चाहिये। जानकीराम कौन है? बिहारका नवाब तो मैं हूँ। मुझको राज्यमें उप-स्थित जानकर उसने कौन साहस से दुर्गका द्वार बन्द कर दिया? लुत्फुन्निसा! यदि मैं तुम्हारी बात मानकर तुम्हारे अनुरोधसे जानकीरामको इस धृष्टताको क्षमा करूँ, और अपने बाहुबलसे क़िलेको अधिकारमें न लाऊँ, जानकीरामके हाथसे शासन भार न छीन लूँ, तो सभी लोग इसी तरहसे आज्ञाकी अवहेलना करेंगे, हीनवीर्य्य और कापुरुष समझेंगे। जो लोग मेरे नामसे डर जाते हैं, वह बात सदैवके लिये जाती रहेगी। मेरी राज-शक्ति,प्रभुता एकबारगी डूब जायगी। मालूम होता है, कि इसतरह करने से फिर मैं कभी राज्यशासन न कर सकूँगा। नहीं, नहीं, भृत्यकी यह उपेक्षा और अपमान मैं कभी भी न सहूँगा। इस समय अपने बाहुबलसे पटनाका सिंहासन अपने अधिकारमें करूँगा। इससे यदि नवाब असन्तुष्ट होजायँ, तो मेरे पास इसका कुछ उपाय नहीं है।

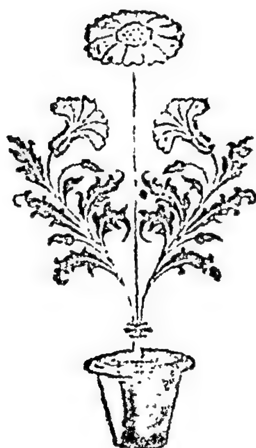
सिराजुद्दौला किसी तरह माननेवाला नहीं है। जानकी-

रामकी बातों को जितनी आलोचना करता था, उतना ही उसका क्रोधानल प्रबल होता जाता था। जब वह अपने हृदयवेग को रोक न सका,तो सेनाको लेकर क़िलेके तोरणद्वार पर पहुँचा और दुर्ग अधिकार करने की इच्छासे द्वार पर गोला मारनेका आदेश दिया।

सिराज तो युद्धके लिये प्रस्तुत है, परन्तु उसके साथ युद्ध करेगा कौन? राजा जानकीराम को तो लड़ना अभीष्ट ही नहीं है। नवाब अलोवर्दीने उसको विश्वासी समझकर प्रतिनिधि-रूपमें शासन-भार अर्पण किया है। इसलिये उसको वही काम करने होंगे, जिनसे उसका विश्वास अचल और अटूट बना रहे। नवाबकी आज्ञा बिना अपनी इच्छासे पटना का शासन-भार किसीको देदे, यह अधिकार, यह स्वाधीनता उसको नहीं है; यही सब बातें सोच समझ कर वह सिराजुद्दौलाकी इच्छानुसार काम करनेमें अक्षम हुआ; किन्तु इसके लिये वह लड़ेगा क्यों?

जब सिराजुद्दौलासे युद्ध न हुआ, तो उसने दुर्गका द्वार तोड़ने के लिये अजस्र गोला वर्षण करना आरम्भ किया, परन्तु इससे कुछ भी न हुआ, द्वार नहीं टूटा। गोला बारूद जो कुछ साथमें लाया था, सब चुक गया। जिसके उत्साहसे उत्साहित होकर वह पटना आया था, वही प्रधान सेनापति और उत्साहदाता मेंहदी निसार ख़ाँ अपनी ही असावधानतासे अपने ही गोले की चोट से मर गया। सिराजुद्दौलाका आशा

भरोसा सभी जाता रहा। उसने सेनाको दुर्गद्वार अवरोध करनेका आदेश देकर, रोष और क्षोभसे जर्ज्जरित होकर, लुतफुन्निसाको लेकर एक सामान्य पर्णकुटीमें आश्रय लिया।



तेईसवाँ परिच्छेद।

थी समय दूत मेदिनीपुर पहुँचा और नवाब अलीवर्दीको जानकीरामका पत्र प्रदान किया। नवाब पत्र पढ़कर बड़े चिन्ताकुल हुए। यद्यपि सिराजुद्दौलाने जानकीरामको बड़े उद्धतभावसे पत्र लिखा था, किन्तु नवाब पत्र पढ़कर स्नेहकी पुतली सिराजुद्दौला पर कुछ असन्तुष्ट न हुए। अबाध्यताके लिये भी किसी प्रकारका क्रोध उदय नहीं हुआ। वरं युद्ध विग्रहमें सिराजका कोई अमङ्गल न हो, इस आशङ्का से वह अस्थिर हो उठे। अब उनको मरहट्टों का दमन अच्छा नहीं लगता था। प्रजाका रोना उनके ऊपर कुछ भी असर न करता था। राज्यकी शान्ति-कामनामें मन न लगता था। सब जैसा का तैसा पड़ा रहा। उन्होंने पत्र पढ़ते ही बेगमको साथ लेकर और कुछ शरीर-रक्षकों के साथ पटना को यात्रा की।

पटना पहुँचकर हाथी से उतरने के पहिले ही नवाबने सिराजुद्दौला का समाचार पूछा। जब जान लिया कि वह

अच्छी तरह है और अक्षत शरीर से है, और युद्ध भी नहीं हुआ है, तब वह निश्चिन्त हुए और भय दूर हुआ; किन्तु स्नेहाधार दौहित्र का देखने के लिये व्याकुल हो गये और अनुचर द्वारा उसको बुला भेजा।

नानाको आया हुआ सुनकर सिराज की प्रतिज्ञा न मालूम कहां गई। वह अकेला निरस्त्र नवाबके निकट चला गया और पैरोंपर गिरकर पैरोंका चुम्बन किया। अलीवर्दी भी स्नेहकी पुतली सिराजुद्दौला को अक्षत-शरीर पाकर आनन्द से अधीर हो गये। बड़े प्रेमसे उसको गोदमें बैठा लिया और स्नेहसे वारम्वार उसका मुख चुम्बन करने लगे। आंखोंसे आनन्दाश्रु निकलने लगे। सिराजुद्दौला भी नाना और नानी को देखकर रोने लगा। आंखोंके जलसे उसका वक्षस्थल भीगने लगा। एक ओर आनन्दाश्रु थे, दूसरी ओर विषादाश्रु थे। दोनों की आंसुओं की धारासे दोनोंका मनोभाव एक हो गया। एक ओर स्नेह और प्रेम, दूसरी ओर श्रद्धा-भक्ति प्रबल हो उठी।

आनन्द के कारण नवाब की वाक्शक्ति मन्द होगई और अभिमान से सिराजुद्दौला का कण्ठ रुद्ध होगया। दोनों उस समय चुपचाप थे।

नवाब-महिषी इस निस्तब्धता को भंग करके बोली—"नवाब बहादुर! आप सिराज को पाकर केवल आनन्द उपभोग कर रहे हैं, किन्तु देखते नहीं हैं, कि सिराज केवल

अभिमान के अश्रु विसर्जन कर रहा है। पहिले सिराजकी सान्त्वना कीजिये, फिर आनन्द कीजियेगा।"

बेगमकी बात सुनकर नवाब की निद्रा भंग हुई, उन्होंने अपने अँगरखे से सिराज के आँसू पोंछकर कहा,—"सिराज! शान्त होओ, रोओ मत। तुम बङ्गाल-विहार और उड़ीसा के भावी नवाब हो! आँखोंसे जल निकाल कर अमंगल-सूचना मत करो।"

सिराजुद्दौला बड़ा अभिमानी था। सामान्य सान्त्वना से उसको क्या होगा? हृदय के भीतर जो अग्नि है, वह सहज बुझनेवाली नहीं है, इसीसे नवाब की सान्त्वना का कुछ फल नहीं हुआ।

अलीवर्दी ने व्यग्र होकर पूछा, "सिराज! रोते क्यों हो भाई? कहो क्या हुआ? मनकी बात न कहनेसे मैं किस प्रकार समझ सकता हूँ?"

बड़े कष्टसे सिराजुद्दौला का कण्ठ खुला। उसने कहा, "होनेमें और शेष ही क्या रह गया है? जिस अपमान की कभी कल्पना भी नहीं की थी, वह अपमान मेरे भाग्यमें आया। जो भृत्य प्रभुका अपमान करे, उससे बढ़कर और क्या अपमान हो सकता है? आप जितना मुझको चाहते हैं, वह मुझे भली प्रकार ज्ञात है। आपको और अधिक स्नेह दिखाने की आवश्यकता नहीं है, अबमें आपके प्रलोभनमें मुग्ध न होऊँगा। आपकी सब बातें मौखिक ही हैं।"

अलीवर्दी—सिराज! आज तुम यह बातें क्यों कह रहे हो? मैंने तुम्हारे साथ कौनसा मौखिक आचरण किया है?

अभिमानके दारुण विषसे सिराजुद्दौला का सब शरीर जल रहा था, वह उस ज्वालाको सह न सका। आत्म-सम्बरणमें असमर्थ होकर बोला, "मेरे लिये आपका जो काम है, वह सब मौखिक है। नहीं तो पटना का सिंहासन मुझको देकर, शासन-भार जानकीराम के हाथमें क्यों अर्पण किया? सिंहासन मैंने किस लिये पाया, और शासन-कार्य्यसे क्यों वञ्चित रहा? जानकीराम मेरा प्रतिनिधि होनेपर भी, मेरा राज्य, मेरा राजप्रासाद, मेरा राज-कोष मुझको प्रदान करनेमें क्यों असम्मत है? और किस कारणसे मुझको दुर्गमें नहीं जाने दिया और द्वार बन्द कर लिया? यदि आप मुझको भीतरसे चाहते, तो पटना के सिंहासन पर मुझे बैठाकर फिर उसे क्यों ले लेते? मुखमें आहार देकर फिर छीन लेना, क्या यही आपका स्नेह है? मैं नितान्त ही अबोध हूँ, इसी से इतने दिनों तक आपके स्नेहके धोखेमें भूला रहा। अब मैं आपके कृत्रिम प्रेममें न भूलूँगा, और आपकी कोई बात न सुनूँगा। यदि पटना का शासन-भार मुझको देदें तो अच्छा है, नहीं तो आज आपके सामने ही मैं अपने प्राण विसर्जन करता हूँ।"

अलीवर्दी इस बातको सुनकर कुछ हँसे और बोले, "सिराज! तुम यदि राज्यशासनमें समर्थ होओ, तो केवल

पटना ही का राज्य, क्यों, मैं तुमको बंगाल-विहार और उड़ीसा का शासनभार प्रदान कर सकता हूँ। भाई सिराज! क्या तुम समझते हो कि राज्य-शासन एक सामान्य काम है? जिसने कभी भी राज्य-शासनका गुरुभार अपने मस्तक पर लिया है, वही जानता है कि इसका गुरुत्व कितना अधिक है, इस काममें शान्ति नहीं है, चिन्ताको विराम नहीं है, उत्कण्ठाकी भी सीमा नहीं है। लोग समझते हैं कि राजा कितना सुखी है। किन्तु सामान्य दरिद्र प्रजा जो सुखभोग करती है, उसके सहस्रांशका सहस्रांश भी ससागरा-धराके अधीश्वरों को नहीं मिलता है। भाई! तुम्हारी इस समय किशोर अवस्था है, आमोद-प्रमोद का समय है। इस नवीन वयसमें तुम्हारे कन्धोंपर राज्यका गुरुभार इसीलिये नहीं रक्खा है, कि पीछे तुम बोझ न उठा सको और विरक्त हो जाओ। किन्तु जब तुम उसको सामान्य समझकर उठानेके अभिलाषी हो, तो राज्य-आकांक्षासे जीवन विसर्जन क्यों करते हो? आज ही मैं तुमको बंगाल-बिहार और उड़ीसा का युवराज करता हूँ।"

इधर नवाब का आगमन-सम्वाद सुनकर राजा जानकीरामने दुर्ग का द्वार खोलने का आदेश दिया और स्वयं नवाब के पास आया।

किलेका द्वार खुला हुआ पाकर सिराजकी सेना महा आनन्द से, बड़ा कोलाहल करती हुई, किलेमें घुसी।

सिराजुद्दौलाने सेनाको किलेमें उपद्रव करने के लिये निषेध कर दिया। किन्तु उसने राजा जानकीराम को ज्योंही देखा, त्योंही मानों आगमें घीकी तरह क्रोधसे जल उठा और तर्जन-गर्जन के साथ कहा,—"रे जम्बुक! आश्रयदाता को देखकर गुफासे बाहर निकला है?"

इस बात पर विरक्त होकर अलीवर्दीने कहा, "छिः छिः सिराज! क्या तुम पागल हो गये हो? किसके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिये, किसके साथ कैसी बात करनी चाहिये, क्या तुम यह भी भूल गये हो? बूढ़े राजा जानकीराम पर अकारण क्यों क्रुद्ध होते हो? बतलाओ तो, जानकीराम का क्या अपराध है?"

सिराज—सब अपराध जानकीराम का ही है। मेरा प्रतिनिधि होकर, जब यह मेरे राज्यको मुझको देनेमें सम्मत नहीं हुआ, तो इसका नहीं तो और किसका दोष है? क्या मेरा दोष है? पटना जानकीराम का पैतृक राज्य तो नहीं है?

सिराजुद्दौला को क्रोधमें उन्मत्त देखकर बूढ़े जानकीराम भीतर ही भीतर बड़े भयभीत हुए। उनके मुखसे न बात निकलती थी, न आँखोंके पलक झपकते थे। वह मन ही मन विपद्भञ्जन मधुसूदन को याद करने लगे।

अली—सिराज! तुम जानकीराम को अकारण दोषी क्यों बनाते हो? यद्यपि जानकीराम तुम्हारा प्रतिनिधि है, किन्तु

जब कि मैंने उसके हाथमें पटना का शासन-भार अर्पण किया है, तो मेरी अनुमति बिना वह किस प्रकार उस भार को तुम्हारे हाथमें दे सकता है ? ऐसा करनेसे उसको राजाज्ञा उल्लङ्घन करनी पड़ती। उसने ऐसा न करके अपना कर्त्तव्य ही पालन किया है। विशेष करके यह भी दिखलाया है, कि भृत्यको प्रभुकी आज्ञा किस भावसे पालन करनी चाहिये। सिराज! तुम हठको छोड़कर न्याय-चक्षुसे देखो, कि यदि तुम अपने किसी भृत्यको कोई भारी काम सौंपो, और यदि वह तुम्हारे आदेशका उल्लङ्घन करे, तो तुम उससे सन्तुष्ट होगे कि असन्तुष्ट होगे।

सिराज—इस बातको मैं स्वीकार करता हूँ, कि आपकी अनुमति बिना पटना का शासन-भार वह नहीं दे सकता था परन्तु उसने मुझको किलेके भीतर क्यों नहीं आने दिया; जिसके कारण मुझको एक सामान्य पर्णकुटीमें ठहरना पड़ा। क्या इसमें भी जानकीराम दोषी नहीं है ?

अली—हाँ, इसमें जानकीराम का अन्याय अवश्य है। उसको उचित था, कि आगमन का सम्वाद पाते ही तुम्हारी अभ्यर्थना करके आदरके साथ राजप्रासादमें स्थान देता।

राजा जानकीराम भयकम्पित स्वरसे बोले, "नवाब बहादुर! यदि आप सूक्ष्मरूपसे विचार करेंगे, तो मालूम हो जायगा कि इसमें भी मैं सम्पूर्णरूपसे निर्दोष हूँ। राज-

कुमारने जो पत्र मुझको लिखा था, उसको पढ़कर कौनसे साहससे मैं उनको राजप्रासादमें स्थान देता? यदि उस समय मैं राजकुमारको किलेके भीतर स्थान देता, तो क्या वह मेरे हाथसे पटना का शासनभार न छीन लेते? और तब क्या मुझसे नवाब बहादुर की आज्ञाके उल्लङ्घन का अपराध न होता? प्रभुके सामने भृत्य पद-पद पर अपराधी है। मैंने राजसम्मानका तनिक भी अपव्यवहार नहीं किया है। यद्यपि भयके कारण राजकुमारको किलेके भीतर आने देनेका साहसी नहीं हुआ हूं, परन्तु जिससे उनको किसी तरहका कष्ट न होने पावे, यथासाध्य उसी तरह की चेष्टा की गई है। उनका और उनके सैनिकों का वासस्थान और खाने पीने का सामान सभी मैंने इकट्ठा करा दिया है। कुमारने उनमें से उपेक्षा करके किसीको भी ग्रहण नहीं किया।"

नवाब—सिराज! जो कुछ होना था हो गया, गये हुए का सोच करना वृथा है। वृद्ध जानकीराम प्रभु-परायण है, विश्वासी है और हमारा मङ्गलाकांक्षी है। ऐसे अनुगत पर रुष्ट होना प्रभुको उचित नहीं है। विशेषकर जब मैं तुमको पटना के सिंहासन के बदले बङ्गाल, विहार और उड़ीसा के युवराज-पदपर अभिषिक्त करता हूँ, तब वृथा जानकीराम के प्रति कोप क्यों प्रकाश करते हो? चलो, आज सबके सामने तुमको युवराज बनाऊँगा।

नवाब अलीवर्दी ने राजा जानकीराम को पटना के किलेमें दरबारके आयोजन का आदेश दिया और उस प्रदेशके राजा महाराजा और ज़मीन्दार इत्यादि गण्य-मान्य लोगों को बुलाने को कह दिया। प्रभुपरायण राजा जानकीरामने तत्क्षण यह काम पूरा कर दिया। बड़े समारोहसे दरबार हुआ। राजा, महाराजा, ज़मीन्दार प्रजावर्ग, और वणिक-गण सभी उस दरबारमें आये। सहस्रों मनुष्यों से दरबार भर गया।

दरबारमें राजासन पहिले ही से प्रस्तुत था। नवाब अलीवर्दी उसी पर बैठे। पास ही दूसरे आसनपर सिराजुद्दौला बैठा।

नवाब अलीवर्दीने धीरे धीरे कहा, "महाराजा, राजा, ज़मीन्दार, प्रजावर्ग और वणिक-मण्डली! आप सब लोग इस दरबारमें उपस्थित हैं। मैं अब वृद्ध हुआ हूँ, मेरे जीवनके दिन थोड़े रह गये हैं। मालूम नहीं, इस नश्वर देह को छोड़कर कब चला जाना पड़े। जब कि मृत्युकी कुछ भी स्थिरता नहीं है, तो इस बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाके सिंहासन पर कौन बैठेगा, कौन इसका वास्तविक प्रभु होगा, यह बात सबको पहिले ही से जान लेना उचित है। इसके लिये मैं अपने ही सामने, आप लोगोंके भावी नवाब, सिराजुद्दौला को बङ्गाल, बिहार और उड़ीसा का युवराज बनाता हूँ। आजसे आप सब लोग सिराजुद्दौला को युवराज समझकर,

उसके प्रति युवराज की उपयुक्त सम्मान प्रदर्शन करके उसका आदेश पालन कीजियेगा।" यह कहकर अलीवर्दी ने सिराजुद्दौलाको अपने पास बैठा लिया। सिराजद्दौला बङ्गाल, विहार और उड़ीसा के युवराज-पद पर अभिषिक्त हुआ।



दूसरा खण्ड।

पहला परिच्छेद।


राजुद्दौला इस समय बङ्गाल, बिहार और उड़ीसा का युवराज है। अब सभी उसको 'युवराज' कहकर सम्बोधन करते हैं। नवाब अलीवर्दी भी समय समय पर उसके हाथमें राजकार्य्य का भार अर्पण करके राज्यशासन और प्रजापालनकी विधि-नियम की शिक्षा देने लगे और अपने न रहने पर सिराज इस कामको कितनी अच्छी तरह पर कर सकेगा, इस की भी परीक्षा करने लगे। सिराजुद्दौला इस समय दरबार में नानाके पास बैठ कर शासन-पालन इत्यादि की पद्धति सीखता है।

यौवराज से अभिषिक्त होकर सिराजुद्दौला जब-तब अँगरेज़ सौदागरोंके नाना प्रकार के दोष दिखा कर, जिससे ईष्ट इण्डिया कम्पनी राज्यमें बिना कर के दिये वाणिज्य न करने पावे और जिससे कि वह बङ्गालसे निकाल दी जावे,

नवाबको छेड़ने लगा। किन्तु प्रवीण नवाब, तरलबुद्धि सिरा जुद्दौलाकी इन बातों पर कान नहीं देते थे।

सिराजुद्दौला किसी तरह अँगरेज़ोंकी उपेक्षा न कर सकता था। अलीवर्दी इसके लिये सिराजको बहुत कुछ समझाते और निरस्त रहनेका उपदेश देते थे; किन्तु सिराजुद्दौला उनके उस उपदेश पर कुछ भी ध्यान न देता था। उसको ईस्ट इण्डिया कम्पनी से पहिले ही घृणा थी, तिस पर बिना कर दिये वाणिज्य करती थी, इससे और भी कम्पनीका शत्रु हो गया। इसीलिये वह नानाके उपदेश और निषेध करने पर भी, अँगरेज़ सौदागरोंको बङ्गालसे निकाल देनेका सङ्कल्प त्याग न सका। उसने प्रण किया था, कि या तो अँगरेज़ सौदागरोंसे कर वसूल किया जाय, अथवा उनको इस देशसे निकाल दिया जाय। परन्तु सत्यकी सदा जय होती है, यह बात उसको मालुम न थी।

सिराज समझता था, कि अँगरेज़ सौदागरोंके कारण उसके स्वार्थको आघात पहुँचता है। इसी कारण वह उनको विद्वेष की आँखसे देखता था और उनको बङ्गाल से निकाल देनेके लिये आप ही आप चेष्टा उत्पन्न हो जाती थी। किन्तु युव- राज होने पर भी, वह नवाब के मतके विरुद्ध कोई काम नहीं कर सकता था।

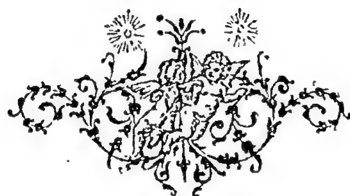
सिराजुद्दौला अँगरेज़ सौदागरोंके प्रति इस विद्वेषके होनेके कई कारण बतलाता था। जिनमें से प्रधान कारण यही था,

कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी विना कर दिये क्यों वाणिज्य करती है। यद्यपि उक्त कम्पनीने दिल्लीश्वर शाहजहाँ से विना कर दिये वाणिज्य करनेका अनुमति-पत्र पाया था; परन्तु वह अपने उद्धत स्वभावके आगे दिल्लीश्वर को भी कुछ नहीं समझता था। विशेष करके, सिराजुद्दौलाके नामसे मंसूरगञ्ज नामका एक गञ्ज स्थापित हुआ था और उसकी सारी आय हीरा झीलके प्रासादके बननेके समयसे उसी के हाथ रहती थी। जिसमें उसने मनमाना कर लगा दिया था और प्रजाको लूटता था। उसकी आय भी उक्त कम्पनीके व्यवसायसे कम हुआ करती थी। तो क्या ऐसी अवस्थामें वह चुप रह सकता था? जब उसने देखा कि गञ्जकी आय कम हो गई है, तो अँगरेज़ोंकी ओर से और भी विद्वेष बढ़ गया और यही चेष्टा करने लगा कि किसी प्रकार ईस्ट इण्डिया कम्पनी वङ्गालसे निकाल दी जाय।

विज्ञ बहुदर्शी प्रवीण नवाब दौहित्र को सतर्क करनेके लिये समय समय पर उपदेशके छलसे कहा करते, कि "जो और मनुष्योंके साथ कलह करता है, उसका कभी भला नहीं होता है। सबके साथमें सद्भाव ही रखना उन्नति का मूल है।"

सिराजुद्दौलाकी अपरिणत बुद्धि, विचक्षण नानाके इस गम्भीर उपदेशका अर्थ न समझ सकती थी। उसका विश्वास और धारणा एक तरह की थी और उसके नानाका विश्वास

और धारणा अन्य रूपकी थी। वह स्पर्द्धी और उद्धत था, उसके नाना नितान्त निरीह और विनयी थे। नाना जिस कामको बहुत आगा पीछा देखकर करते थे, दौहित्र उसीको बिना सोचे समझे एक दम कर डालता था। इस अवस्थामें नाना और दौहित्रके बीचमें राज्यके शासन-सम्बन्ध में यदि मत-भेद हो तो उसमें आश्चर्य ही क्या है? सिराज अवसर पाते ही ईस्ट इण्डिया कम्पनीके विरुद्ध तरह तरहके अभियोग उपस्थित करके, उसको बङ्गालसे निकाल देनेका बन्दोबस्त करनेके लिये वृद्ध नवाब को तङ्ग किया करता था; परन्तु वृद्ध नवाबके चित्तमें यह बात न समाती थी। सिराज अँगरेज़-सौदागरों को नितान्त ही सामान्य समझता था। यह देखकर नवाब कहते थे,—"यदि तुम ऐसा ही समझते हो, तो तुमको यह भी समझना चाहिये कि एक प्रकाण्ड मनुष्य भी एक क्षुद्र चीटींके काटनेसे विचलित हो सकता है, जबकि वह निरर्थक सताई जावे।"



दूसरा परिच्छेद ।

दरबारगृह आज लोगोंसे भरा हुआ है। नाना देशके, नाना जातिके वणिक दर्बारमें उपस्थित हैं। सभी हाथ जोड़े खड़े हैं। ईस्ट इण्डिया कम्पनीने उनका सौदागरीके सामानसे भरा हुआ जहाज़ लूट लिया है। उनके बहुत से रुपयोंका माल ले लिया है। इसीसे सब विचार-प्रार्थी होकर नवाबके दर्बार में आये हैं। ऐसा षड़यन्त्र सिराजने उन सौदागरोंसे कहकर खड़ा किया है। उसका मुख्य उद्देश्य यही था, कि किसी उपायसे नाना को उत्तेजित करके उनके विरुद्ध लड़ाई खड़ी करवाये, यही उसका प्रधान लक्ष्य था। हुगलीके सय्यद, मुग़ल, आरमोनियन इत्यादि वणिकोंने आकर नवाब बहादुरसे कहा, कि ईस्ट इण्डिया कम्पनीने उनके सौदागरीके सामान के पाँच जहाज़ लूट लिये हैं।

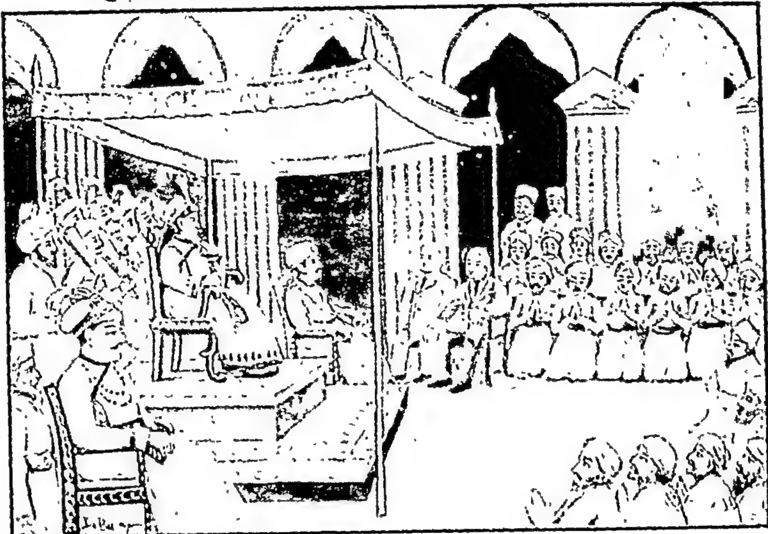
यह सम्बाद पाते ही सिराजुद्दौला बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने मन ही मन सोचा कि इस बार नानाको वणिक कम्पनीके विरुद्ध उत्तेजित करनेका अच्छा अवसर मिल गया है। अली-वर्दी से कहा, "नानाजी! अँगरेज़-वणिक-कम्पनीके अत्याचार

की बातें आपने सुन लीं? देशमें राजा है, विचार होता है, शासन-दण्ड भी होता है; परन्तु जब इन सब बातोंकी अवहेलना करके वह लोग डाकुओंकी तरह बिना सङ्कोचके दूसरोंका द्रव्य लूट सकते हैं, तो इससे मालूम होता है कि वह राजाको ग्राह्य नहीं करते हैं और शासन-दण्डका उनको भय नहीं है। उन्होंने निश्चय यही बात सोच ली है, कि देश में न राजा है और न विचार है; नहीं तो उन्होंने कौनसे साहससे दूसरोंके जहाज़ लूट लिये? आप इन लोगोंके शासन-विषयमें नितान्त उदासीन हैं; नहीं तो राजाके साथ छल चातुरी करके ये बङ्गालमें वाणिज्य कर सकते हैं? कैसी भयानक अराजकता है! यह लोग सामान्य वणिक हैं, किन्तु इनका काम देखकर बोध होता है कि मानों ये ही देशके राजा हैं और इसी बातका क्या ठीक है कि सुयोग पाकर यह लोग राज-सिंहासन नहीं छीन लेंगे, यह क्या इन लोगोंका दुःसाहस नहीं है?

अलीवर्दी—अँगरेज़ वणिकोंने जो कुछ किया है, यदि वह सब सत्य हो, तो कहना होगा कि वह राजा, विचार और शासनदण्ड किसीको भी नहीं मानते हैं; किन्तु वास्तवमें वह दोषी हैं कि नहीं, वास्तवमें उन्होंने यह काम किया है कि नहीं, इस बातका प्रमाण लेना आवश्यक है। इससे पहिले क्रोध अथवा विद्वेषके वशीभूत होकर सहसा कुछ कर डालना उचित नहीं है।

की बातें आपने सुन लीं ? देशमें राजा है, विचार होता है, शासन-दण्ड भी होता है; परन्तु जब इन सब बातोंको अवहेलना करके वह लोग डाकुओंकी तरह विना सङ्कोचके दूसरोंका द्रव्य लूट सकते हैं, तो इससे मालूम होता है कि वह राजाको ग्राह्य नहीं करते हैं और शासन-दण्डका उनको भय नहीं है। उन्होंने निश्चय यही बात सोच ली है, कि देश में न राजा है और न विचार है; नहीं तो उन्होंने कौनसे साहससे दूसरोंके जहाज़ लूट लिये ? आप इन लोगोंके शासन-विषयमें नितान्त उदासीन हैं; नहीं तो राजाके साथ छल चातुरी करके ये बङ्गालमें वाणिज्य कर सकते हैं ? कैसी भयानक अराजकता है! यह लोग सामान्य वणिक हैं, किन्तु इनका काम देखकर बोध होता है कि मानों ये ही देशके राजा हैं और इसी बातका क्या ठीक है कि सुयोग पाकर यह लोग राज-सिंहासन नहीं छीन लेंगे, यह क्या इन लोगोंका दुःसाहस नहीं है ?

अलीवर्दी—अँगरेज़ वणिकोंने जो कुछ किया है, यदि वह सब सत्य हो, तो कहना होगा कि वह राजा, विचार और शासनदण्ड किसीको भी नहीं मानते हैं; किन्तु वास्तवमें वह दोषी हैं कि नहीं, वास्तवमें उन्होंने यह काम किया है कि नहीं, इस बातका प्रमाण लेना आवश्यक है। इससे पहिले क्रोध अथवा विद्वेषके वशीभूत होकर सहसा कुछ कर डालना उचित नहीं है ।



नवाब अलीवर्दी खाँ का दरबार।

Narsingh Press, Calcutta.

नानाके मुखसे यह बातें सुनकर सिराजुद्दौला बड़ा अप्रसन्न हुआ और कहा, "नानाजी! वणिक-कम्पनीने जहाज़ अवश्य लूटे हैं, इस बातको मैं निश्चय रूपसे कह सकता हूँ। मेरी बात सुनिये, आप अब भी इन लोगोंको वङ्गालसे निकाल दिये जानेका हुक्म दे दें, नहीं तो अन्तमें इन लोगोंका शासन करना बड़ा कठिन हो जायगा।"

इसी समय एण्टनी नामक एक वणिक बोल उठा, "नवाब बहादुर! अँगरेज़ वणिकोंने मुग़ल, सैयद; आरमीनियन इत्यादि वणिकोंके जहाज़ लूट लिये हैं, मैं इस बातका साक्षी हूँ।"

सिराजुद्दौलाने प्रसन्न होकर कहा, "नानाजी! सुनिये, वणिक-श्रेष्ठ एण्टनी क्या कहता है।"

अलीवर्दी—एण्टनी! क्या तुम सत्य कहते हो कि अँगरेज़ वणिकोंने सैयद, मुग़ल और आरमीनियन लोगोंके सौदागरीके जहाज़ लूट लिये हैं?

एण्टनीने हाथ जोड़कर कहा, "धर्मावतार! आप विचार-पति हैं, दण्डमुण्डके कर्त्ता हैं। आपके सामने किसी के ऊपर मिथ्या दोष लगा देना, ऐसा दुःसाहस मैं नहीं कर सकता हूँ। अँगरेज़ वणिक विचार मानते नहीं हैं, शासनका भय करते नहीं हैं। परन्तु क्या इसी तरह हम लोग भी हुजूरके शासन का उल्लङ्घन कर सकते हैं? नवाब बहादुर! अँगरेज़ वणिकों के साहसकी बात, अत्याचारका विषय क्या कहूँ? मेरे एक जहाज़में मेरा कई लाखका सौदागरीका सामान आ रहा था,

जिसमें नवाब बहादुरको भेंटके लिये भी कई एक महामूल्य भेंटकी वस्तुएँ थीं, अँगरेज़ोंने उस जहाज़ तक को लूट लिया है। मैं भी सय्यद, मुग़ल और आरमीनियनकी तरह विचार-प्रार्थी होकर आपके द्वार पर उपस्थित हुआ हूँ। आप देशके राजा हैं, विचारपति हैं, दण्डमण्डके कर्त्ता और असहायके सहाय हैं। मेरे इस अभियोगका सुविचार करें।"

यह सुनकर सिराजुद्दौला मन ही मन एण्टनी पर बड़ा प्रसन्न हुआ, कि जैसा सिखाया था उससे कहीं बढ़कर उसने कर दिखाया। ऊपरसे क्रोधित होकर दाँतसे दाँत कटकटा कर बोला, "क्या अँगरेज़ वणिकोंका इतना साहस है कि जो द्रव्य राजाके लिये आ रहा था, वह भी लूट लिया? क्या उनको मालूम नहीं है कि सिराजुद्दौला अभी जीवित है। मैं अभी उनका यथासर्वस्व राज-भाण्डारमें लेकर उनको बङ्गाल देशसे, भेड़ बकरीकी तरह, निकाल दूँगा। अँगरेज़ सौदागर निश्चय यही समझ रहे हैं, कि नवाब अलीवर्दी नितान्त ही निस्तेज, भीरु और कापुरुष है; नहीं तो सामान्य वणिक होने पर किस साहससे राजाकी भेंटको लूट ले गये? मैं इसी समय उनको उचित दण्ड दूँगा और किसी प्रकार क्षमा नहीं करूँगा। क्षमा करते रहनेसे ही यह सामान्य वणिक ऐसे साहसी हो गये हैं। मैं इसी समय उनको हथकड़ी बेड़ी डालकर कैद करूँगा और किसी की कोई बात न सुनूँगा।" कहते कहते सिराज शीघ्रतासे उठ खड़ा हुआ और सेनापति

यारलतीफ़, मीरमदन, मोहनलाल और मीरजाफ़र इत्यादि को चिल्लाकर बुलाया और कहा, "तुमलोग शीघ्र ही सेना तय्यार करो, आज अँगरेज़ वणिकोंको उचित शिक्षा दूँगा।"

सिराजुद्दौलाको क्रोधसे पागल और रणोद्यत देखकर अलीवर्दी सान्त्वनाजनित वाक्योंमें बोले, "सिराज! क्रोधके वशीभूत होकर सहसा युद्ध अथवा ऐसा ही कोई काम कर बैठना राज्योचित धर्म्म नहीं है। यद्यपि अँगरेज़ सौदागरोंने सैयद, मुग़ल, आरमीनियन और एरटनी इत्यादि वणिकोंके सामानसे भरे हुए जहाज़ लूट लिये हैं; किन्तु उन लोगोंसे एक बार पूछ लेना उचित है, कि वह लोग उस सामानको ले गये हैं कि नहीं; और यदि ले जाना ही निश्चय हो, तो वह उस सामानको अथवा उसका उचित मूल्य देनेको सम्मत हैं कि नहीं; यदि असम्मत हों, तो उस समय उनके दमन करनेके लिये जो कर्त्तव्य हो उसको करना। इस समय मेरी बात सुनो, शान्त हो जाओ। जिस काममें कोई जन साधारण दोषारोपण न कर सके, वही करना अनुमोदनीय है।"

सिराजुद्दौला नानाके इस निषेधसे तत्काल अँगरेज़ वणिकों के विरुद्ध युद्धयात्रा करनेसे रुक गया; परन्तु कुचले हुए काल भुजङ्गकी तरह तर्जन-गर्जन करके बोला, "जो राजाके राजदण्ड के प्रति अनायास ही उपेक्षा दिखाता है, उससे कौन सी बात पूछना आवश्यक है? आपकी इस दयालुतासे अँगरेज़-सौदागर-कम्पनी क्रमशः बल पकड़ती जाती है।"

अलीवर्दी—सिराज! तुम सत्य कहते हो; किन्तु मैं विचारपति होकर अविचारका काम नहीं कर सकता हूँ।

अलीवर्दी नितान्त ही निरीह स्वभावके मनुष्य थे, प्रजाके हितैषी और धर्मपरायण नरपति थे। क्या हिन्दू, क्या मुसल्मान, क्या दूसरी-जाति, वह सबको ही स्नेहकी आँखसे देखते थे। किसी भी धर्म पर उनकी अश्रद्धा नहीं थी और न किसी धर्म से विद्वेष रखते थे। वह सब विषयोंमें मन्त्री और प्रधान प्रधान प्रतिष्ठित मनुष्योंसे मन्त्रणा करके काम करते थे। विशेषकर, जगत्सेठ फतहचन्द को वह बहुत मानते थे। किसी कामको फतहचन्दसे परामर्श किये बिना नहीं करते थे। इन्हीं सब कारणोंसे राजा, महाराजा, ज़मीन्दार, उमराव और मन्त्री इत्यादि गण्यमान्य लोग, सभी नवाब अलीवर्दी के हिताकाङ्क्षी थे और सभी नवाबके सिंहासनको अक्षुण्ण रखनेके लिये प्राण-पणसे यत्न करते थे।

सन् १७४४ ईसवीमें फतहचन्दकी मृत्यु हुई। फतहचन्द से बढ़कर नवाबका हितैषी और अनुरक्त कोई और भी था कि नहीं, इसमें सन्देह है। उनकी मृत्युसे नवाब अलीवर्दीको बड़ी व्यथा हुई।

जगत्सेठ फतहचन्दकी मृत्युके पीछे, नवाब अलीवर्दी ने उनके पौत्र जगत्सेठ महताबचन्द को पितामह का पद प्रदान किया, और तभीसे वह फतहचन्दकी तरह अनेक विषयोंमें महताबचन्द से मन्त्रणा-परामर्श लिया करते थे।

अलीवर्दीने इन्हीं महतावचन्दसे जिज्ञासा की कि, "सेठजी ! इस समय क्या करना चाहिये ? ईस्ट इण्डिया कम्पनीको इस सारे द्रव्यकी क्षतिपूर्ण करनेके लिये लिखा जाय, अथवा उन लोगोंको पकड़ कर ले आनेके लिये सेना भेजी जाय ?"

जगत्सेठ महतावचन्दने कुछ देर सोचकर कहा, "पहिले ईस्ट इण्डिया कम्पनीको इस सब रुपयेकी क्षतिके पूरा करनेके लिये लिखा जाना चाहिये। यदि सहज ही में वह क्षति पूरी करनेके लिये सम्मत हो जायँगे, तो निरर्थक लड़ाई झगड़ा न करना पड़ेगा। परन्तु जहाँ तक मैंने सुना है, यह बात सर्वथा निर्मूल ही मालूम होती है, जैसी कि एण्टनी प्रभृति सौदागरों ने कही है; क्योंकि ईस्ट इण्डिया कम्पनी ऐसी उद्दण्ड नहीं हो गई है जैसा इन लोगोंका कथन है।"

अलीवर्दी—मेरी भी यही इच्छा है, कि इस बात की जाँच कर लूँ। सहसा विवादमें प्रवृत्त होना किसी प्रकार उचित नहीं है। विवाद करनेमें कुछ देर नहीं लगती है, किन्तु किसी के साथ मित्रता करनेके लिये बहुत समय चाहिये। सिराज बालक है, कुछ जानता नहीं है। युद्ध करनेसे कितना रुपया और कितनी सेनाका क्षय होता है। जो राजा सर्वदा अकारण ही युद्ध-विग्रहमें लिप्त रहता है, वह कभी भी शान्ति-लाभ में समर्थ नहीं होता है।

सिराजुद्दौलाने सोच रक्खा था, कि अब की बार अँगरेज़ सौदागरोंको सदैवके लिये बङ्गालसे निकाल दूँगा; किन्तु जब

नवाबने उसके मतका किसी तरह अनुमोदन नहीं किया, तो वह निराश और भग्नोत्साह होकर क्रुद्ध होता हुआ शीघ्रतासे दरबारके बाहर चला गया।

अन्तमें पत्र लिखना ही स्थिर हुआ। नवाबने अँगरेज़ोंके कलकत्तेके कर्मचारी बारवेल साहबको एक पत्र लिखा। पत्र इस प्रकार था:—

तुमने हुगलीके सैयद, मुग़ल, आरमीनियन इत्यादि वणिकों के ऊपर अयथा अत्याचार करके उन लोगोंके कई लाख रुपयों के सौदागरीके सामानसे भरे कई जहाज़ लूट लिये हैं, और एण्टनी नामक एक वणिक हमारे वास्ते भेंट देनेको बहुत सा बहुमूल्य सामान ला रहा था, तुम लोगोंने उसका जहाज़ भी लूट लिया है। इन लोगोंने तुम्हारे नाम पर दरबारमें अभियोग उपस्थित किया है। हमारा विश्वास है, कि यह सब जहाज़ तुमने लूट लिये हैं। अतएव पत्रको पढ़ते ही यदि तुम हमारे आदेशसे इस क्षतिको पूरा करके न दोगे, तो शीघ्र ही तुम्हारे ऊपर कठिन दण्ड-आज्ञा प्रचारित की जायगी। इति। नवाब अलीवर्दी ख़ाँ।

पत्र शीघ्र ही बारवेल साहबके पास भेज दिया गया।

तीसरा परिच्छेद।



सन् १७४९ ईसवीकी नवीं जनवरीको नवाबका यह आदेश-पत्र कलकत्तेके बारवेल साहबके पास पहुँचा। पत्र-पाठ करते ही उनके मस्तक पर मानों आकाश टूट पड़ा। पत्रका हाल वहाँ जितने अँगरेज़ थे सबको सुनाया गया और उसके सम्बन्ध में क्या करना चाहिये, इसके लिये सभा बैठी। वाट्स, हालवेल, जानवुड, मेनिङ्हाम, स्काट, डाक्टर फोर्थ, गवर्नर ड्रेक इत्यादि अँगरेज़ोंने मिलकर गुप्त मन्त्रणा की। बारवेल साहब प्रथम वक्ता बने। उन्होंने कहा,"नवाबके दरबारसे जो पत्र आया है, उसका विषय तो आप सब लोग सुन ही चुके हैं। अब क्या करना चाहिये? यह झूठा कलङ्क हमारे सिर पर सिराजुद्दौलाने लगाया है। परन्तु अब क्या करना चाहिये, इस विषयमें आप सब लोग विवेचना करके स्थिर कीजिये।"

हालवेल साहब इसके उत्तरमें बोले, "मेरी समझमें द्रव्य अथवा मूल्य कुछ भी न देना चाहिये। जब हमने अपराध ही नहीं किया है, तो दण्ड देना कैसा?"

"विशेष करके हम लोग नवाब अलीवर्दीके आधीन नहीं हैं। यद्यपि बङ्गालमें हम लोग वाणिज्य करते हैं किन्तु दिल्लीके बादशाहके आदेश से ही तो हम लोगोंको वाणिज्यका अधिकार मिला है। नवाब अलीवर्दी को हमलोगोंसे कोई बात कहने अथवा दण्ड देनेकी क्षमता नहीं है। दिल्लीके बादशाह के आदेशके सिवाय अलीवर्दी का कोई आदेश हम नहीं सुनना चाहते हैं।"

यह सुन कर और अँगरेज़ लोग बड़े आनन्दित हुए एवं हालवेल साहब जो कुछ कहते थे, उसीको ठीक कहकर एक वाक्यसे सबने अनुमोदन किया।

सभोंने अनुमोदन किया, केवल बारवेल साहब ने अपना मत नहीं दिया। यह प्रस्ताव उनको अच्छा नहीं लगा। उन्होंने प्रतिवाद करके कहा, "मेरी समझमें यह परामर्श युक्तियुक्त है कि नहीं इस बातको आप लोग एक बार फिर सोच देखें। हम लोगोंने दिल्लीश्वर बादशाह शाहजहाँ से बिना कर दिये हुए वाणिज्य करनेका अधिकार पाया है, यह सत्य है; परन्तु हमको यहाँ के नवाब का भी अवाध्य न होना चाहिये; उससे तो सदैव ही काम पड़ता रहता है। मेरी समझमें नवाब अलीवर्दी की उपेक्षा न करके कोई ऐसा उपाय स्थिर करना चाहिये; कि जिससे मुग़ल, आरमेनियन और सय्यद इत्यादि वणिक लोग विचार-प्रार्थी ही न हो पावें; क्योंकि आप लोग जानते हैं कि उस दर्बारमें हमारी ओर

की करने वाला कोई नहीं है। इससे अच्छा तो यही हो, कि वह सौदागर लोग विचार-प्रार्थी ही न हों।"

ड्रेक—अच्छा आपने क्या सोचा है? आपने किस तरह प्रतीकार करनेकी चेष्टा करना स्थिर किया है?

वारवेल—मेरी समझमें नवावके सामने साफ़ साफ़ कह देना चाहिये कि हमने यह अपराध नहीं किया है और विचार-प्रार्थी वणिक लोगोंसे भी किसी न किसी तरह पर एक मुक्ति-पत्र लिखा लेना चाहिये। जब हमने उनकी कोई चति ही नहीं की है, तो वह झूठा दोषारोपण क्यों करते हैं? उनको किसी प्रकार मिला लेना चाहिये।

वारवेल साहबकी इस मन्त्रणाको सभी ने ठीक कह कर मान लिया और नवावके पास एक प्रतिवाद-पत्र भेजा गया। नवावके दरबारमें प्रतिवाद-पत्र भेज कर ही ईस्ट इण्डिया कम्पनी चान्त नहीं हो गई, वरं उन लोगोंने सय्यद, मुग़ल, आरमीनियन और एरटनी प्रभृति वणिकोंसे मुक्ति-पत्र लिख देनेके लिये कहा; परन्तु वह तो सिराजके सिखाये हुए थे। वह कब माननेवाले थे?

यथासमय अँगरेज़ सौदागरोंका प्रतिवाद-पत्र नवाब-दरबारमें पहुँचा। उनके उस पत्रको पढ़कर, अग्निमें घृताहुतिके समान अलीवर्दी क्रोधसे जलने लगे और चिल्लाकर बोले, "अँगरेज़ लोग कैसे चतुर हैं! मैं समझता हूँ कि वे सबको

आँखोंमें धूल डालकर लोगोंका सर्वनाश करेंगे! वे समझते हैं कि वे ही देशके हर्त्ता-कर्त्ता-विधाता हैं!. वे जो कुछ करेंगे, उसमें किसी को कुछ कहनेका अधिकार नहीं है— वे जो कुछ करेंगे वही माना जायगा! आप ही अपराध करें और उसको दूसरेके ऊपर रखकर आप ही निरपराध बनना चाहते हैं!"

अँगरेज़-विद्वेषी सिराजुद्दौलाने इस प्रतिवाद-पत्रकी बात सुनी, कि उन्होंने दोष अस्वीकार किया है; द्रव्य लौटानेमें अथवा मूल्य प्रदान करनेमें वह असम्मत हैं। यह सुनकर उसके आनन्दकी सीमा न रही। उसने समझ लिया कि मेरे दरबारमें अँगरेज़ोंको निरपराध ठहरानेकी क्षमता किसीमें नहीं है। वह आप चाहे जैसा कहें, दोषीके कहनेसे कुछ नहीं हो सकता है। इस बार अँगरेज़ सौदागर सदैवके लिये बङ्गालसे निकाल दिये जायँगे।

जहाँ अग्नि होती है,वहीं पवन भी होती है। वह और चुप न रह सका। यह सम्वाद पाते ही सिराज दरबारमें आ पहुँचा और बड़े गर्वित-भावसे बोला, "नानाजी! देखो, जो कुछ मैं कहता था, वह सत्य है कि नहीं। अस्तु जो कुछ हो, परन्तु, यह बड़े सुखकी बात है कि इतने दिनोंके बाद आपने अँगरेज़ सौदागरोंको पहिचाना है। यदि इस अवसर पर आप इनको दमन नहीं करेंगे, तो इनके द्वारा अन्तमें मुसल्मानोंको बहुत क्षति पहुँचेगी। मैं अब भी कहता हूँ, कि ऐसा उपाय करना

चाहिये कि जिससे क्रमशः उनकी स्वाधीनता का विस्तार जाता रहे। समय रहते उसका उपाय करना चाहिये।"

अली०—सिराज! जो कुछ कहते हो सब सत्य है। मैंने अँगरेज़ सौदागरोंकी चातुरी समझ ली है; परन्तु इसका बदला लेनेकी इच्छा मैं नहीं करता हूँ, इसके कई कारण हैं। किन्तु उन सब कारणोंकी आलोचना करके, मैं उनको दमन करनेमें उदासीन न रहूँगा। सम्पूर्णतया दोषी होने पर भी, जब वह अपना दोष स्वीकार नहीं करना चाहते हैं; तो ऐसी अवस्थामें उचित शास्ति न देनेसे, उनकी धृष्टता शतगुण बढ़ जायगी। इतना कह कर जगत्सेठकी ओर फिरकर अली-वर्दी ने कहा, "सेठ जी! अँगरेज़ सौदागर जैसे सरल पथ पर चल रहे हैं, वह तो आपको ज्ञात ही है। अब हमको क्या करना चाहिये? राजशक्तिका कुछ कठोर भाव दिखाये बिना, वे सहजमें उस क्षतिको पूरा करें, ऐसी तो हमको आशा नहीं है। अब यह बतलाइये, कि किस तरह उनको दण्ड दिया जाय?"

सिराज—नानाजी! जो राज्यके लिये अनिष्टकारी हैं, जिनके द्वारा अन्तमें हमारा सिंहासन पर्यन्त विचलित हो सकता है, मेरी समझमें उनका यथासर्वस्व लेकर राजभाण्डार में रक्खा जाय और उनको राज्यसे निकाल बाहर किया जाय।

महताबचन्द—आप राजा हैं और विचार-कर्त्ता हैं।

आँखोंमें धूल डालकर लोगोंका सर्वनाश करेंगे! वे समझते हैं कि वे ही देशके हर्त्ता-कर्त्ता-विधाता हैं! वे जो कुछ करेंगे, उसमें किसी को कुछ कहनेका अधिकार नहीं है— वे जो कुछ करेंगे वही माना जायगा! आप ही अपराध करें और उसको दूसरेके ऊपर रखकर आप ही निरपराध बनना चाहते हैं!"

अँगरेज़-विद्वेषी सिराजुद्दौलाने इस प्रतिवाद-पत्रकी बात सुनी, कि उन्होंने दोष अस्वीकार किया है; द्रव्य लौटानेमें अथवा मूल्य प्रदान करनेमें वह असम्मत हैं। यह सुनकर उसके आनन्दकी सीमा न रही। उसने समझ लिया कि मेरे दरबारमें अँगरेज़ोंको निरपराध ठहरानेकी क्षमता किसी में नहीं है। वह आप चाहे जैसा कहें, दोषीके कहनेसे कुछ नहीं हो सकता है। इस बार अँगरेज़ सौदागर सदैवके लिये बङ्गालसे निकाल दिये जायँगे।

जहाँ अग्नि होती है,वहीं पवन भी होती है। वह और चुप न रह सका। यह सम्वाद पाते ही सिराज दरबारमें आ पहुँचा और बड़े गर्वित-भावसे बोला, "नानाजी! देखो, जो कुछ मैं कहता था, वह सत्य है कि नहीं। अस्तु जो कुछ हो, परन्तु यह बड़े सुखकी बात है कि इतने दिनोंके बाद आपने अँगरेज़ सौदागरोंको पहिचाना है। यदि इस अवसर पर आप इनको दमन नहीं करेंगे, तो इनके द्वारा अन्तमें मुसल्मानोंको बहुत क्षति पहुँचेगी। मैं अब भी कहता हूँ, कि ऐसा उपाय करना

चाहिये कि जिससे क्रमशः उनकी स्वाधीनता का विस्तार जाता रहे; समय रहते उसका उपाय करना चाहिये।"

अली०—सिराज! जो कुछ कहते हो सब सत्य है। मैंने अँगरेज़ सौदागरोंकी चातुरी समझ ली है; परन्तु इसका बदला लेनेकी इच्छा मैं नहीं करता हूँ, इसके कई कारण हैं। किन्तु उन सब कारणोंकी आलोचना करके, मैं उनको दमन करनेमें उदासीन न रहूँगा। सम्पूर्णतया दोषी होने पर भी, जब वह अपना दोष स्वीकार नहीं करना चाहते हैं; तो ऐसी अवस्थामें उचित शास्ति न देनेसे, उनकी धृष्टता शतगुण बढ़ जायगी। इतना कह कर जगत्सेठकी ओर फिरकर अलीवर्दी ने कहा, "सेठ जी! अँगरेज़ सौदागर जैसे सरल पथ पर चल रहे हैं, वह तो आपको ज्ञात ही है। अब हमको क्या करना चाहिये? राजशक्तिका कुछ कठोर भाव दिखाये बिना, वे सहजमें उस चतिको पूरा करें, ऐसी तो हमको आशा नहीं है। अब यह बतलाइये, कि किस तरह उनको दण्ड दिया जाय?"

सिराज—नानाजी! जो राज्यके लिये अनिष्टकारी हैं, जिनके द्वारा अन्तमें हमारा सिंहासन पर्यन्त विचलित हो सकता है, मेरी समझमें उनका यथासर्वस्व लेकर राजभाण्डार में रक्खा जाय और उनको राज्यसे निकाल बाहर किया जाय।

महताबचन्द—आप राजा हैं और विचार-कर्त्ता हैं।

अँगरेज़ सौदागरोंने जो अपराध किया है, उसको वह अस्वीकार करके क्षति पूरी करनेको तय्यार नहीं हैं। ऐसी अवस्थामें आपके विचारमें जो ठीक हो, वही करना चाहिये। जिसका जैसा काम है उसको वैसा ही फल भोग करना होगा; परन्तु जहाँ तक मेरी समझ पहुँचती है, उन लोगोंके हाथों यह अन्याय नहीं हुआ है।

अलीवर्दी कुछ देर तक सोचते रहे और बोले, "चाहे यह सत्य हो कि उन्होंने जहाज़ न लूटे हों; परन्तु जब इतने मनुष्य विचार-प्रार्थी हैं, तो कैसे समझा जाय कि यह मिथ्यापवाद लगाया गया है। मुझको तो यही उचित मालूम होता है, कि एकबारगी उनका यथासर्वस्व राज-भाण्डारमें न लेकर, सेना भेजी जाय और उनकी कोठी घेर ली जाय। यदि इससे भय पाकर वह लोग लूटे हुए द्रव्यको फेर दें अथवा उसका मूल्य प्रदान करनेको सम्मत हो जायँ तो अच्छा है; नहीं तो सिराजुद्दौलाकी युक्तिके अनुसार यथासर्वस्व राजभाण्डारमें करके, उनको बङ्गालसे निकाल दूँगा।"

सिराजुद्दौलाने सोचा, "जब अँगरेज़ोंने एक बार अपराध अस्वीकार किया है, क्षति पूरी करनेमें भी असम्मत हुए हैं; तो न अब दोष स्वीकार करेंगे और न क्षति ही पूरी करनेको सम्मत होंगे; इसलिये अब वे सदैवके लिये बङ्गालसे निकाल दिये जायँगे और उसीके साथ उनका वाणिज्य-अधिकार भी लोप हो जायगा।" ऐसी भावना करके उसको बड़ा ही

आनन्द हुआ और पूर्वोक्त प्रस्तावमें कोई आपत्ति नहीं की।

नवाब अलीवर्दीने सेनापति मीरजाफ़र को बुलाकर हुक्म दिया, कि अँगरेज़ सौदागरों की क़ासिमबाज़ार की कोठीको जाकर घेर लो।



चौथा परिच्छेद ।

नवाबकी सेनाने क़ासिमबाज़ार की कोठी को घेर लिया है। बङ्गाल, विहार और उड़ीसा में अँगरेज़ सौदागरोंका वाणिज्य एकबारगी बन्द हो गया है। यह क्षति क्या वह सह सकेंगे? वाणिज्य से ही जिसकी जीविका है, व्यवसाय के सिवाय जिसको और कोई उपाय नहीं है, जिसका वाणिज्य बन्द हो गया, वह कैसे निश्चिन्त रह सकता है? जहाँ प्रतिदिन लाखों-रुपयोंका क्रय-विक्रय होता रहा है, सहस्रों रुपये मुनाफेमें आते रहे हैं, वहाँ मनुष्य किस प्रकार चुप बैठा रह सकता है? विशेष करके जहाँ साझे का काम है, और वहाँ वाणिज्य बन्द होनेसे सब समूह की क्षति होती है। व्यवसाय बन्द होजानेसे अँगरेज़-वणिक-मण्डली में बड़ी गड़बड़ पड़ गई। "सर्वनाश हुआ व्यवसाय गया!" इत्यादि शब्दोंसे आकाश और पृथ्वी दोनों ही फटने लगे। कोठी भरमें परामर्श और सभायें होने लगीं। चिट्ठी-पत्री चलने लगीं।

कलकत्तेमें एक विराट सभा का अधिवेशन हुआ। बहुत

से अँगरेज़ सौदागर इस सभामें बुलाये गये। महामति गवर्नर ड्रेक साहबने सभापतिका आसन लिया।

सभास्थलमें बहुत से अँगरेज़ सौदागरोंका शुभागमन हुआ था। वह लोग व्यवसाय-वाणिज्य के एक दमसे बन्द होनेके कारण बड़े क्षतिग्रस्त हो रहे थे। इसके लिये आपसमें अपना अपना खेद प्रकाश करके कहने लगे, "इस तरह व्यवसाय-वाणिज्यके बन्द होनेसे यह क्षति कब तक उठाते रहेंगे? वास्तवमें नवाबको रुपये की आवश्यकता है, उनको मरहट्टोंसे लड़नेके लिये रुपया चाहिये, इसीलिये प्रपञ्च करके यह दोष लगाया गया है; परन्तु अब आप लोग अपना व्यवसाय चलाना चाहें तो जो कुछ वह मांगें उनको देकर पीछा छुटाना चाहिये; जिससे यह झगड़ा मिट जाय और वाणिज्य-व्यवसाय आरम्भ हो। रुपये के देनेमें कष्ट अवश्य होगा, क्योंकि निरपराध दण्डित किये जा रहे हैं; परन्तु यही समझ लेना चाहिये कि जितना रुपया देना पड़ेगा, उसकी अपेक्षा वाणिज्यके बन्द होनेमें कहीं अधिक क्षति होना सम्भव है।"

इस बातका समर्थन करता हुआ एक और अँगरेज़ सौदागर बोला, "यदि नवाबके साथ शीघ्र ही इस बातका निबटारा न हो जायगा, तो बहुत सम्भव है कि नवाब सदैवके लिये वाणिज्यका अधिकार बन्द कर दें; अतएव इस झगड़ेको तो जैसे बने समाप्त ही करना चाहिये। बङ्गाल वाणिज्यके लिये बहुत अच्छी जगह है। यहाँ का वाणिज्य हाथसे जाते

रहने पर हम लोगोंकी बल-बुद्धि, आशा-भरोसा, स्पर्द्धा-दर्प सब ही जाते रहेंगे; इसलिये इस कामको शीघ्र ही कर लेना चाहिये।"

ड्रेक—मेरी समझमें नवाबसे निबटारा कर लेना उचित है। जबकि बङ्गाल हमारे वाणिज्यका एक प्रधान स्थान है, जिसके बन्द हो जानेसे हम लोगोंकी असीम क्षति होगी, तो ऐसी अवस्थामें जो नवाब कहे वही हमको करना उचित है। यदि अन्याय है,तो एक बार वह भी सह लेना चाहिये। परन्तु सिराजुद्दौला इस समय युवराज है, वह हम लोगोंका घोर विद्वेषी है। ऐसी अवस्थामें, यदि हम लोग आप ही नवाबके दरबारमें जायँ और झूठा दोष स्वीकार करें और घटी पूरी करने पर उद्यत होवें, तो बहुत सम्भव है कि सिराजुद्दौला हमारा अपमान कर बैठे। क्षतिपूर्ण करानेके लिये न जाने कितना रुपया माँगे। ऐसी अवस्थामें जब तक कोई मध्यस्थ न हो, एकाएकी नवाब-दरबारमें न जाना चाहिये। पहिले मध्यस्थ द्वारा बात-चीत करके नवाबका अभिप्राय जान लेना चाहिये, तिस पीछे दरबारमें जाना ठीक है। मेरा यह परामर्श ठीक है कि नहीं, इस बातको आप लोग विवेचना करके निर्णय कर लीजिये।"

सब सभासद एक दम बोल उठे, "हाँ, यही परामर्श ठीक है। किन्तु नवाबके दरबारमें ऐसा कौन है, जो हमारी सहायता कर सके?"

यह सुन कर सब लोग चिन्तामग्न हो गये। थोड़ी देर पीछे वारनेल साहब ने निस्तब्धता भङ्ग की और धीरे धीरे बोले, "डाक्टर फोर्थ साहब नवाबके यहां जाते आते हैं। सम्भव है कि वह जानते होंगे कि दरबारमें किसका प्रभुत्व अधिक है।"

यह सुनकर सब लोग एक साथ बोल उठे, "ठीक बात है, डाक्टर फोर्थ साहब सब बातें बतला सकते हैं।"

फोर्थ—हां, नवाब-प्रासादमें मैं जाता आता हूँ और दरबार भी बहुत बार देखा है। मेरी समझमें नवाब दरबारमें जगत्‌-सेठ महताबचन्द का ही अधिक दबाव है। नवाब अलीवर्दी उससे परामर्श किये बिना, किसी काममें हस्तक्षेप नहीं करते हैं।

ड्रेक—तो हम लोगोंको उसी महताबचन्दसे कृपा-भिक्षा मांगनी होगी।

फोर्थ—मुझको विश्वास है, कि यदि जगत्‌सेठ महताबचन्द हमारे लिये नवाबसे अनुरोध करे, तो नवाब अलीवर्दी उसके अनुरोधकी उपेक्षा नहीं कर सकेंगे।

इस आश्वासन-वाक्यको सुनकर सभाके लोगोंमें एक प्रकार की आशा का सञ्चार हुआ। निविड़ अन्धकारमें मानों उजेले की रेखा दिखाई पड़ी। सब लोगोंने फोर्थ साहब को घेर लिया और बोले, "प्रिय महाशय! आप इस विषयमें कोई उपाय करें। हम लोग तो नितान्त ही निरुपाय हो गये हैं और दिन पर दिन क्षतिग्रस्त होते जाते हैं। हम लोगोंके

लिये थोड़ी सी मिहनत करके एक बार जगत्‌सेठ महताब चन्दके पास जाइये, और देखिये कि उनके द्वारा यदि वाणिज्य-अधिकार फिरसे मिल जाय तो बड़ा अच्छा हो।"

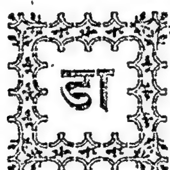
फ़ोर्थ—इस बातके लिये बहुत कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं है। अँगरेज़-जातिका प्रधान अवलम्बन व्यवसाय ही है। व्यवसायके सिवाय हम लोगोंको रुपया कमानेका और कोई उपाय नहीं है। क्या मैं इतना नहीं समझता हूँ कि व्यवसायका पथ बन्द होनेसे हम सब लोगों की बराबर ही हानि है। अपना वाणिज्य खो देनेसे, दो चार दस पांच मनुष्यों की कौन कहे, समग्र जातिके ऊपर आफ़त आ जायगी। इसमें सभी का स्वार्थ समान है। अतएव मैं यथासाध्य चेष्टा करूँगा। तोभी कह नहीं सकता हूँ, कि कहां तक कृतकार्य्य हो सकूँगा।

ड्रेक—चेष्टा, उद्यम, दृढ़ता, अध्यवसाय, अँगरेज़ोंके जातीय गुण हैं। इन्हीं गुणोंसे वह इतने बढ़े हैं। चेष्टा करने पर असाध्य कुछ भी नहीं है। आप प्रयत्न कीजिये, निश्चय ही कृतकार्य्य होंगे।

फ़ोर्थ—मैं बड़े आनन्दसे आप सब लोगोंका काम अपने ऊपर लेता हूँ। मैं अपनी ओर से त्रुटि नहीं करूँगा और कल ही मुर्शिदाबाद जाऊँगा।

उस दिनकी सभा भङ्ग हुई। सब अपने अपने स्थानको गये।

पाँचवाँ परिच्छेद ।



क्टर फोर्थ जगत्सेठ महतावचन्दके घर पहुँचे। गृहस्वामीने अतिथिको यथायोग्य अभ्यर्थना करके कहा, "आप बहुत देरसे आये। अब बहुत कम आशा है कि इस काममें कुछ सफलता हो।"

फोर्थ—आपकी इच्छा होने पर, आप सब कुछ कर सकते हैं। मैं आपका शरणागत हूँ। यह काम तो आपको करना ही होगा।

ईषत् हास्य करके जगत्सेठ महतावचन्दने कहा, "यह आपकी समझकी भूल है, क्योंकि मैं तो नवाब नहीं हूँ, कि मेरे हुक्मसे यह काम हुआ हो। जो बङ्गाल, बिहार और उड़ीसा के अधिपति हैं, जो विचार-कर्त्ता हैं, उन्होंने आपका वाणिज्य बन्द कर दिया है, इसमें मेरा कोई वश नहीं है। समय रहते, आप आये नहीं; समय रहते, आपने कोई चेष्टा नहीं की; अब जब कि समय निकल चुका है, तब चेष्टा करनेसे क्या होगा? विशेष करके युवराज सिराजुद्दौला आप लोगों से बहुत अप्रसन्न हैं। उनका यही प्रयत्न है, कि आप लोग

किसी तरह बङ्गालमें वाणिज्य न करने पावें। ऐसी अवस्थामें, आपको वाणिज्य फिरसे अधिकारमें करना बड़ा कठिन है। इसी कारण झूठा दोषारोपण भी लगाया गया है।"

थोड़ी देर तक दोनों हो चुपचाप रहे। शेषमें, वही श्वेताङ्ग पुरुष नीरवताको भङ्ग करके बोला, "तो क्या सत्य सत्य ही ईस्ट इण्डिया कम्पनीका वाणिज्य-अधिकार इस देश से लोप हो जायगा? सेठ जी! क्या इसका कोई उपाय नहीं है?"

सेठजी—मुझको तो कोई उपाय दिखाई नहीं देता, परन्तु यदि आपने कोई उपाय सोचा हो तो कहिये, मैं प्राणपणसे आपको सहायता करनेको प्रस्तुत हूँ।

फ़ोर्थ—हम लोगोंके ऊपर आपकी यथेष्ट दया और अनुग्रह है, इसको हम लोग खूब जानते हैं। इसी कारण मैं आपकी शरण आया हूँ।

सेठजी—महाशय! मुझे बहुत सी बातें करनी नहीं आतीं। यदि मेरे द्वारा किसी का कुछ उपकार हो जावे, तो बड़े सौभाग्य की बात है।

फ़ोर्थ—देखिये,नवाब बहादुर आपकी सलाहके बिना कुछ नहीं करते हैं, यह मुझे मालुम है और मुझे इस बातका यक़ीन है कि यदि आप मेरी ओर से अनुरोध करेंगे तो नवाब साहब आपके कथनको टालेंगे नहीं।

महतावचन्द—यह सत्य है, कि वह मेरे कहनेको अग्राह्य न करेंगे; परन्तु मैंने आज तक किसी बातका अनुरोध नहीं

किया है और मुझको इसमें भी सन्देह है कि आपके सम्बन्ध में मेरा अनुरोध सफल होगा कि नहीं ; क्योंकि सिराजुद्दौलाने सय्यद, आरमीनियन, मुग़ल, इराणी प्रभृति सौदागरोंको आपके विरुद्ध खड़ा किया है ; तो कैसे आशा की जा सकती है कि मेरे कहनेको वह मानेगा ? फिर एक और बात है, कि आप लोगोंने यह बात भी तो कही है कि आप लोगोंको बादशाह से बिना कर दिये वाणिज्य करनेका अधिकार मिला है। लेकिन यह फरमान तो केवल ईस्ट इण्डिया कम्पनी को ही मिला है और आप लोग सब ही राज्य में बिना कर के वाणिज्य करते हैं, जिससे राज्यको आय-सम्बन्धी बहुत बड़ी क्षति पहुँचती है। आप लोगोंने राज्यके आय-सम्बन्धमें बहुत से विघ्न डाले हैं। नवाब बहादुरको यह सब मालूम होने पर भी और युवराज सिराजुद्दौलाके अनुरोध उत्तेजना देने पर भी, वह आप लोगोंको राजदण्ड देना नहीं चाहते थे। सिराजुद्दौलाके इस नये बखेड़े से पीड़ित होकर अन्तमें उन्होंने यह आदेश प्रचार किया है। इस समय आप ही सोच देखिये, कि मैं क्या कह कर नवाब से अनुरोध करूँ ? मुझे तो ऐसी आशा नहीं है, कि वह आप लोगोंको निरपराधी समझें। तिसके ऊपर युवराज आपके घोर विरोधी हैं।

फोर्थ—जहाँ चार आदमियोंके हाथमें काम होता है, वहाँ पद-पद पर भूल हो जानेकी सम्भावना होती है ; परन्तु हमने कोई ऐसा अपराध तो किया नहीं है। उनके हुक्मकी अवज्ञा

अवश्य की है। तो क्या हम किसी भाँति माफ़ नहीं किये जा सकते ?

महताब—यदि नवाब बहादुरसे थोड़ी अनुनय-विनय करके कहा जाय तो आशा है कि वह अपराध मार्जना करके, आप लोगोंको वाणिज्य अधिकार दे सकते हैं; किन्तु युवराज सिराजुद्दौला को समझाना अथवा राज़ी करना बड़ा कठिन है। हम लोगोंका तो कहना ही क्या है? वह नवाबको भी न मानेगा। विशेष करके आप लोगोंके ऊपर तो उसकी बड़ी ही कड़ी दृष्टि है। वह इस बातका पूरा उद्योग कर रहा है, कि जिसमें बङ्गालसे अँगरेज़ सौदागरोंका वाणिज्य-अधिकार लोप हो जाय। जबकि सिराजुद्दौला आपके इतने विपक्षी हैं, तो बिना उनके सन्तुष्ट किये कुछ फल निकलनेकी आशा न करनी चाहिये।

फ़ोर्थ—अच्छा तो युवराज सिराजुद्दौलाकी अप्रसन्नताका कारण क्या है? क्या आप बतला सकते हैं? हम लोगोंने तो ऐसा कोई काम नहीं किया है, कि जिससे उनका विराग-भाजन बनना पड़ा है।

यह सुन कर जगतसेठ महताबचन्द कुछ मुस्करा कर बोले, "क्या आप जानते नहीं हैं, कि अर्थ ही सब अनर्थों का मूल है? आप का कर न देकर वाणिज्य करना ही, युवराजके विद्वेषको उद्दीपन करनेवाला है।

फ़ोर्थ—दिल्लीके बादशाहके फ़र्मान से ही हम लोग बिना

कर दिये वाणिज्य कर रहे हैं, इसमें हमारा क्या अपराध है? इसके लिये उनको इस तरहका विद्वेष-भाव क्यों रखना चाहिये?

महताब—यद्यपि आप लोग दिल्लीके बादशाहके फ़रमानके अनुसार ही, बिना कर दिये, वाणिज्य करते हैं; किन्तु युवराज इसको अपनी क्षति समझते हैं।

फ़ोर्थ—तो क्या वह हमसे कर लेना चाहते हैं?

महताब—नवाब बहादुरकी तो ऐसी इच्छा नहीं है, परन्तु युवराजकी है और वह आपसे कुछ रुपया भी वसूल किया चाहते हैं।

फ़ोर्थ—तो क्या वह दिल्लीके बादशाह के आदेशपत्रको रद्द करना चाहते हैं?

महताब—नवाब बहादुर तो नहीं चाहते हैं, किन्तु युवराजकी ऐसी इच्छा है। उनका इरादा ईस्ट इण्डिया कम्पनीसे कर वसूल करनेका है। केवल नवाबकी ही सम्मति नहीं है, इसी से वह रुके हुए हैं।

फ़ोर्थ—बादशाहका आदेश उल्लङ्घन करना क्या उचित है?

महताब—जिसके हृदयमें धर्म-भय नहीं है, जो गुरुजनोंकी आज्ञा पालन नहीं करता, अर्थकी लालसामें जिसका हृदय डूबा हुआ है, जो जानता है कि मैं सदैव ही इस जगत्‌में रहूँगा, वह सब कुछ कर सकता है; किन्तु अलीवर्दी जैसे

धर्मपरायण विचक्षण नवाब अपने प्रभुके आदेशको अन्यथा करना नहीं चाहते हैं।

फ़ोर्थ—तो क्या युवराज के प्रतिवादी होनेसे ईस्ट इण्डिया कम्पनी को अब बङ्गालमें वाणिज्य-अधिकार नहीं मिलेगा ?

महताब—यह बात मैं नहीं कह सकता हूँ। जिसका राज्य है, जो दण्ड-मण्डका कर्त्ता है, उसके रहते मैं क्या कह सकता हूँ ? विशेष करके उनकी इच्छाके विरुद्ध। किन्तु तोभी मैं नवाब-दरबारमें यथासाध्य उसी बातका यत्न करूँगा, कि जिसमें आप लोगोंको आपका वाणिज्य-अधिकार फिर से मिल जाय।

फ़ोर्थ—बस, इतना ही बहुत है। आपकी सहायता होने से हमारे कार्य्यकी सिद्धि अवश्य होगी। हम लोग आपके शरणागत हैं और आप भी शरणागतके रक्षक हैं। इस विपद् से हमारा उद्धार कीजिये।

मह०—महाशय ! मुझको बहुत बातें करनी नहीं आतीं। मैंने नवाब बहादुरसे कभी किसी बातका अनुरोध नहीं किया है। इस बार आप लोगोंके लिये, यह भी करूँगा। अच्छा हो, आप दरबारमें उपस्थित रहकर मेरे कार्य-कलाप को देख जायँ। मेरी यही इच्छा है, कि आपको वाणिज्य-अधिकार फिरसे मिल जाय। परन्तु एक बात आपसे पूछता हूँ, कि यदि नवाब बहादुर जहाज़ोंके लूटे जाने वाली बात पर ज़ोर देकर, आप लोगोंके ऊपर अर्थदण्ड

करना चाहें, तो क्या आप उस अर्थ-दण्डको देनेके लिये तय्यार हैं?

डाक्टर फ़ोर्थ बोले, "हम लोगोंपर आशा है कि बहुत भारी बोझ नहीं रक्खा जायगा, क्योंकि आपको सब हाल मालूम है कि हम लोग इस मामलेमें नितान्त ही निरपराध हैं—यह मिथ्या दोषारोपण हुआ है।"

मह०—यह बात नवाब बहादुरकी इच्छा पर निर्भर है। रुपये का लोभ दिखाकर भले ही राज़ी कर सको तो कर सको, बातोंसे तो कुछ भी नहीं होगा।

फ़ोर्थ—मैं आप ही के ऊपर सब भार अर्पण करता हूँ। आप जो कुछ ठीक समझें वही कीजियेगा।

मह०—मेरे ऊपर बोझ डालकर आप निश्चिन्त रहें, ऐसे काम नहीं चलेगा। आप लोगोंको भी नवाब-दरबारमें उपस्थित रहना पड़ेगा।

फ़ोर्थ—जबकि मैं सब ही बोझ आपके ऊपर रखता हूँ, फिर हम लोगोंके वहाँ उपस्थित रहनेकी क्या आवश्यकता है?

मह०—उपस्थित रहनेसे लाभके अतिरिक्त हानि तो कुछ नहीं है। आपकी दो चार खुशामद की बातोंसे कुछ न कुछ उपकार ही होगा और एक के दूसरे के सामने होनेसे आँखों की लज्जा भी होती है।

फ़ोर्थ—आपकी यह युक्ति बहुत ठीक है। मेरी

समझमें, विपन्न अँगरेज़ोंका आपसे अधिक और कोई हितैषी बन्धु नहीं है। जब तक अँगरेज़-जाति रहेगी, तब तक उसको आपका यह उपकार, यह सहृदयता, याद रहेगी।

इस प्रकार बात-चीत करते करते रातके ग्यारह बज गये। निशानाथ मानों किसी के भय से अन्धकारमें अभी तक छिपे हुए थे। अब अँधेरेमें से धीरे धीरे निकल कर, अपनी रजतरूप छटा चारों ओर फैलाते हुए, हँसते हँसते गगन-मण्डलमें दिखाई दिये। जल-थल, वृक्षोंकी चोटी, अट्टालिका इत्यादि पर सर्वत्र सुधांशु की विमल किरण-धाराएँ पड़ने लगीं, प्रकृति हास्यमई हो गई।

रातके ग्यारह बजते हुए सुन कर डाक्टर फ़ोर्थने कहा, "रात बहुत गई है,अब मैं विदा होता हूँ।"

महताब—इतनी रातको कहां जाओगे? आज हमारे यहाँ ही ठहर जाओ।

फ़ोर्थ—आपके व्यवहारसे मैं ऐसा सन्तुष्ट हुआ हूँ कि जिसका पार नहीं है। किन्तु मेरी धृष्टताको क्षमा कीजियेगा, क्योंकि मैं आपके अनुरोधकी रक्षा नहीं कर सकता हूँ। मुझ को और भी कुछ काम है, इसलिये मुझे अभी ही क़ासिम-बाज़ारकी कोठी जाना होगा।

महताब—आपके काम में मैं बाधा देना नहीं चाहता हूँ, इसलिये और देर करना आवश्यक नहीं है; किन्तु कल

यथासमय दरबारमें उपस्थित रहियेगा, यदि और भी दो चार मनुष्य हों तो अच्छा है।

"आप जो कहेंगे वही किया जायगा",—कह कर डाक्टर फोर्थ सेठ महताबचन्दसे हाथ मिलाकर विदा हुए।



छठा परिच्छेद।

बड़ा भारी दरबार लगा हुआ है। दरबार-गृह लोगोंसे लोकारण्य हो रहा है। नाना लोग नाना विषयके विचार-प्रार्थी होकर दरबारमें आये हैं, सभी हाथ जोड़े खड़े हैं। किसी के मुखसे कोई बात नहीं निकलती है। आँखोंमें मानो पलक ही नहीं हैं। सभी निर्निमेष नेत्रोंसे, उत्कण्ठित चित्तसे, नवाब की ओर देख रहे हैं। किस समय किसको क्या हुक्म हो, किस समय कौन बुलाया जाय, इससे विचार-प्रार्थी मात्र चौकन्ने हैं।

अँगरेज़ सौदागर भी इस दरबार-गृहमें विचार-प्रार्थनाके लिये आये हुए हैं। साधारण विचार-प्रार्थियोंकी अपेक्षा इन लोगोंको उत्कण्ठा कुछ अधिक है। कहीं ऐसा न हो कि सदैवके लिये वाणिज्य-अधिकार जाता रहे,—इसी चिन्तामें, इसी भावनामें, उनका प्रफुल्ल मुखमण्डल आज मलिन है, दुश्चिन्ता की गम्भीर कालिमा अङ्कित है।

जगत् सेठ महताबचन्द इस समय अँगरेज़ सौदागरोंके एकमात्र बन्धु और वर्त्तमान विपद्के सहायक हैं। इन्होंके

भरोसे पर अँगरेज़ सौदागर नवाब-दरबारमें उपस्थित होकर साहसपूर्वक विचार-प्रार्थनाके लिये खड़े हैं।

महतावचन्दने अपने आसनसे थोड़ी ही दूर पर अँगरेज़ सौदागरोंको भी आसन दिया था और सुखसे रहनेवाले अँगरेज़ वणिक किसी प्रकारका काष्ट न पावें, इसके लिये उनका बन्दोबस्त कर दिया था। वह लोग ऐसे स्थानपर थे, कि नवाबके सिंहासनपर बैठते ही नवाबकी दृष्टि सबसे पहले उन्हीं पर पड़े।

नवाब अलीवर्दीके वामभागमें जगत्सेठ महतावचन्दके बैठनेकी जगह थी, दाहिनी ओर युवराज सिराजुद्दौलाका सिंहासन था, उसके बाद और और गण्यमान्य राजा महाराजा मन्त्री और मित्र इत्यादिकोंके बैठनेकी जगह थीं।

नवाब अलीवर्दीका वेशभूषा कुछ बहुत परिपाटीके साथ नहीं था, परन्तु युवराज सिराजुद्दौलाके परिच्छद और वेशभूषाका तो कहना ही क्या था? उसके कपड़ोंके ऊपर एक बार जिसकी दृष्टि पड़ती, उसकी आँखोंमें चकाचौंध लग जाती। एक तो सिराजुद्दौलाकी नई वयस, तप्तकाञ्चन सी देह, अच्छी सुडौल गठन, तिसके ऊपर मोतियोंका हार और मणिरत्न जड़ी हुई पगड़ी, अँगरखेके भीतरसे रूपराशि मानों फूटी पड़ती थी। रूपकी प्रभासे सभास्थल आलोकित था।

सिराज विलासप्रिय युवक था। अलीवर्दी वृद्ध थे और परमार्थ-चिन्तामें मग्न थे। सिराज और वृद्ध नवाबके रूप और

वेशभूषाकी तुलना क्या हो सकती थी ? तो भी वृद्ध नवाबके कुञ्चित शिथिल अवयव और उनकी गठन देखनेसे, अब भी मालूम होता था कि वह वीरश्रेष्ठ हैं।

नवाब अलीवर्दी मसनदपर बैठकर बोले, "देखो सेठ जी ! ईस्ट इण्डिया कम्पनीने न तो लूटा हुआ द्रव्य ही वापिस दिया और न उसका मूल्य ही प्रदान किया और दरबारमें भी एक बार भी नहीं आये ! सामान्य वणिक होनेपर भी उन लोगोंको इतना दर्प है ! ऐसी स्पर्द्धा और नहीं सही जाती। मैं आज ही ईस्ट इण्डिया कम्पनीका सौदागरीका सामान और धन-रत्न इत्यादि जो कुछ होगा, सब राज-भाण्डारमें ज़ब्त कर लूँगा ! इतने दिनोंके पीछे मुझे ज्ञात हुआ है, कि यह वणिक-कम्पनी सरल स्वभावसे नहीं चलती है।"

सिराजुद्दौला यह सुन कर क्या चुप रह सकता था ? उसने मातामहको अँगरेज़ सौदागरोंके विरुद्ध और भी उत्तेजित करनेकी इच्छा से कहा, "नानाजी ! आप अब भी इन लोगोंको उचित दण्ड न देकर निश्चिन्त बैठे हैं ! आपकी इस ढील से ही इन लोगोंकी इतनी शक्ति बढ़ गई है। मैं तो बारम्बार आपसे यही कहता चला आता हूँ, कि यह लोग ऐसे सरल प्रकृति के नहीं हैं। इनका अभिप्राय सहजमें समझमें नहीं आता है। यह लोग अभी तक अक्षत शरीर बने हुए हैं, यही बड़े आश्चर्यकी बात है। यदि आप अनुमति दें, तो मैं अभी इनका दर्प चूर्ण कर दूँ। वह भी तो जानें कि देश

में राजा है, कि नहीं है, और उस राजाका अवाध्य होनेसे और शासन-दण्ड को उपेक्षा करनेसे क्या परिणाम होता है ?"

डाक्टर फ़ोर्थ और वाट्स साहब इस दरबारमें उपस्थित थे। नवाब और सिराजुद्दौला की इन बातों को सुन कर उन लोगों के भयके मारे प्राण निकल गये; जिह्वा सूख गई, मुखमण्डल विवर्ण होगया। सिराजुद्दौलाकी वह उग्र मूर्त्ति देख कर, बङ्गाल देशमें बाणिज्य करनेकी आशा उन लोगोंने बिलकुल ही छोड़ दीं। केवल यही नहीं, नवाब-दरबारसे अपना जीवन लेकर स्वदेशको लौट जाना भी उनको कठिन ज्ञात हुआ।

और अधिक देर न करके, जगत्-सेठ महताबचन्द ने डाक्टर फ़ोर्थ और वाट्स साहबको नवाबके सम्मुख आनेके लिये इशारा किया और उनको भयभीत देख कर साहस दिया। उन्होंने महताबचन्दके भरोसे पर नवाबके सम्मुख उपस्थित होकर यथारीति कोनिर्श की।

नवाबने पूछा, "आप लोग कौन हैं ?"

वाट्स—हमलोग इँगलैण्डके रहने वाले ईस्ट इण्डिया कम्पनीके कर्मचारी हैं।

सुनते ही मानों सिराजुद्दौला जल उठा और नाक भौं सिकोड़ कर अप्रसन्नता का भाव दिखाने लगा।

सिराजुद्दौलाका भाव देखकर और उनको कुछ कहने

का अवसर न दे कर महतावचन्दने कहा, "आप लोग किस अभिप्रायसे दरबारमें आये हैं?"

वाट्स, साहबने धीर, स्थिर और विनीत भावसे उत्तर दिया,—"नवाब बहादुरके पास विचार-प्रार्थनाके लिये।"

इस बार सिराजुद्दौला बड़े कर्कश स्वरसे बोल उठा, "जो राजाको नहीं मानता है, विचारको नहीं मानता है, जिसको शासनका भय नहीं है, उसका विचार-प्रार्थनाके लिये आना कैसा?"

बड़े धीर और नम्र भावसे डाक्टर फ़ोर्थने कहा,—"राजाको तो वही लोग नहीं मानते हैं, जो विद्रोही होते हैं। जो विद्रोही होते हैं, वही शासनका भय नहीं करते हैं। हम लोग विद्रोही नहीं हैं।"

इस बातके सुनतेही सिराज कुछ क्रोध और घृणाके स्वरमें कहने लगा, "क्या अँगरेज़ सौदागर विद्रोही नहीं हैं? यह तो नई बात है!"

फ़ोर्थ—हुज़ूरके लिये नई हो सकती है, परन्तु नई होने पर भी यह बात सत्य है। हुज़ूर विचारपति हैं, विचापतिके मुखसे अविचारकी बात नहीं निकल सकती है। यदि हम-लोग विद्रोही होते, तो क्या नवाब-बहादुरके पास विचार-प्रार्थी होकर आते?

सिराज—यह विचार-प्रार्थना अभी तक कहाँ थी? जिस समय पत्र लिखा गया था, उस समय तो पत्रके उत्तरमें दोष अस्वी-

कार करके क्षति पूर्ण करनेमें असम्मत हुए ; परन्तु अब जबकि वाणिज्य-अधिकार बन्द हो गया है तब दौड़े हुए आये हो और विचार-प्रार्थी भी हुए हो! यह भी तुम्हारी चतुरता है!

फ़ोर्थ—हमलोग सौदागर हैं, एक जगह नहीं ठहरते हैं। जलमें, स्थलमें, जहाँ कहीं मनुष्य हैं, वहीं हम लोग घूमते फिरते रहते हैं। इसी कारण हुजूरका हुक्म यथासमय न जान पाया और इसी कारण यथासमय दरबारमें उपस्थित होकर विचार-प्रार्थनाका सुयोग नहीं मिला। इस समय हम लोग विचार-प्रार्थनाके लिये हुजूरके सामने उपस्थित हैं। हुजूर! राजधर्म और सुविचारको लक्ष्य करके जान सकते हैं, कि अँगरेज़ सौदागर दोषी हैं कि निर्दोषी हैं।

यह सुनकर नवाब अलीवर्दी कुछ हँसकर बोले—"सेठजी! सुन लिया? अँगरेज़ सौदागर अब भी अपनेको निर्दोष बतलाना चाहते हैं।"

महताब—दोषी होने पर भी क्या कोई कभी अपना दोष स्वीकार कर सकता है?

सिराज—अँगरेज़ सौदागर समझते हैं कि वह निर्दोष हैं। परन्तु उनको यह नहीं मालूम है, कि उनके विरुद्ध यथेष्ट प्रमाण मिल चुके हैं। राज्यमें कोई वणिक अँगरेज़ों की तरह स्वाधीन प्रकृतिका नहीं है।

फ़ोर्थ—हुजूर! विचार-कर्त्ता हैं। आपके विचारमें जब

तक दोषी न ठहरें, तब तक हम किस प्रकार दोषी हो सकते हैं?

अली—क्या तुम यह कहना चाहते हो कि, ईस्ट इण्डिया कम्पनी निर्दोष है?

फोर्ड—हमारी समझमें तो ईस्ट इण्डिया कम्पनी निर्दोष है; परन्तु यदि हुजूरके विचारमें दोषी ठहरे तो वही ठीक है।

अली—यदि हम ईस्ट इण्डिया कम्पनीको अपराधी प्रमाणित करें और उक्त कम्पनी वास्तवमें निर्दोष हो, तो क्या कम्पनी अपनेको दोषी स्वीकार कर लेगी? किस लिये वह सदैवके लिये सफेदी पर स्याही लगवाना चाहेगी?

यह सुनकर वाट्स साहबने कहा कि—"जब कि राजा ही की इच्छा पर सब बात निर्भर है, तो उसके विचारसे दोषी निर्दोष और निर्दोषी दोषी हो सकता है। राजाके हुक्मको अन्यथा करनेकी क्षमता प्रजामें नहीं है। जो राजाज्ञाको न माने वही विद्रोही कहा जाकर राज-दण्डसे दण्डित किया जा सकता है। जहां राज-दण्डका भय है, वहां राज-आदेश न्यायके रूपमें हो अथवा अन्यायके रूपमें हो, प्रजाको उसके अन्यथा करनेकी क्या सामर्थ्य हो सकती है? जब राज-आदेशके विपरीत आचरण करनेसे विद्रोही कहा जाकर राज-दण्डसे दण्डित होना पड़ेगा, तब उस आदेशको उल्लङ्घन करनेका साहसी कौन हो सकता है? हुजूरके विचारमें हमलोग जैसे कुछ दोषी अथवा निर्दोष प्रमाणित हों, वही

इसको स्वीकार करना होगा। इसके अतिरिक्त और हम-लोग क्या कर सकते हैं?"

अली—तुमने जो आरमीनियन, मुग़ल और सैयद इत्यादि वणिकोंका सामान लूटा है इस बातको हमने अच्छी तरह सुन लिया है। यद्यपि दिल्लीके बादशाहकी सनदसे ईष्ट इण्डिया कम्पनीने इस देशमें बिना कर दिये वाणिज्य करने-का अधिकार पाया है; परन्तु उसने लोगोंपर अत्याचार करने अथवा उनका सर्वस्व लूटने की क्षमता अथवा आदेश नहीं पाया है। क्या तुम इस तरह पर लुटेरोंकी वृत्ति करके लोगोंका सर्वनाश करना चाहते हो? क्या तुमको मालूम नहीं है, कि अत्याचारीको कौनसे राज-दण्डका विधान है?

वाट्स—आप राजा हैं, दण्डमण्डके कर्त्ता हैं, जैसी इच्छा हो वही कर सकते हैं। किन्तु एकबार सोच देखिये, कि हमलोग सामान्य वणिकमात्र हैं। जब कि हमलोग व्यवसायके लिये इस देशमें आये हैं, तो अत्याचार-उपद्रव और लड़ाई-झगड़े से हमको क्या लाभ है? जन साधारण के साथ सद्व्यवहार ही व्यवसाइयों की उन्नतिका मूल कारण है। विशेषकर ईष्ट इण्डिया कम्पनीमें ऐसी नीच प्रकृतिका मनुष्य कोई भी नहीं है, जो लोगोंका सर्वस्व लूटले। और जहाँ राजा वर्तमान है, जिसका विचार जाज्वल्यमान हो रहा है, शासन-दण्डसे पृथिवी कम्पायमान है, वहाँ पर लोगों का सर्वनाश करके कौन राजदण्डसे दण्डित होने की वासना

करेगा? यद्यपि अँगरेज़ सौदागर रुपया कमानेके लिये जन्मभूमि छोड़कर, आत्मीय स्वजनों की माया-ममता तोड़कर, सात समन्दर तेरह नदी पार करके, इस बङ्गाल देशमें आये हैं; किन्तु यह लोग केवल वाणिज्यही करने को आये हैं, लूटने की आशासे नहीं आये हैं।

सिराजसे जब और कोई बात न बन आई तो दाँतो से दाँत पीसता हुआ बोला, "हाँ, यह अवश्य साधुता है। नानाजी! और निरर्थक बातों से क्या प्रयोजन है? इन लोगोंको अब एक क्षण के लिये भी राज्यमें स्थान न दीजिये। इनको अभी यहाँ से निकाल बाहर कर दीजिये।"

अली—तुम क्या कहना चाहते हो? आरमीनियन, सैयद, मुग़ल और एण्टनी इत्यादि का अभियोग क्या मिथ्या है? उन लोगों के सौदागरीके सामानके जहाज़ क्या लूटे नहीं गये?

फ़ोर्थ—यह मैं किस प्रकार कह सकता हूँ कि यह बात मिथ्या है? राजा साक्षात् धर्मस्वरूप होता है। उसी राजाके सामने उन लोगोंने अभियोग उपस्थित किया है, तो हुज़ूर के सामने मिथ्या अभियोग उपस्थित करनेके साहसी तो वे न हुए होंगे, क्योंकि मिथ्या अभियोग उपस्थित करनेवाले को भी दण्डका भय होता है।

अली—जब कि तुम कहते हो कि तुमने यह काम नहीं किया है, तो क्या तुम बतला सकते हो कि यह जहाज़ किसने लूटे हैं?

फोर्थ—यह बात हमलोग किस प्रकार जान सकते हैं ?

अली—तो क्या तुम यह कहना चाहते हो, कि तुमको इस विषयमें कुछ भी नहीं मालूम है ?

जगत्‌सेठ महताबचन्दने देखा कि दोनों अँगरेज़ निरपराध होनेके कारण अपने को अपराधी कहना नहीं चाहते हैं; परन्तु जब सिराजकी इच्छा दोष स्वीकार करानेकी है तो किस प्रकार निरपराधी रह सकते हैं। इसमें लाभके बदले हानि होनेकी सम्भावना अधिक है, यह समझ कर उन्होंने उन दोनों अँगरेज़ोंको इशारे से रोक दिया और बोले :—"नवाब बहादुर! इनके साथ निरर्थक तर्क-वितर्क करनेसे क्या होगा ? दोषी क्या कभी अपने दोषको स्वीकार करता है ? जहाज़ोंके लूटनेके सम्बन्धमें अँगरेज़ सौदागरोंके विरुद्ध यथेष्ट प्रमाण मिल चुके हैं, इस समय हुज़ूरके विचारमें जैसा कुछ आवे वैसा कर सकते हैं।"

अली—तो फिर ईस्ट इण्डिया कम्पनीको इस समय क्या दण्ड देना चाहिये ?

सिराज—नानाजी! आप इस सुयोग पर अँगरेज़ सौदागरोंको बङ्गाल देशसे निकाल देनेमें कभी अन्य मत न कीजिये। यदि इस अवसरको छोड़ देंगे, तो अन्तमें इनके कारण आपको इतना कष्ट होगा जिसका पार नहीं है। मेरी बात सुनिये, इनके ऊपर क्षमा प्रदर्शन न कीजिये—अब इन लोगों को वाणिज्य-अधिकार फिरसे न दीजिये।

भीतर भीतर सभी की यह इच्छा थी, कि अँगरेज़ सौदागरों को फिरसे वाणिज्य-अधिकार मिल जाय; क्योंकि सिराज की उस समय की बातें, दरबारमें जो लोग बैठे थे, उनमेंसे किसी को भी अच्छी न लगीं थीं। मन ही मन कह रहे थे, कि सिराजुद्दौला बड़ा अत्याचारी राजा है।

महताव—यद्यपि अँगरेज़ सौदागरोंने भारी अपराध किया है, किन्तु यह उनका पहिला अपराध है। लोग समझ की भूलसे ही अपराध करते हैं, इसलिये राजाका यही कर्त्तव्य है कि पहिले अपराधका भारी दण्ड न देकर हलके दण्ड की व्यवस्था करे। मेरी इच्छा है कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी को बङ्गाल देशके वाणिज्य-अधिकारसे एकबारगी वञ्चित न करके और कोई दण्ड दिया जाय, इससें नवाब बहादुरका सुयश होगा।

अँगरेज़-द्वेषी सिराजुद्दौलाको यह बात अच्छी नहीं लगी। वह जगत्‌सेठ महतावचन्द पर बड़ा ही क्रोधित हुआ और रोषसे तर्जन-गर्जन करता हुआ बोला, "अँगरेज़ सौदागरोंने जो काम किया है, उसका उपयुक्त दण्ड यही है कि बङ्गाल देशमें उनका वाणिज्य-अधिकार बन्द कर दिया जाय। इतना भारी दण्ड न देनेसे उनको कभी चैतन्यलाभ न होगा।"

अली—ईस्ट इण्डिया कम्पनी पर और कौनसा दण्ड लगाया जा सकता है? महताव! अर्थ-दण्ड क्या उपयुक्त दण्ड नहीं होगा?

सिराजुद्दौला नाक भौं सिकोड़ कर बोला,—"अर्थ-दण्डको मैं दण्ड नहीं समझता हूँ।"

महताब—जो लोग पिता-माताको छोड़कर, जन्मभूमिकी ममता छोड़कर, वाणिज्यका सामान सिर पर रखकर, सात समन्दर तेरह नदी पार करके, इतनी दूर बङ्गालदेशमें आये हैं; जिनका वाणिज्य ही एकमात्र जीविका है, क्या अर्थ-दण्ड उनके लिये उपयुक्त दण्ड नहीं है?

अली—सेठजी! आपकी सलाहको मैं युक्तिसङ्गत समझकर ग्राह्य करता हूँ। किन्तु इन लोगोंने जो काम किया है, उसके लिये कितना अर्थदण्ड ठीक होगा?

महताब—आप विचारपति हैं, आप जितना ही ठीक समझें उतना ही दण्ड करें। इसमें मैं क्या कह सकता हूँ?

नवाब अलीवर्दी इस बार सिराजुद्दौलासे परामर्श करने लगे। मातामह और दौहित्रके बीच बहुत सी बात-चीत, तर्क-वितर्क होनेके बाद, अन्तमें सिराजुद्दौला और नवाबका एक मत हो गया।

अली—यदि अर्थदण्ड से ही ईस्ट इण्डिया कम्पनीको दण्डित करना होगा, तो मैं सोलह लाख रुपया दण्ड करता हूँ। यदि अँगरेज़ सौदागर इस इतने दण्डको दे सकेंगे, तो फिर बङ्गाल देशमें उनको वाणिज्य-अधिकार प्राप्त होगा; नहीं तो हमारे राज्यमें ईस्ट इण्डिया कम्पनीको वह अधिकार नहीं रहेगा।

इस इतने अर्थदण्डसे दण्डित होने पर डाक्टर फ़ोर्थ और वाट्स साहबने हाय-वावेला मचाना आरम्भ किया और बहुत कुछ विनती करने लगे ।

इस बार जगत्सेठ महताबचन्द ईस्ट इण्डिया कम्पनीका पक्ष लेकर बोले, "अँगरेज़ोंके प्रति बहुत बड़े दण्डकी व्यवस्था हुई है ।"

अली—आप क्या कहते हैं ? क्या यह दण्ड अधिक हुआ है ?

महताब—अधिक न होता, तो यह बात क्यों कही जाती ?

सिराज—वणिक होकर अँगरेज़ोंने जो काम किया है, उसे देखते यह दण्ड कुछ बहुत नहीं है ।

महताब—आपको विवेचनामें यह दण्ड अधिक प्रतीत नहीं होता है ; क्योंकि आप बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाके भावी नवाब हैं । परन्तु अँगरेज़ सामान्य वणिक मात्र हैं । वाणिज्यसे ही जिनकी जीविका है, उनके लिये क्या यह भारी दण्ड नहीं है ? आप राजा हैं, आपको अर्थका अभाव नहीं है ; परन्तु जो साधारण स्थितिके लोग हैं, एक रुपया पा जानेसे जिनके आनन्दकी सीमा नहीं रहती है, उनके लिये क्या यह भारी दण्ड नहीं है ? नवाब बहादुरने ऐसा भारी दण्ड दिया है, यही नई बात है ।

अलीवर्दी—यदि आपकी समझमें यह अधिक है, तो बतलाइये कितना होना चाहिये ।

महताब—मेरी समझमें बारह लाख रुपये ठीक होंगे ।

यह सुनते ही सिराजुद्दौला चौंक पड़ा और बोला, "नहीं, यह कभी नहीं हो सकता। कहाँ सोलह लाख, और कहाँ बारह लाख. ऐसी कमी कैसे हो सकती है? मैं इस प्रस्तावसे किसी प्रकार सम्मत नहीं हो सकता हूँ।"

अली—सेठजी! अँगरेज़ सौदागरोंके लिये क्या आप यही उपयुक्त दण्ड बतलाते हैं? ईस्ट इण्डिया कम्पनीने जो काम किया है, उसके दण्डस्वरूपमें बारह लाख रुपया क्या उपयुक्त दण्ड हो सकता है? मैं आपके इस अनुचित अनुरोधको किसी प्रकार रक्षा नहीं कर सकता।

महताब—ईस्ट इण्डिया कम्पनीने नितान्त अन्याय का काम किया है; परन्तु मेरे अनुरोधसे, एक बार अनुग्रह करके, क्षमा कीजिये। व्यवसाय और वाणिज्य जिनके प्राण हैं, उसी वाणिज्यके बन्द कर देनेसे इनकी बड़ी क्षति हो रही है। इस समय आपकी दयाके सिवाय इन लोगोंके परित्राणका और कोई उपाय नहीं है।

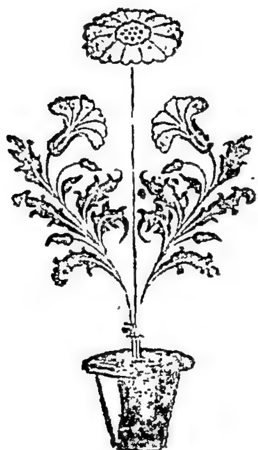
जगत्सेठ महताबचन्दने इस प्रकार ईस्ट इण्डिया कम्पनीके पक्षमें नवाबसे बहुत कुछ अनुरोध किया और बहुत कुछ बिनती खुशामद भी की। दूसरी ओर वाट्स साहब और डाक्टर फ़ोर्थ दोनों ही ने रोना-पीटना, अनुनय विनय और कातरता दिखलानेमें त्रुटि नहीं की।

नवाब अलीवर्दी ने जब यह अवस्था देखी, तो जगत्सेठ महताबचन्द के अनुरोधको टाल न सके और सोलह लाखकी

बदले ईस्ट इण्डिया कम्पनी पर बारह लाख रुपया दण्ड करके छुट्टी कर दी।

जगत्सेठ महताबचन्द की कृपासे, बारह लाख रुपया दण्ड देकर, अँगरेज़ सौदागरोंने इस बार परित्राण पाया और अपना वाणिज्य-अधिकार फिरसे ले लिया।

इस प्रकार जगत्सेठ महताबचन्द और अँगरेज़ सौदागरोंसे सौहार्द्र हो गया। अँगरेज़ोंने महताबचन्द को अपना परम बन्धु माना।



सातवाँ परिच्छेद।

इन्द्रियाँ मनुष्यकी प्रधान शत्रु हैं। मनुष्यमें चाहे कितने ही गुण क्यों न हों, एक इन्द्रियोंकी उत्तेजनासे सभी गुण दोषमें परिणत हो जाते हैं। इससे बढ़कर चौड़ा रास्ता अधःपतनके लिये और दूसरा नहीं है।

इन्द्रियपरायण सर्वदा ही मधुपानकी अभिलाषामें भौंरेके समान लोलुप होता है। रमणीको देखते ही उसके प्रति आसक्ति उत्पन्न हो जाती है।

दोष हो, अथवा गुण हो, अच्छा हो, अथवा बुरा हो, जो स्वभावमें आ गया है, वह छोड़ देना मनुष्यके अधिकारमें नहीं है।

सङ्गतिके फलसे अथवा प्रमत्त यौवनके गुणसे सिराजुद्दौला के चरित्रमें जो दोष हो गया था, उसको वह किसी तरह छोड़ न सका। जितना ही समय बीतता गया, वैसे ही वैसे उसकी पापेच्छा उत्तरोत्तर वृद्धि पाती गई।

जो सिराजुद्दौला एक दिन फ़ैज़ीके प्रेमसे हताश होकर नारी-जातिके प्रति इन्द्रियजित हो गया था, जो सिराजुद्दौला

फ़ैज़ीको एक दिन अविश्वासिनी देखकर नारीमात्रको अविश्वासिनी समझ बैठा था, जो सिराजुद्दौला एक दिन फ़ैज़ीके व्यवहारसे मर्म्माहत होकर नारी जातिका मुख देखने तकको अनिच्छुक हो गया था, जो सिराजुद्दौला लुत्फुन्निसाके रूप गुण और प्रेमसे आकृष्ट होकर और दूसरी रमणीकी प्रणय-इच्छा एकबारगी परित्याग करके उसके प्रेममें आबद्ध हो गया था, वही सिराजुद्दौला अब इन्द्रियोंकी प्रबल ताड़नासे रमणीको देखते ही उसकी ओर लोलुप-दृष्टिसे देखने लगता है। कन्दर्प ! धन्य तुम्हारी शक्ति !

पतितपावनी भागीरथवंशोद्धारिणी भागीरथीकी धारामें हिलोरें खाती नाचती हुई एक नौका जा रही है। यद्यपि नौका सामान्य काष्टकी बनी हुई है, परन्तु बड़ी कारीगरी और कलाकौशलसे बनाई गई है। उसके एक ओर मोरकी तस्वीर बनी है, दूसरी ओर एक मछलीकी आकृति है। नौका प्रायः तीस हाथ लम्बी है। एक तो वह नाना वर्णसे रञ्जित हैं, तिसके ऊपर तरह तरहके महामूल्य असबाबसे सज्जित है। जो कोई इस नौकाको एक बार देखता है, वह उसके निर्माण-कौशल, कारीगरी और साज-सज्जाकी प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकता। एक बार देखनेसे दर्शन पिपासा नहीं मिटती है, बारम्बार देखनेकी इच्छा होती है।

जिसको एक बार देखकर फिर देखनेकी इच्छा होती है,

जिसको देखकर शतमुखसे प्रशंसा किये बिना नहीं रहा जाता है, वह सुन्दर नौका किसकी है ?

वह नौका बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाके नवाब अलीवर्दी की आँखोंके तारे, भावी उत्तराधिकारी, युवराज सिराजुद्दौला की है।

हीरा झील जिसके यत्नसे बनी है, उसकी नौका यदि मन को मुग्ध करनेवाली हो तो आश्चर्य ही क्या है ? विशेष करके जो बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाके नवाबकी आँखोंकी पुतली है, उसको रुपयेका अभाव नहीं है। उसकी विलास-नौका जन साधारणका मनमुग्ध करे, यह असम्भव नहीं है। परन्तु एक बात कहने की यही है, कि केवल रुपया रहनेसे ही सर्वजनप्रशंसित नौका नहीं बन सकती है, बनवानेवाले की रुचिकी भी आवश्यकता है।

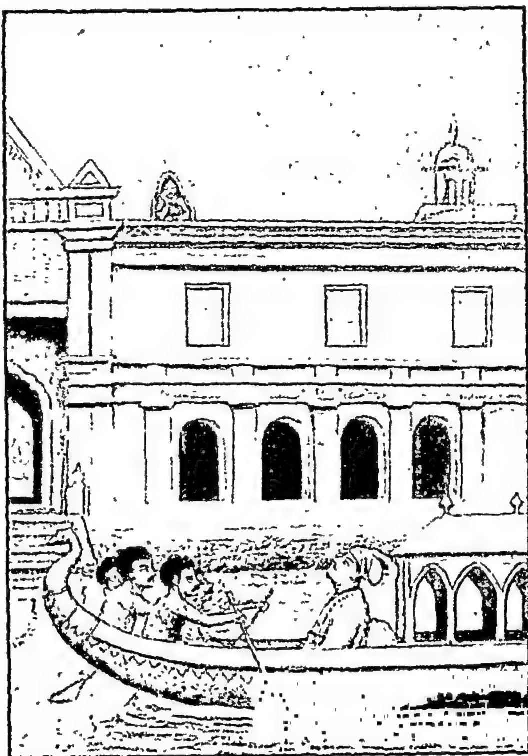
यद्यपि सिराजुद्दौलाकी यह नौका साधारण लोगोंके नेत्र, और मनको तृप्त करनेवाली और प्रशंसा करने योग्य थी ; यद्यपि पहिले लोग सुनकर कि यह नौका भागीरथीमें चलेगी, उसको दौड़कर देखनेको आते थे ; कुलवती, सती स्त्रियाँ भी घूँघट खोलकर निर्निमेष नेत्रोंसे उसे देखती थीं। परन्तु कुछ ही दिन व्यतीत होने पर, इस नौकाका नाम सुनते ही वह लोग भयभीत हो जाती थीं। नौकाका आगमन-सम्वाद पाते ही, गङ्गाका घाट छोड़ छोड़ कर भाग जाती थीं। घर पहुँचने पर भी भयसे द्वारकी साँकल लगा लेती थीं।

जिस नौकाके देखनेके लिये लोग व्यग्र होते थे, कुलनारी घरसे बाहर निकल कर भागीरथीके किनारे आकर उसके दर्शन करती थीं, आज उसी नौकाका आगमन-सम्वाद पाकर नारीगण भयभीत होकर क्यों भागती हैं? तो क्या उस नौका के मोर और मछली कुल-नारियोंके यम हैं? नहीं, यह बात नहीं है। उस नौकाका मालिक उन सतियोंका यमस्वरूप है।

जब कुलवतियोंने जान लिया, कि इस नौकाका अधिपति सती-कुलका राक्षस है; तो इस नौकाको भी उन्होंने अपना यम मान लिया। उसका नाम सुनते ही वह भयभीत हो जाती थीं, और आगमन-सम्वाद पाते ही भाग जाती थीं।

सिराजुद्दौला विलासप्रिय अवश्य था, किन्तु बहुत सा खर्च करके तरह तरहकी कारीगरी और साज-सज्जासे सज्जित करके सर्व्वजन-मनोमुग्धकारी नौका निर्माण करानेका उसका एक और आशय था। वह यह था, कि इस सुन्दर नौकामें सङ्गियोंको लेकर गङ्गावक्ष पर घूमते समय जो कुलवती युवती और स्वरूपवती सती घाटों पर आवें, उनमें कौन कैसी है यह देख लेवे और जो रूपवती हो उसको किसी न किसी उपाय से अपनी अङ्कशायिनी बनावे। बस, इसी अभिप्रायसे यह नौका बनी थी।

सिराजुद्दौला अपनी नौकामें सङ्गियोंको लेकर भागीरथीके वक्ष पर घूमता था। विहार-कालमें उसकी तीव्र दृष्टि गङ्गाके किनारे ही पर रहा करती थी। यदि कोई नारी उसकी



सिराजुद्दौला का किश्ती में बैठकर रानी भवानी के महल के नीचे से गुज़रना और तारा को देखना।

Narsingh Press, Calcutta.

प्रखर दृष्टिके पथमें आती और यदि उसके नेत्र उस नारीके रूप-यौवन पर आकृष्ट होते; तो छल, बल, कौशल, अर्थ अथवा भय दिखाकर जैसे होता वैसे उसको अपनी अङ्कशायिनी बनानेकी चेष्टा करता था।

दिन प्रायः अवसान पर है। सूर्य्य दिन भर अविश्रान्त किरणें प्रदान करता करता मानों थककर विश्रामके लिये पश्चिम-आकाशमें चला गया है। उसकी आरक्ताभ किरणें छोटे बादलोंके टुकड़ोंमें निकलकर अपूर्व्व शोभा फैला रही हैं। वृक्ष मानों लोहितवर्ण की पगड़ी धारण किये हुए सन्ध्या-कालकी समीरणसे मानों खेल रहे हैं। सन्ध्याकी वायु मृदुमन्द गतिसे चल रही है। कोयलें सन्ध्या देवीका आगमन देखकर अपने अपने घोंसलोंकी ओर जा रही हैं। दिवाकरके अस्ताचल जानेके लिये, धरा देवी मानों एक अभिनव सज्जासे सज रही है।

ऐसे समयमें सिराजुद्दौलाकी नौका नाचती कूदती गङ्गाके वक्ष पर मन्द गतिसे चलती हुई वरनगरमें आकर उपस्थित हुई। सिराजुद्दौलाकी दृष्टि राजपक्षीकी तरह प्रखर थी। आँखोंके तारे कुम्हारके चाककी तरह चारों ओर घूमते थे। सहसा उसकी वही प्रखर दृष्टि एक प्रकाण्ड दो-मञ्जिली अट्टालिकाके ऊपरी भाग पर पड़ी। उसने देखा कि मानों उसकी आँखोंके सामने बिजली चमक गई। विस्मयके कारण उसकी आँखें फट गईं। अपने सङ्गियोंसे बोला,"देखो! देखो! उस दो

मञ्जिले मकानके ऊपरी भागमें कौन रूप-लावण्यकी खान खड़ी हुई है। वह मनुष्य है कि परी!"

नौकामें जितने थे सभी उसके रूप-लावण्यको देखकर मोहित हो गये। सब एक वाक्यसे बोल उठे, "अहा! क्या चमत्कारी रूप है! नारीका तो ऐसा रूप कभी देखा नहीं!"

इस रूपको देखकर सिराजुद्दौलाका धैर्य जाता रहा। केवल उसी रूपकी उधेड़-बुनमें लग गया। सम्राट अलाउद्दीन जिस तरह राजपूत-रमणी पद्मिनीके भुवनमोहन सौन्दर्य को देखकर विमुग्ध होकर उसे अपने वश करनेको उन्मत्त हो गया था, आज सिराजुद्दौला का भी वही हाल हुआ।

यह रमणी कौन है, किसकी कन्या है, किसकी भार्या है? अनुसन्धानके लिये सिराजुद्दौलाने गुप्तचर भेजे।



आठवाँ परिच्छेद।

यह कौन रमणी है, क्या पाठक जानना चाहते हैं? आशा है कि आपने सुना होगा और इतिहासमें भी पढ़ा होगा। जिसकी कीर्त्ति की कथा, दानशीलताकी कथा, इतिहासके पत्र-पत्रमें स्वर्ण-अक्षरोंसे लिखी हुई है, जिसकी कीर्त्ति का स्तम्भ मुर्शिदाबादके बरनगरमें अब तक विद्यमान है, जिसका नाम लोगोंको प्रातःस्मरणीय है, मैं उसी पुण्यवती सती रानी भवानी की बात कहता हूँ।

बरनगरमें, भागीरथीके पश्चिमी किनारे पर, जो एक प्रकाण्ड अट्टालिका दिखाई दे रही है, वह और किसी की नहीं है, पुण्यवती रानी भवानीका प्रासाद है और जो रमणी अट्टालिका की छत पर मृदु मन्द गतिसे विचरण करती हुई वायु-सेवन कर रही है, उसका नाम तारादेवी है। तारा देवी रानी भवानी की एकमात्र सन्तान है।

तारादेवी बाल-विधवा थी। अल्प वयसमें ही उसको इस दारुण दशामें उपनीत होना पड़ा था। किन्तु तारादेवी

अपनी माताके साधु आदर्शसे गठित हुई थी। उसने भी अपनी माताकी तरह अनेक सत्कार्यके अनुष्ठान किये थे।

यद्यपि तारादेवी बाल-विधवा थी, किन्तु वैधव्यके दारुण पीड़न से उसका रूप लावण्य मलिन न होकर और भी वृद्धि पा गया था। सिराजुद्दौला इन्द्रियपरायण था। वह उसका भुवनमोहन रूप देखकर एकबारगी उन्मत्त होगया।

सिराजुद्दौलाने अनुसन्धान से जान लिया, कि यह रमणी रानी भवानी की कन्या है, और नाम तारासुन्दरी है।

कामान्ध युवक सिराजुद्दौलाको यह सब हाल जान लेने पर भी चैतन्य नहीं हुआ। उसने एक बार भी नहीं सोचा कि वह किसकी कन्या पर आसक्त हुआ है, और किसके लिये उन्मत्त हो रहा है। रानी भवानी की बराबर भूसम्पत्तिका अधिकारी राजशाहीमें उस समय कोई नहीं था। जिसके राज्य की परिक्रमा करने में पैंतीस दिनसे अधिक लगते थे, जिसकी ज़मीन्दारी की आय डेढ़ करोड़ से अधिक थी, जिसके इशारे मात्र से सहस्रों नरनारी अनायास अपने प्राण विसर्जन कर सकते थे, उसी रानी भवानीकी एकमात्र कन्या तारादेवी है। उसके पाने की आशा, उसके प्रति आसक्ति, कहाँ तक ठीक है, वह आशा पूर्ण होगी कि नहीं, इन सब बातोंको उसने एक बार भी नहीं सोचा और बिना कुछ सोचे विचारे रानी भवानी की कन्याको हरण करके ले आनेका उद्योग करने लगा।

सिराजुद्दौलाके चित्तमें यह अहङ्कार और धारणा थी, कि वह नवाब अलीवर्द्दीका उत्तराधिकारी है ; बङ्गाल विहार और उड़ीसाका भावी नवाब है—बङ्गाल, विहार और उड़ीसाके सभी मनुष्य उसके आधीन और उसकी प्रजा हैं ; प्रजाको जिस समय राजा जो आदेश करेगा, प्रजा विना कुछ कहे सुने तत्‌क्षण उसको मञ्जूर करेगी ; राजाके किसी काममें प्रजाको वाधा देनेकी क्षमता नहीं है और विशेष करके प्रवल प्रतापान्वित युवराजके काममें प्रतिवादी होनेका साहसी कौन होगा ? रानी भवानी ? वह क्या कर सकती है ?

ऐसा भ्रमात्मक विश्वास करके सिराजुद्दौला उक्त गर्हित काम करनेमें प्रवृत्त हुआ। उसने एकवार भी न सोचा, कि रानी भवानी ब्राह्मण की कन्या है, तिस पर भी ऐसी धार्मिक है। जप, तप, दान, ध्यान, पूजा आन्हिक अतिथि-सेवा इत्यादि नाना प्रकारके सत्कार्य्योंमें दिन-रात लिप्त रहती है। पुण्य सञ्चय करने के लिये, अपना राजशाहीका राज्य छोड़कर वरनगरमें पवित्र भागीरथीके तीर पर आकर वसी है। यह ब्रह्मचारिणी रानी भवानी क्या कभी अपनी कन्याको परपुरुष के हाथमें देसकती है ? जिसको धर्म्म अधर्मका ज्ञान है, अपने धर्म्ममें श्रद्धा है, इहकाल और परकालमें विश्वास है, पाप-पुण्यका वोध है, देवता ब्राह्मणमें निष्ठा है, वह क्या इहलोक धर्म्मविगर्हित कामका अनुमोदन कर सकती है ?

कामके वशीभूत होकर किसकी ज्ञान-वुद्धि लोप नहीं

हो जाती है ? सिराजुद्दौलाका भी यही हाल हुआ । नहीं तो क्या समझ कर वह इस काममें प्रवृत्त हुआ ?

सिराज ! वैरी कामको प्रबल ताड़ना से तुम्हारी बुद्धि-विवेचना निश्चय ही लोप होगई है । यद्यपि तुम नवाब अली-वर्दीके उत्तराधिकारी हो—वर्तमान युवराज हो—बङ्गाल, विहार और उड़ीसाके भावी नवाब हो,—किन्तु इतना होने पर भी रानी भवानी की तरह अतुल भूसम्पत्तिकी अधिकारिणी धर्म्मपरायणा रमणी क्या कभी तुम्हारे इस जघन्य प्रस्तावसे सम्मत हो सकती है ? हिन्दू लोग धन नहीं चाहते, प्राणोंकी ममता नहीं रखते, चाहते हैं केवल कुल-मान और जातीय गौरव ! इस कुल-गौरवका मर्म हिन्दूके अतिरिक्त और कोई भी इतना नहीं जानता है ।



नवाँ परिच्छेद।

नारीका रूप और पुरुषका ऐश्वर्य्य, दोनों ही सर्वनाशके कारण होते हैं। तारादेवी यदि असाधारण सुन्दरी न होकर कुत्सित और कुरूपा होती, यदि उसकी रूप-माधुरी देखकर लोगोंका मन सहसा आकृष्ट और मुग्ध न होजाता; तो उसको देखकर सतीकुल-राक्षस सिराजुद्दौला कभी उसपर मुग्ध होकर उसका प्रेमाभिलाषी न होता और न उसको ले आनेके लिये लोगों को भेजता।

जब रानी भवानीने सुना, कि सिराजुद्दौला, उसकी तनयाके भुवनमोहन रूप-लावण्यके दर्शन करके, उसका प्रेमाभिलाषी हुआ है और उसके हरण करनेके लिये उद्यत हो रहा है; तो उसके सिरपर मानों वज्रपात हुआ, भयके मारे सारा शरीर काँपने लगा, चारों ओर अन्धकार दिखाई देने लगा। चीत्कार करके बोली, "बेटी! क्या तेरे भाग्यमें यह भी लिखा था!" और यह कह कर वह अचेत हो गई।

बहुत कुछ शुश्रुषा करनेके बाद रानी भवानीको चैतन्यता हुई। चेत होनेपर वह बड़े चिन्तासागरमें डूब गई। किस

प्रकारसे कुल-मानकी रक्षा होगी, किस तरह तनयाके सतीत्व-धनकी रक्षा होगी, और किस युक्तिसे इस दुरन्त सिराजु-द्दौलाके हाथसे छुटकारा पावेगी, इसी चिन्तामें, इसी भावनामें, वह मग्न हो गई। विक्षोभित सागरके जलकी तरह हृदय उथल-पुथल होने लगा।

रानी भवानी यद्यपि रमणी थी, तथापि उसकी ज्ञानवुद्धि रमणियोंकी सी नहीं थी। अच्छे मन्त्रीलोग जिस उपायको विचार करनेमें असमर्थ होते थे, रानी अनायास ही और थोड़े ही चिन्तनसे उस उपायको स्थिर कर सकती थी। इस लिये किसी भी मन्त्रणामें, किसी भी राजकार्यमें उसको आमात्य लोगोंसे परामर्श नहीं करना पड़ता था।

रानी भवानीने समझ लिया, कि सिराजुद्दौलाकी यह पापलिप्सा सहजमें निवारण होने की नहीं है। अर्थ, राज्य-विनिमय अथवा सदुपदेश किसीसे भी यह पाप-प्रवृत्ति निवृत्त न होगी। तो भी यदि सिराजुद्दौलाकी पाप-इच्छाको दमन करनेके लिये विघ्नबाधा डाली जाय, अथवा नवाब अलीवर्दीके भविष्यत् उत्तराधिकारसे वह वञ्चित किया जाय; तो उसकी यह प्रवृत्ति किसी न किसी दिन निवृत्त हो सकती है। किन्तु सिराजुद्दौलाके विरुद्ध खड़ा कौन होगा? कौन उसके काममें बाधा डालेगा? इतना साहस किसीको है? तो क्या रानी भवानी भयके कारण ताराको सिराजुद्दौलाके हाथमें समर्पण कर देगी?

जो हिन्दूकुलके मुखको उज्ज्वल करनेवाली है; जिसका नाम लोग प्रातःकालमें उठतेही लेते हैं; जो श्वेतवस्त्र पहिननेवाली ब्रह्मचारिणी है; जिसकी कीर्त्तिकी कथा, तेजस्विता और दानशीलता की कथा, लोग उच्चस्वरसे गाते हैं; वही धर्म्मगत-प्राणा रानी भवानी क्या कभी हिन्दूकुल और हिन्दू नाममें कलङ्क लगाकर, अपनी तनयाको सिराजुद्दौलाके हाथमें दे सकती है? यदि धर्म-रक्षाके लिये, तनयाकी सतीत्व-रक्षाके लिये, फांसी लगाकर विष पान करके अथवा प्रज्वलित चिताका आश्रय लेकर अपने कुल-मान, कुल-गौरवकी रक्षा करनी पड़े, तो वह भी करेंगी; लेकिन रानी भवानी जीवन रहते ताराको सिराजुद्दौलाके हाथमें अर्पण करके हिन्दू-नाममें कलङ्क नहीं लगावेंगी। विशेष करके जो हिन्दू नरनारी धर्मको अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय मानते हैं, जो हिन्दू स्त्रियाँ अपने सतीत्व को जगत् संसारके यावतीय धनरत्नकी अपेक्षा बढ़कर समझती हैं, उसी धर्मको क्या हिन्दू सहजमें त्याग सकते हैं? उसी अमूल्य सतीत्वरत्नको सती नारी प्राण रहते क्या कभी किसी दूसरेको दे सकती है? यदि ऐसा कर सकती, तो हिन्दूका गौरव, भारतवर्षकी सती-महिमा इतनी बढ़ी हुई न होती।

बहुत कुछ सोचने विचारनेके उपरान्त रानी भवानीने एक उपाय ढूँढ़ निकाला। उसने कुछ नौकरोंको बुलाकर आदेश दिया,—"तुम साधक बाग़में मस्तराम बाबाजीको सम्वाद

दो कि वह अपने दलबल और हथियारोंको लेकर अभी यहां चले आवें।"

साधक बागमें सम्वाद पहुँचा। मस्तराम बाबाजी सम्वाद पाते ही चार पाँच सौ वैरागी साथमें लेकर बरनगरमें रानी भवानीके भवन पर आपहुँचे और अधिक विलम्ब न करके उससे मिलनेके लिये अन्तःपुरमें गये।

मस्तराम बाबाजी रानी भवानीके बड़े विश्वासी और अनुगत थे। वह सदा रानीसे सहायता पाते रहते थे। वह रानीसे माँ कहकर बोलते थे। रानी भवानी केवल मस्तराम बाबाजीके ही जननी-पद पर अधिष्ठित थी, ऐसा नहीं था। वह अपने दास-दासी और दीन, दुखी सभीको जननी स्वरूपा थी और सभी उसको 'रानी माँ' कहकर पुकारते थे।

मस्तराम बाबाजी रानी भवानीके पास पहुँचकर साष्टाङ्ग प्रणाम करके बोले, "मा! मुझको दलबलके साथ क्यों बुलाया है?"

रानी भवानीने आशीर्वाद देकर बैठनेको कहा। मस्तरामके बैठनेपर रानीने कहा, "वत्स! और क्या कहूँ, दुराचारी सिराजुद्दौलाके कारण लोगोंको कुलमानकी रक्षा करना कठिन हो गया है। पापीके कराल कवलसे सतीके सतीत्वका रक्षा पाना बड़ा कठिन है। पापिष्ट नारी-कुलका राक्षस हो गया है। उसने सैकड़ों नारियोंको अमूल्य सतीत्वधनसे सदैवके लिये वञ्चित कर दिया है। इतना करने पर भी उस

दुर्मतिकी पाप-वृत्ति निवृत्त नहीं हुई है। जो रमणी एकबार उसके दृष्टिपथमें पड़ेगी, वह किसी प्रकार न बच सकेगी। उस पापीकी पाप-कथा मुखसे कहते भी घृणा और लज्जा आती है। मालूम नहीं, दुराचारीने किस प्रकार बेटीको देख लिया। वह ताराको देखकर, उसके रूप पर मुग्ध होकर, उसका प्रेमाभिलाषी हुआ है। अब वह ताराको हरण करके ले जानेके लिये उद्यत है। वत्स! समय रहते, ऐसा उपाय करना होगा कि जिससे कुल-मानको रक्षा हो, ताराके सती-धर्मकी रक्षा हो। इसी लिये तुमको बुलाया है। नहीं मालूम, इस काममें मैं कहाँ तक कृतकार्य होऊँगी।"

मस्तराम—मा! यदि सिराजुद्दौला ऐसा पापी हो गया है, तो क्या उसके दमन करनेका कोई उपाय नहीं है? उपाय न हो, यह सम्भव नहीं है। आप सी भूसम्पत्तिकी अधिकारिणी, इच्छा करनेपर, उसको अनायास ही उचित शास्ति दे सकती हैं। मा! भगवान्‌की कृपासे, यह क्षमता रहते, यदि आप उस पापीके दमन करनेमें ढील करें और उसके भयसे भयभीत हों तो और कौन इसका उपाय करेगा? नारीकुलका सहाय और कौन होगा?

भवानी—वत्स! तुम सत्य कहते हो। किन्तु मैं सिराजुद्दौलाके विरुद्ध खड़ी होऊँ, यह क्षमता मुझमें कहाँ है? मनुष्य कभी मनुष्यको दमन नहीं कर सकता। जब तक

भगवान् उसके विरुद्ध न हों, तब तक मनुष्यकी क्या सामर्थ्य है, कि उसके अहितका काम कर सके। दर्पहारी वही मधुसूदन हैं। दुष्टका दमन उनके सिवाय और कौन कर सकता है? विशेष करके सिराजुद्दौलाके अत्याचारी और पापचारी होने पर भी, अभी उसके पापकी मात्रा पूर्ण नहीं हुई है। इसीसे वह दीनबन्धु अभी उसका प्रतिविधान नहीं करते हैं। जब सिराजुद्दौलाका अत्याचार-पापाचार पूरा हो जायगा ; सब लोगोंकी मर्मवेदना, हृदयकी कामना, उस अनाथबन्धु के पास पहुँचेगी ; उस दिन अवश्य ही इसका प्रतिविधान होगा। जो सभीके दण्डमण्डके कर्त्ता हैं, वह दण्ड न दें, तो हे वत्स! मनुष्यकी क्या क्षमता है?

मस्तराम—मा! यदि इस विषयमें आप कुछ न करेंगी, बाधा न देंगी, तो दुराचारीकी स्पर्द्धा और भी बढ़ेगी—उत्साह बढ़ेगा ; जिससे वह और भी सैकड़ों नारियोंका सतीत्व नाश करेगा। जननी! तो क्या असतियोंकी संख्या बढ़ानेका ही आपका अभिप्राय है?

भवानी—वत्स! तुम क्या सोचते हो? मैं इसके प्रतीकारके लिये निश्चिन्त हूँ। मैंने जिस समयसे सुना है, कि मेरी तनया के प्रति सिराजुद्दौला की पापेच्छा उत्पन्न हुई है, उसकी कुदृष्टि पड़ी है, तभीसे समझ चुकी हूँ कि अब उसका मङ्गल नहीं है। शीघ्र ही उसका पतन होगा।

मस्तराम—जननी! इस समय यदि आप सिराजुद्दौलाके

दमनका कोई उपाय न करेंगी, केवल परमेश्वरके ऊपर छोड़ कर निश्चिन्त रहेंगी, तो उसको और भी छुट्टी हो जायगी।

भवानी—वत्स! शार्दूलको संहार करनेके लिये, उसके सामने उपस्थित होनेकी अपेक्षा, आड़में रहकर उसके विनाश का आयोजन करना ही बुद्धिमानका काम है।

सत्तराम—मा! आप आदेश दीजिये, मैं उसके विरुद्ध खड़ा होता हूँ। सती नारीके सतीत्व-नाशकी बातें और अधिक मुझसे सुनी नहीं जातीं।

रानी भवानी मृदु मधुर वाक्योंमें बोली,—"वत्स! स्थिर हो जाओ, धैर्य्य धारण करो, शीघ्रताका काम नहीं है। व्याकुल होने से कोई काम न होगा। सिराजुद्दौला अपनी मृत्युको आप ही बुला रहा है। वह जैसा दुर्दान्त है, और जैसा पापमें रत हो रहा है, इसका फल उसको शीघ्र ही मिलेगा। नवाब अलीवर्दी की जिस दिन आँखें बन्द हुईं, उसी दिन समझना कि सिराजुद्दौला का दम्भ-दर्प भी लोप हो जायगा। उसके सर्व्वनाशके साधनके लिये चारों ओर भीषण षड्यन्त्रोंका आयो-जन हो रहा है, कि जिनसे उसकी किसी प्रकार रक्षा न हो सकेगी। वत्स! मेरी यह भविष्यत्‌वाणी अवश्य सत्य होगी। चिन्ता क्या है? यदि पृथ्वी पर धर्म्म है, तो इस अत्याचारको भगवान् कभी न सह सकेंगे।

सत्तराम—मा! आप जब यह बात कहती हैं, तो मैं समझ गया कि अब सिराजद्दौलाकी रक्षा नहीं है। किन्तु

जननी! जिसका रक्त-मांसका शरीर है, वह ऐसा अत्याचार देख सुनकर चुप नहीं रह सकता है।

भवानी—वत्स! जब उपाय नहीं होता है, तब सभी सह लिया जाता है। दुर्बलके एक मात्र सहायक भगवान् हैं। उन्हींको सच्चे हृदयसे स्मरण करना चाहिये, वह अवश्य ही इसका प्रतिविधान करेंगे। नहीं तो, जो बङ्गाल-बिहार और उड़ीसेका भावी नवाब है, उसके विरुद्ध प्रकाशमें खड़ा होना मूर्खता दिखाना है।

मस्तराम—मा! मुझसे और सहा नहीं जाता है। सिराजुद्दौला के अत्याचार और पापाचारकी कथा सुनकर, नाड़ियोंमें रक्त बड़े वेगसे बहने लगा है। ओह! राजा होकर यह अत्याचार! ऐसे अत्याचारका भगवान् ने अभी तक कोई प्रतिविधान नहीं किया है!

भवानी—वत्स! क्यों व्यस्त होते हो? बादल न होनेसे क्या कभी पानी बरसता है? सिराजुद्दौलाके पापोंके पूर्ण होनेमें अभी कुछ शेष रह गया है, इसीसे वह अनाथोंके नाथ कोई प्रतिविधान नहीं करते हैं। वत्स! जिस दिन उनके सूक्ष्म तुलादण्डमें उसके पापका बोझ पूरा होगा, उसी दिन जान लेना, कि वह इस धामको छोड़ देगा।

मस्तराम—तो क्या सिराजुद्दौलाके पापका भार अभी तक पूरा नहीं हुआ है?

भवानी—वत्स! प्रायः पूरा हो चुका है और अधिक

विलम्ब नहीं है। जब कि ब्रह्मचारिणी ताराके प्रति उस पापीकी कुदृष्टि पड़ी है, तब उसका निस्तार नहीं है। देखो वत्स! सिराजुद्दौला का भविष्य आकाशमें मेघाच्छन्न है, बहुत शीघ्र ही वह चारों ओर फैल जायगा, और सिराजुद्दौला किसी प्रकार परित्राणका पथ नहीं पावेगा। अकूलमें पड़कर, रक्षाके लिये बहुत कुछ चेष्टा करेगा, परन्तु किसी तरह रक्षा न पावेगा। उस समय बादलोंसे जो प्रलयकी आँधी उठेगी, उसमें उसके सुखकी नौका अकालमें ही डूब जायगी।

मस्तराम—जननी! आप साक्षात् भवानी-स्वरूपा हैं। मैं समझता हूँ कि आपके यह वाक्य अमोघ हैं, कभी व्यर्थ जाने वाले नहीं हैं। जब कि पापिष्ट सिराजुद्दौलाने पुण्यवती सती ताराको पाप-दृष्टिसे देखा है, तो उसकी किसी प्रकार रक्षा न होगी। किन्तु मा! मैं यह पूछता हूँ, कि इस उपस्थित दशामें सिराजुद्दौलाके कराल कवलसे, सती लक्ष्मी ताराके सतीत्व-रत्न की रक्षा किस प्रकार होगी? और जाति-कुल-मानकी रक्षा करनेका क्या उपाय स्थिर किया है?

भवानी—वत्स! इस समय ताराके मृत्यु-सम्वादको चारों ओर फैलानेके अतिरिक्त और कोई उपाय दिखाई नहीं देता है।

मस्तराम—मा! इससे क्या फल निकलेगा?

भवानी—क्यों वत्स! यदि सबको मालूम हो जाय, कि ताराने सहसा इस लोकको छोड़ दिया है, उसकी देह चिताकी

भस्ममें परिणत हो गई है; तोभी क्या सिराजुद्दौलाकी पाप-लिप्सा दूर न होगी?

मस्तराम—मा! सबकी आंखोंमें धूल डालकर, आप किस प्रकार यह काम करेंगी?

भवानी—वत्स! इसके लिये कुछ चिन्ता नहीं है। मैंने जो कौशल-अवलम्बन करनेका विचार किया है, उसमें किसी को सन्देह अथवा अविश्वास करनेका स्थान नहीं है। उपस्थित अवस्थामें, कौशल ही एक मात्र उपाय है।

मस्तराम—जननी! ऐसा आपने कौन सा उपाय अवलम्बन किया है, जिससे सभीके हृदयमें विश्वास हो जायगा?

बुद्धिमती रानी भवानीने जो उपाय विचारा था, वह मस्तराम बाबाजी को कह सुनाया। सुनकर मस्तराम बोले, "मा! धन्य है आपकी बुद्धिको! धन्य है आपके कौशलको! इस कौशलसे अवश्य ही सिराजुद्दौला प्रतारित होगा और सतीका सतीधर्म्म जाति-कुल-मान सभी रक्षा पावेगा। किन्तु मा! सिराजुद्दौला ऐसा चतुर है कि यदि वह छिपे छिपे अनुसन्धान करे और यदि ताराके बचनेकी बात प्रकाशित होजाय, तब क्या उपाय होगा?"

भवानी—वत्स! ताराकी मृत्युकी जनश्रुतिके साथ ही साथ, उसको लेकर मुझे भी पवित्र गङ्गा-तीर छोड़ना होगा और जब तक सिराजुद्दौला राजच्युत अथवा विनष्ट न हो जायगा, तब तक ताराको बड़ी सावधानतासे छिपाकर रखना होगा।

मस्तराम—जननी! इस तरह कब तक छिप छिप कर रह सकोगी? और आपके बरनगर छोड़नेसे, दीनदुखी, अनाथोंके लिये क्या उपाय होगा? मा! आप तो साक्षात् अन्नपूर्णा हैं।

रानी भवानीने विषाद-भरे वाक्योंमें कहा, "वत्स! क्या किया जाय? एक समय देवताओंको भी, असुरोंके भयसे, स्वर्गराज्य छोड़कर गुप्तभावसे रहना पड़ा था।"

बातें करते करते रात प्रायः दो पहर बीत गई। रानी भवानीने नौकरोंको गङ्गातीर पर एक प्रकाण्ड चिता प्रस्तुत करनेका आदेश दिया।

चिता तय्यार हो गई।

सब संसार सो रहा है। प्रकृति स्थिर, निश्चल और नीरव है। जीव मातका कहीं शब्द नहीं है। सभी ओर निद्रामें मग्न हैं। बीच बीचमें केवल निशाचर पशु पक्षियोंका विकट चीत्कार; झींगुरकी झनकार, वायुकी सनसनाहट, वृक्षोंके पत्तोंके गिरनेका शब्द, यही शब्द हैं जो सुनाई देते हैं।

रानी भवानीने, यही समय उद्देश्य-सिद्धिके लिये ठीक समझ कर, चितामें आग दे देनेका आदेश दिया।

सभी उत्सुक थे, सभी कारण जाननेके लिये व्यग्र हो रहे थे; परन्तु किसीको इस बातका साहस न होता था कि कोई बात पूछे।

चितामें आग लगा दी गई, उसमेंसे धूम-पुञ्ज निकलने लगा। इसी समय पूर्व्व-परामर्शके अनुसार; मस्तराम बाबाजी

अपने दलबल समेत गम्भीर रातकी निस्तब्धताको भङ्ग करके हरनाम-कीर्त्तन करने लगे। उस कीर्त्तनके शब्दसे वरनगरके आबाल-वृद्ध-वनिता सभी जाग पड़े।

रात्रि गई, अन्धकार दूर हो गया। निर्जीव जगत् सजीव हो गया। जीवगणोंने अपनी अपनी सुखदायिनी शय्या छोड़ी। निशाचर जीवजन्तु अपने अपने वास-स्थानोंको चले गये; तथापि हरनाम-कीर्त्तन बन्द नहीं हुआ, न चिताधूमकी शान्ति है, न चिताकी अग्निको निर्वाण है।

सवेरा होते हो सैकड़ों हज़ारों नरनारी उस स्थान पर आकर उपस्थित हो गये। गङ्गाके तीर पर प्रज्वलित चिताको देखकर, सभी लोग विशेष व्यग्रताके साथ जिज्ञासा करने लगे।

जब सब लोगोंने सुना कि गत रात्रिको तारादेवी ने यह लोक परित्याग किया है, तो सब लोग उसके रूप गुणकी बातें कहकर दुःख प्रकाश करने लगे और बहुतोंने आँसू भी बहाये।

सूर्य्य देवके निकलते हो चिता भी ठण्डी हुई, हरिनाम भी बन्द हुआ। सब अपने अपने घरोंको गये। आबाल-वृद्ध-वनिता सभीने जान लिया कि तारा स्वर्गको गई।

क्रम क्रमसे यह खबर मुर्शिदाबाद भी पहुँची, हीरा झील भी पहुँची, सिराजुद्दौलाके कानों तक भी पहुँची। परन्तु इस मृत्यु-सम्वादसे काम-किङ्कर सिराजुद्दौलाके हृदयसे ताराके प्रेमका वेग कम हुआ कि नहीं, यह प्रकाश नहीं हुआ।

दसवाँ परिच्छेद ।

किसी कविने कहा है कि पुराने कपड़ेकी चमक और अबला जाति बड़े यत्नसे रक्षित की जा सकती है, और वास्तवमें है भी ऐसा ही कि नारी-जाति बड़े यत्नसे रक्षा पाती है। जहाँ स्त्री-जातिके ऊपर तीक्ष्ण दृष्टि नहीं है, वहाँ तरह तरहके दोष दिखाई देते हैं। एक अभावसे स्वभाव नष्ट होता है, और जिस घरकी रमणी अधिक भोग-विलासी होती है, उसी घरमें नारी-चरित्रमें दोष दिखाई देता है।

स्त्री-चरित्रको मनन करनेसे स्पष्ट ही दिखाई देता है, कि जैसे नारी-जातिमें धर्मभाव अधिक है, उसी तरह पापकाण्ड भी अधिक है। रमणीके भीतर सुधा भी है और विष भी है। जैसे साँपके विषसे मनुष्यके प्राण जाते हैं और प्राणरक्षा भी होती है; उसी प्रकार स्त्री-जाति जब अपने हृदयसे सुधा निकालती है, तो मनुष्य सुखी होकर अमर होनेकी वासना करता है, और जब वह हलाहल वमन करती है, तो मनुष्य अपार दुःख-सागरमें गोते खाता है और आत्महत्या पर्यन्त कर डालता है।

नारी चरित्रमें दोष पड़ जानेके जो कारण हैं, उनमेंसे स्वाधीनता ही एक प्रधान कारण है। जिस घरमें रमणी सर्वतो-भावसे स्वाधीन है, उसी घरकी नारियोंमें प्रायः नाना रूपके दोष लक्षित होते हैं। नारी-जाति और कपूर दोनों ही समान हैं। कपूर डिब्बीके भीतर बन्द करके यत्नपूर्व्वक न रखनेसे जिस प्रकार उड़ जाता है; उसी तरह अन्तःपुरमें रखकर, तीक्ष्णदृष्टि न रखनेसे नारी जातिके सतीत्वकी रक्षा भी कठिन हो जाती है।

मैं पहिले ही कह चुका हूँ और फिर कहता हूँ, कि इन्द्रियां नरनारीकी प्रधान शत्रु हैं। जिसने इस कामरूपी शत्रुको जीत लिया है, वही इस संसारमें विजयी है। जो इस शत्रुके जय करनेमें असमर्थ है, जो सम्पूर्ण रूपसे इसीके वशीभूत है, उसकी बराबर विडम्बनाका भागी और कौन है?

नवाब अलीवर्दी की तीन कन्याओंमें से अमीना बेगम और घसीटी बेगमके चरित्रमें दोष उत्पन्न हुआ। नारीका अमूल्यरत्न सतीत्वरत्न सदैवके लिये खो गया। "सती" नामके बदले "असती" नाम हो गया। अपनी इच्छासे सतीके गौरव-धनसे वञ्चित हो गई। लज्जा और निन्दाभय को छोड़कर, कलङ्क-सागरमें डूब गई।

क्या स्त्री, क्या पुरुष, रूपके पक्षपाती सभी हैं। रूप देखकर मोहित न हों, ऐसे लोग संसारमें विरले हैं।

घसीटी बेगम और अमीना बेगम, दोनों ही ने, एक नायक

के रूप पर मोहित होकर उसको अपने प्राण, मन और यौवन सभी समर्पण कर दिये। दोनों ही उसके प्रेममें आवद्ध हो गईं, दोनों ही ने अपने अपने हृदय-राज्योंका अधीश्वर उसे बनाया।

अमीना वेगम और घसीटी वेगम जिस नायकके प्रेममें आवद्ध हुईं, उसका नाम हुसैनकुलीखाँ था। हुसैनकुलीखाँ में उतना गुण नहीं था, जितनी उसके रूपकी विलक्षण ख्याति थी। नारी-जाति जिस रूपको देखकर मोहित होती है, कार्त्तिक अथवा कन्दर्पकी तुलना जिस रूपको लोग देते हैं, हुसैनकुली खाँ वैसा ही रूपवान था। उसका यह भुवनमोहन रूप ही नवावकी दोनों पुत्रियोंका काल हुआ।

अमीना वेगम विधवा थी। राजभोग, सुखस्वच्छन्द, निश्चिन्त और स्वाधीन भाव थी। ऐसी अवस्थामें, पतिहीनता उससे चरित्र-दोष उपस्थित कर दे तो क्या नई बात है? परन्तु घसीटी वेगम पतिके वर्त्तमान होने पर भी, हुसैनकुली खाँ के रूप पर मुग्ध होकर, उसके प्रेममें आवद्ध हुई।

पाप बहुत दिन तक छिपा नहीं रहता है। घसीटी वेगम और अमीना वेगम की भी यह पाप-कहानी शीघ्र ही प्रकाशित हो गई। दासी-बांदी सभीने जान लिया और परस्पर इसी विषयकी छिपे छिपे आलोचना और हास्य-परिहास करने लगीं; क्योंकि हुसैनकुलीखाँ, रूपवान होने पर भी, ढाकेके नवाब नवाज़िश अली का नौकर था। प्रभुकी पत्नी अपनी मर्यादा

को भूलकर, अपने नौकरके प्रेममें आबद्ध हुई, यह बात सभी की आँखोंमें बुरी ज्ञात हुई। इसी कारण दासी-बाँदी अवसर पाते ही, जहाँ दो इकट्ठी हो जातीं, घसीटी और अमीना की कथा कहने लग जातीं।

घसीटी बेगमका हुसैनकुलीखाँ के साथ यह गुप्त प्रेम यद्यपि दासी बाँदियोंको चक्षुशूल हो गया था; परन्तु यह तो उनको मालूम नहीं था कि प्रेमके सामने मालिक-नौकर, धनी-निर्धन, विद्वान-मूर्ख, नीच-उच्च, यह सब भेद स्थान नहीं पाते हैं। प्रेम तो केवल इतना देखता है, कि नायक नायिकाकी चारों आँखें मिलने पर परस्परका हृदय-भाव किस प्रकार प्रकाश पाता है। प्रेम कुलके ऊँच नीचका विचार करना नहीं चाहता है। यदि ऐसा करता, तो उच्च और नीच वंशियों के बीचमें गुप्त प्रेम दिखाई ही न देता।

मोती झीलकी दासी बाँदियोंसे चलकर, यह सम्वाद नवाब के महलोंमें भी पहुँचा। जब दासी-बाँदियोंके बीचमें इस अनुचित प्रेमकी बात पर हास्य-परिहास और आलोचना चलने लगी, तो नवाब-महिषीको भी इसके सुनपानेमें अधिक विलम्ब न लगा। शीघ्र ही उन्होंने भी दोनों कन्याओंके कुचरित्रकी गाथा सुनी।

एक दिन रातको प्रायः दूसरा पहर था। रातका भोजन समाप्त हो चुका था। सभी अपने अपने विश्राम-गृहोंमें जा चुके थे। चार पाँच बाँदियाँ, दिन भरके बाद, इस समय अवसर

पाकर, इकट्ठी बैठी इधर उधरकी बातें कर रही थीं। शेषमें, घसीटी बेगम और अमीना बेगमके गुप्त प्रेम की कथा चली।

मैना बाँदीने कहा, "देखो ख़ातिर! अभी तक मैंने तुम्हारी बातका विश्वास नहीं किया था। यही समझती थी, कि क्या कभी ऐसा भी सम्भव है? किन्तु आज जो कुछ आंखोंसे देखा, अपने कानों सुना, उससे तेरी बातोंका पूरा विश्वास हो गया।"

मैनाकी बात समाप्त होते ही ख़ातिर बोली, "मेरी यह आदत नहीं है कि मैं किसीके ऊपर झूठा दोषारोपण करूँ, जो बात अपनी आँखोंसे न देख लूँ और अपने कानोंसे न सुन लूँ, उसको मैं कभी किसी से नहीं कहती। झूठे दोषारोपणसे मैं बहुत घृणा करती हूँ। अब तुमको मेरी बातका विश्वास हुआ है, यही यथेष्ट है।"

मैना—इस बातको अपनी आँखों न देखे, तो क्या कोई कभी इस पर विश्वास कर सकता है? जो बात पूर्णतया असम्भव है, उसमें किसीको कैसे सहजमें विश्वास हो सकता है? बङ्गाल-विहार और उड़ीसाके नवाबकी पुत्री होकर, नौकरके प्रेममें आबद्ध होगी, ऐसी धारणा क्या कभी हो सकती थी? छिः! छिः! नवाब कुमारी क्या—

मैनाकी बात काटकर ख़ातिर बोली, "ओहो! अकेली घसीटी बेगम ही नहीं, अमीना बेगम भी हुसैनकुलीख़ाँ ही के प्रेममें आबद्ध हुई है। दो बहिनोंमें एक नायक है। किसी

समय ऐसी बात किसीने सुनी भी न होगी, वही आज देखो! समझके फेरसे, देखो क्या क्या होता है!"

सुनकर मैना बाँदी काँप गई। विस्मयके साथ बोली, "ख़ातिर! तू यह क्या कहती है? क्या अमीना बेगम भी हुसैन-कुली पर आसक्त है! हे राम। न जाने क्या होनहार है!"

ख़ातिर—अच्छा होनहार है। जब यह बात चारों ओर प्रकाशित हो जायगी, छोटे बड़े सभी नवाब-कुमारियोंके कुचरित्रकी बात जानेंगे, इस नीच प्रवृत्तिकी कथा सुनेंगे; तब यह सुख, दुःखमें परिणत हो जायगा—लोगोंके सामने मुँह दिखलाना भारी हो जायगा। पाप जब तक छिपा रहे तभी तक अच्छा है, प्रकाशित होने पर तो गड़बड़ हो ही गी।

मैना—अच्छा ख़ातिर! नवाब अथवा नवाब-महिषी यह सब बातें, यह सब घटनाएँ, जानते हैं?

ख़ातिर—ऐसा ज्ञात तो नहीं होता है, कि वह जानते होंगे।

मैना—मेरा भी अनुमान ऐसा ही है, यदि नवाब अथवा नवाब-महिषी इसके विषयमें कुछ भी जान पाते, तो अवश्य ही इसका कुछ प्रतिकार करते। उच्च कुलमें ऐसे कलङ्कको क्या कभी कोई सह सकता है? विशेष करके एक नौकरके साथ यह सब काण्ड! और हुसैनकुली का कैसा साहस है! वामन होकर चन्द्रमाको हाथ बढ़ाता है!

ख़ातिर—साहस क्यों न हो? वामन होकर चन्द्रमा क्यों

न पकड़े ? छोटेसे बड़े होनेकी किसको इच्छा नहीं होती है ? जो अपने मान-मर्यादाकी रक्षा न करे, तो दूसरेका इसमें क्या दोष है ?

मैना—तो क्या हुसैनकुली को यह विश्वासघातकता का काम करना उचित था ? यह नवाब नवाज़िश अली का ऐसा विश्वासी था ! और उन्हींकी पत्नीके साथ गुप्तप्रेममें आवद्ध होकर क्या इसने समझदारीका काम किया है ? यह सुनकर लोग हुसैनकुली की निन्दा नहीं करेंगे ?

यह सुनकर विरक्तिभाव से ख़ातिर बोली, "तुम्हारी यह बात ठीक नहीं है। लोग हुसैनकुली की निन्दा क्यों करेंगे ? यदि उनकी निन्दा ही करनी होगी, तो पहिले नवाब और नवाब-महिषीकी न करेंगे ?"

मैना—उनका इसमें क्या दोष है ?

ख़ातिर—उनका दोष नहीं है, तो क्या पाड़-पड़ोसियोंका दोष है ? जो घरके मालिक हैं, उनको यह नहीं मालूम कि हमारे घरमें क्या हो रहा है, तो फिर इस बातको कौन देखेगा ? यदि नवाब-महिषी दोनों कन्याओं पर तीक्ष्ण दृष्टि रखतीं,तो क्या वह दोनों ऐसे कुकर्ममें पड़ सकती थीं ? जिस घरके कर्त्ता और गृहिणी अपने कामोंको, अपने पुत्र-कन्याओंको, तीक्ष्ण दृष्टिसे नहीं देखते हैं, उन्हीं लोगोंके घरमें ऐसी दुर्घटनाएँ हुआ करती हैं।

दासियोंमें इसी तरहकी बात-चीत हो रही थी,इसी समय

नवाब-महिषी, नहीं मालूम किस कामसे, उसी घरके पाससे निकल रही थीं। सहसा, उन्होंने घसीटी बेगम और हुसैन-ख़ाँ का नाम सुना। दासी इन लोगोंके विषयमें क्या बात-चीत कर रही हैं, यह सुननेकी इच्छासे वह उस घरके बाहर खड़ी होकर सुनने लगीं और चुपचाप सब बातें सुनती रहीं। जब उन्होंने सब बातें सुन लीं, तो उनका सारा शरीर काँपने लगा। दोनों कन्याओंके कुचरित्र की बात सुनकर, उनके हृदयमें बड़ी व्यथा हुई। वहाँ और न ठहर सकीं, सोचती-सोचती शय्या पर जाकर लेट रहीं।



ग्यारहवाँ परिच्छेद।

सन्तानके कुचरित्रकी कथा, कलङ्ककी बात, सुन कर कौन ऐसे माता-पिता होंगे जिनको दुःख न होगा? क्या हिन्दू, क्या मुसल्मान, क्या अँगरेज़, सभी जातियोंमें देखा जाता है कि पुत्र-कन्याकी निन्दाकी बात सुनकर, पितामाता मर्माहत हो जाते हैं; और उनके चरित्र संशोधनके लिये, दोष मिटाने के लिये, प्राणपनसे चेष्टा करते हैं।

घसीटी और अमीनाके कुचरित्र और कलङ्ककी बात सुन कर नवाब-महिषीके हृदयमें बड़ी व्यथा हुई। किस उपायसे दोनों कन्याओंको सत्पथ पर लाना चाहिये, इसके लिये ऐसी चिन्ताकुल हुईं कि जिसका पार नहीं। होते होते, एक दिन बातों ही बातोंमें, वह विषय उन्होंने नवाबको भी समझा दिया। बुद्धिमान् विवेचक नवाब अलीवर्दी यद्यपि मन ही मन बहुत रुष्ट हुए, किन्तु वह रुष्टभाव उन्होंने प्रकाश नहीं किया। वह डरते थे कि यह कलङ्क-कहानी कहीं प्रकाश न हो जाय; इसलिये ऐसा उपाय सोचने लगे कि जिससे अमीना और घसीटी असत्-पथको छोड़ कर सत्पथ पर आजावें।

नवाब अलीवर्दी बेगमसे पूछने लगे, "तुमने इस बात को कैसे जाना ?"

नवाब-महिषीने जिस तरह पर उनको ज्ञात हुआ था, वह सब वाक्ह सुनाया और कहा, "कि दासी-बाँदियों को यह बात नहीं मालूम है, कि मैंने उनकी बातें सुनली हैं। वह आपसमें चोरी-चोरी बातें कर रही थीं।"

अलीवर्दी—आप प्रकाश न हो कर जान लिया, यह अच्छा ही हुआ; परन्तु अब किस उपायसे दोनों कन्याओं को असत्-कार्य्यसे हटाना चाहिये ?

कुछ देर चुप रह कर नवाब-महिषीने कहा, "यदि घसीटी और अमीना दोनों को यह बात मालूम होजाय कि हुसेन-कुली खां विश्वासघातक है, वह छिपे छिपे दोनों ही से प्रेम करता है; तो आशा है कि दोनों ही इस कुकार्य से हट सकती हैं।"

अलीवर्दीने उदास भावसे कहा, "इससे कौनसा विशेष फल होगा ?"

बेगम—यह बात यदि किसी प्रकारसे एक बार भी घसीटी और अमीना जान पावें, तो वह हुसेनकुली की इस प्रतारणा को कभी न सह सकेंगी। अपने नायकके प्रति और का प्रणय कोई भी नायिका सह नहीं सकती है ? नायक अथवा नायिकाको अन्यके प्रेम में आसक्त होते देखकर अथवा उस आसक्ति की बात सुन कर, प्रतियोगी नायक या नायिका निश्चय

ही प्रतिहिंसासे अन्धे होकर उसके सर्वनाशका साधन करते हैं। सब प्रेम और अनुराग जाता रहता है, और दारुण प्रतिहिंसा की ताड़नासे अपने हाथों उसके प्राण नाश करने में कुण्ठित नहीं होते हैं।

अलीवर्दी—अमीना और घसीटी यदि हुसैनकुलीखांके प्रति प्रतिहिंसा-परायण न हों और आपसमें ही एक दूसरे से विद्वेष-भाव करलें, तब क्या उपाय होगा? जब वह अग्नि प्रज्वलित होगी, तो किस तरह बुझाई जा सकेगी। इसमें अच्छा करते बुरा भी हो सकता है। हुसैनकुलीखां निहत न होकर घसीटी और अमीना ही मृत्युको प्राप्त होंगी। मेरी समझमें इस उपायसे कार्य्योद्धार न होगा। मेरी समझमें उत्तम युक्ति यह होगी कि सिराजुद्दौलाको, उसकी माता और मौसीके साथ हुसैनकुली की यह अनुचित प्रणयकी कथा सुना कर, उत्तेजित किया जाय और उसीके द्वारा हुसैनकुलीका प्राण संहार कराया जाय।'

बेगम—इस कार्य्यके परिणाममें सिराजुद्दौलाको विपद्‌की आशङ्का है।

अलीवर्दी—सिराजुद्दौलाको किस बात की आशङ्का है?

बेगम—हुसैनकुलीखां नवाज़िशअलीका बड़ा विश्वासी और प्रीति-पात्र है। घसीटी उसी हुसैनकुलीखां की प्रणयासक्ता है। यदि घसीटी हुसैनकुलीखांके साथ अमीनाके प्रणय का हाल न जान पावे, यदि उसके हृदयमें हुसैनकुलीखांके

प्रति विद्वेष की अग्नि प्रज्वलित न होवे, यदि घसीटी की इच्छा बिना हुसैनकुलीका संहार किया जाय; तो निश्चय ही घसीटी अपने प्रणयपात्रके हत्याकाण्डको देखकर सिराजुद्दौला से रुष्ट होगी और प्रतिहिंसाके वश होकर, या तो आप ही सिराजका विनाश करेगी, अथवा नवाज़िश अलीको सिराजुद्दौलाके विरुद्ध उत्तेजित करेगी। हिताहित-विवेचनाशून्य नवाज़िश अली, घसीटीके कहने के अनुसार, हुसैनकुलीखाँकी हत्याका कारण अन्वेषण किये बिना ही, सिराजुद्दौलाके सर्वनाश करनेमें प्रवृत्त होगा। अन्तमें फिर न जाने क्या हो? सिराजको क्या सदैवके लिये खो बैठोगे?

बेगम की यह बात नवाबकी समझमें आगई और कहा, "तो क्या उपाय करना उचित है?"

बेगम—वही उपाय पहिले करना चाहिये, जिससे हुसैनकुलीके प्रति घसीटीको प्रतिहिंसा उत्पन्न हो। हुसैनकुलीखाँ के प्रति घसीटी की प्रतिहिंसा न होनेसे, उसका विनाश करना सहज नहीं है।

अलीवर्दी—यह विद्वेष-भाव किस प्रकार उत्पन्न हो सकेगा?

बेगम—घसीटी जानती है कि हुसैनकुली उसी अकेलीका प्रणयासक्त है; परन्तु जब सुनेगी कि वह अमीनाके प्रेममें भी मुग्ध है, तो निश्चय ही घसीटी हुसैनकुलीकी इस विश्वासघातकता और प्रतारणासे उसकी ओरसे घृणा करने लग

जायगी और उसके सर्वनाश-साधन करनेमें कुछ भी कुण्ठित न होगी।

अलीवर्दी—यदि घसीटी हुसैनकुलीखाँ की इस प्रतारणा को सुन कर भी उस पर क्रुद्ध न हो, तब क्या उपाय किया जायगा ?

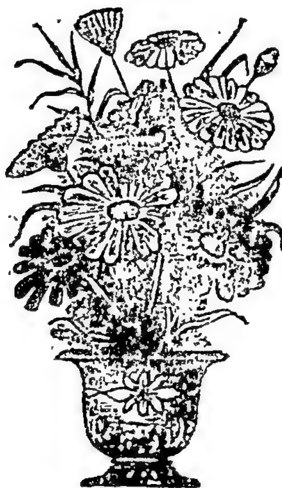
इस बातको सुनकर नवाब-महिषी कुछ हँसकर बोली, "नारी-जाति सब कुछ सह सकती है, परन्तु अपने प्रेमपात्रको दूसरेका प्रणयपात्र होते देख कर प्राण रहते कभी भी सह नहीं सकती है। दारुण प्रतिहिंसासे अधीर होकर उसके प्राण तक ले लेती है, किन्तु दूसरेका प्रणयपात्र नहीं होने देती है।"

अलीवर्दी—यदि यही बात है, तो इस कलङ्कके प्रकाश होनेके पहिले ही ऐसा उपाय करना चाहिये ; जिससे हुसैन-कुलीखाँ विनाशको प्राप्त होजाय।

बेगम—इसके लिये आपको अधिक चिन्ता न करनी होगी। जब कि मुझे यह बात मालूम हो गई है और जब कि आपसे मैंने मत ले लिया है, तब मैं वही करूँगी जिसमें हुसैनकुलीखाँ शीघ्र ही मारा जाय। एक सप्ताहके भीतर ही आप सुन लेना कि हुसैनकुलीखाँ इस लोकको छोड़ गया।

अलीवर्दी—परन्तु इस कामको बहुत छिपाकर करना चाहिये ; जिसमें लोग उसके मृत्यु-सम्बन्धमें किसी तरहका सन्देह न करें। मुझको इसी बात की आशङ्का है कि

यह कुकार्य्य किसी तरह प्रकाश न होजाय। यदि ऐसा हुआ, तो किस प्रकार लोगोंके सामने मुँह दिखा सकूँगा? घसीटी! अमीना! मैंने इस बातकी कभी कल्पना भी न की थी, कि तुम मुझको ऐसा दुःखी करोगी! यदि ऐसी कुल-कलंक कन्या न होकर मैं निःसन्तान रहता, तो मुझको आज इतना चिन्तित न होना पड़ता। नवाब अलीवर्दी दोनों कन्याओंके कुचरित्र की बात सुनकर बड़े व्याकुल हुए—मर्मवेदनासे तीर लगे हुए हिरनकी तरह छटपटाने लगे।



बारहवाँ परिच्छेद ।

पुरुष भ्रमर जाति है। जहाँ मधु है वहीं भ्रमर है, पुरुष भी ठीक उसी तरह का है। भ्रमर जिस तरह मधु-भरे हुए फूलको पाकर बासी फूलपर नहीं बैठता है, मधु होनेपर भी नहीं पीता है, पुरुष-जाति भी ठीक उसी तरहकी है। नई प्रेमिका पाने पर, पुरानी प्रेमिकाके साथ वैसा प्रेम, वैसा प्रणय नहीं रहता है।

जिस दिनसे हुसैनकुलीखाँने अमीना बेगमके प्रेमरसको चाखा, जिस दिनसे अमीनाने हुसैनकुलीखाँको अपना प्राणेश्वर बनाया, उसी दिनसे हुसैनकुलीका प्रेम घसीटी बेगमको ओर से घट चला। परन्तु फिर भी, वह घसीटी बेगमको एकबारगी छोड़ न सका। इच्छा न रहते भी, उसको मौखिक प्रणय दिखाना पड़ता था।

जो प्रणय अर्थसे अथवा रूपसे उत्पन्न होता है, वह स्थायी नहीं होता है। जब तक अर्थ रहता है, जब तक रूपको छटा शेष रहती है, तभी तक प्रणय भी रहता है। अर्थ और रूप के जाते ही, प्रणय और प्रेम भी चल देता है।

घसीटीसे हुसैनकुलीखाँ का प्रेम अर्थके लिये था। मैं पहिले ही कह चुका हूँ कि हुसैनकुलीखाँ रूपवान पुरुष था। उसका रूप देखकर घसीटी उस पर मुग्ध हुई थी और हुसैन-कुलीखाँ अर्थके लोभसे मुग्ध होकर घसीटीके प्रेममें आवद्ध हुआ था। इसीसे दोनोंका प्रणय स्थायी नहीं हुआ।

घसीटी यद्यपि रूपवती थी, किन्तु एक रूपके अतिरिक्त और कोई गुण उसमें नहीं था। उसको अपने रूपका बड़ा अहङ्कार था। इस रूपके अहङ्कारके कारण सभीको घृणा की दृष्टिसे देखती थी। हर एकको कहनी-अनकहनी कह डालती थी। किसी में इतनी क्षमता नहीं थी, कि उसकी बातको लौट सके। यहाँ तक कि उसका पति नवाज़िश मुहम्मद भी उससे कुछ न कह सकता था। वह जब जो बात कहती, नवाज़िश मुहम्मदको वही करना पड़ता। घसीटी स्वाधीन प्रकृति की रमणी थी। नारीमें जो गुण आवश्यक हैं, वह कोई उसमें नहीं थे। इसीसे कोई उसकी प्रशंसा न करता था। हुसैनकुली भी उसके दोषोंके कारण, मुग्ध होने पर भी, सुखी न हो सका।

अमीना बेगम यद्यपि घसीटीके बराबर रूपवती न थी; तथापि ऐसी भी नहीं थी, कि उसके रूपकी कोई निन्दा कर सके। घसीटी बेगमके कोई पुत्र नहीं हुआ था, इससे उसका सुख यथेष्ट बना हुआ था और अमीना बेगमके पुत्र और कन्या हो चुके थे, उसके मनका सुख भी वैसा नहीं रहा

था, इसी कारण उसके सौन्दर्य्य में भी कुछ अभाव हो गया था।

सौन्दर्य्यमें अमीना बेगम घसीटीकी बराबरी नहीं कर सकती थी. किन्तु गुणमें वह उससे बहुत श्रेष्ठ थी। उसके शरीरमें दया माया, स्नेह-ममता और प्रेम था। अहङ्कार अथवा गर्व उसमें नहीं था। सरलता भी विलक्षण थी। वह धीर गम्भीर थी और सहिष्णुता भी उसमें विलक्षण थी। नवाब-कुमारी अमीना बेगमके इन गुणों पर मुग्ध होकर हुसैन-कुलीखाँ उसके प्रेममें आबद्ध हुआ था।

पुरुष सदैव ही स्वाधीनता-प्रिय है। नारी-जातिको अपने वशमें रखने के सिवाय, उसके सामने हीनता स्वीकार करनेका स्वभाव मनुष्यमें नहीं है। इसी कारण हुसैनकुलीखाँ, घसीटी बेगमके उसके ऊपर प्रेमाकांक्षिणी होने पर भी, उसके प्रति अनुरक्त न होसका। वह अमीना की सरलता और उसके प्रेममें मुग्ध होगया।

पहिले कहा जा चुका है कि पुरुष भ्रमर-जाति है, नई वस्तु पानेपर पुरानीमें उसको अनुराग नहीं रहता है। जबसे हुसैनकुलीखाँ अमीना बेगमके प्रेमका पक्षपाती हुआ, उसी दिन से घसीटी बेगमकी ओरसे उसको विराग उत्पन्न हुआ। उसी दिनसे उसका मिलना-जुलना भी कम हो चला और नये प्रेमकी प्रेमिका अमीनाके प्रति अनुराग बढ़ता गया।

इच्छा न रहने पर भी, वह घसीटी बेगमको एकदम न

छोड़ सका। क्यों न छोड़ सका ? हुसैनकुलीखां नवाज़िश मुहम्मदके अन्तःपुरका रक्षक था। अन्तःपुरकी महिलाओंका रक्षण और गुप्तधनकी रक्षाका भार उसीके ऊपर था ; इसलिये हुसैनकुली प्रायः भीतर आया जाया करता था। जहां घसीटी बेगम रहती थी,वहीं उसका आना जाना रहता था। फिर किस तरह बच सकता था ? इसी कारण चक्षुलज्जामें पड़कर उसको घसीटीके साथ मौखिक आमोद-प्रमोद करना पड़ता था।

विश्वासके ऐसे भारी बोझके ऊपर होने पर भी, हुसैन-कुलीखां किस तरह इस विश्वास-बन्धनको तोड़कर प्रभुपत्नीके प्रणयमें आबद्ध होगया ? क्या उसको यही उचित था ?

यद्यपि हुसैनकुलीखांने, इस विश्वासघातक काममें प्रवृत्त होकर, नितान्तही स्वार्थपर मूढ़का सा काम किया था ; परन्तु वास्तवमें बात यह थी, कि वह अपनी इच्छासे घसीटी बेगमके प्रेममें आबद्ध नहीं हुआ था ; वरन् वही हुसैनकुलीखांके मोहनरूप पर मुग्ध होकर आसक्त हुई थी और बहुत कुछ लोभ और भय दिखाकर उसको वशीभूत किया था।

यह सत्य है कि हुसैनकुलीखां ने नवाज़िश मुहम्मदका विश्वास भङ्ग करके मनुष्योचित काम नहीं किया था, किन्तु जो कुछ किया था वह घसीटी बेगमके भयसे। परन्तु पतिके वर्त्तमान रहनेपर, उसको इस अनुचित कामके करने की आवश्यकता क्या थी। वह गर्विता रमणी होकर नौकरके प्रेम में आबद्ध हुई, क्या यही उसकी रुचिका परिचय था ?

पति होने पर भी यदि वह कुरूप हो, तो रमणी विपथ-गामिनी हो सकती है। घसीटी बेगम पतिके वर्त्तमान होने पर भी, पतिके सम्भाषण-सुखको दिन भरके पीछे ही नहीं, एक पक्षके पीछे भी न पाती थी; सुतरां, यदि वह उपपति पर आसक्त हुई तो इसमें परमेश्वरका ही विधान था।

परित्यक्ता स्त्रीको स्वामि-सम्भाषणके सुखसे वञ्चित होना पड़ता है। तो क्या घसीटी बेगम नवाज़िश मुहम्मदकी परित्यक्ता पत्नी थी? नहीं, यह बात नहीं थी। वह नवाज़िश-मुहम्मदकी प्रधान बेगम थी और नवाज़िश मुहम्मद उसको देख नहीं पाता था, यह बात भी नहीं थी।

तो घसीटी बेगम पति-सम्भाषणसे क्यों वञ्चित थी?

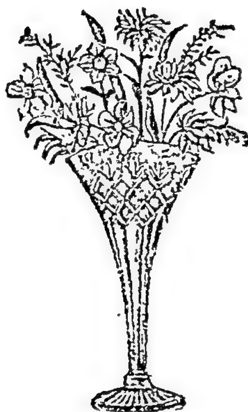
जिस स्थानपर अधिक सुख-सम्भोग होता है, जहाँ अतुल ऐश्वर्य होता है, उस घरमें नरनारियोंमें इन्द्रिय-दोष सहज ही होजाता है।

नवाज़िश मुहम्मद ढाकेका नवाब था। उसको अर्थ का अभाव नहीं था। भोग-विलास की भी सीमा नहीं थी। इसलिये यह सुख-सम्भोग ही उसके चरित्र-दोषका प्रधान कारण हुआ। वह वारविलासिनियोंको लेकर नित्य-प्रति आमोद-प्रमोदमें लिप्त रहता था। इनके अतिरिक्त, भगवाई नामकी एक रमणीके प्रेममें पड़कर मत्त हो रहा था।

जिस घरका स्वामी बुरे कामोंमें लिप्त हो, उसका परिवार भी शीघ्र ही इसी पथका पथिक बनना चाहता है।

विशेष करके पत्नी सदैव ही पतिके दृष्टान्त पर चलनेवाली होती है।

स्वामीको कुकर्म्म करते देखकर, घसीटी भी क्रमशः निःशंक-चित्तसे स्वामीका अनुसरण करने लगी। नरनारीका महा-शत्रु काम है। घसीटी इन्द्रियोंको जय करनेमें असमर्थ होकर हुसैनकुली की अनुरागिनी हुई। हुसैनकुलीका नारी-मोहनरूप ही घसीटीके सर्वनाशका कारण हुआ।



तेरहवाँ परिच्छेद।

जैसे ही दिन पर दिन बीतने लगे, हुसैनकुलीको उतना ही अमीना बेगम पर अनुराग और घसीटी बेगम पर विराग होता गया। पहिले हुसैनकुलीखाँ, आन्तरिक न सही, मौखिक प्रेम ही सही, जितना घसीटी बेगमको दिखाता था, जिस प्रकार पहिले अवसर पानेपर दोनों जने निर्जनमें बैठकर एक दूसरेके गलेमें बाँहें डालकर बैठते थे, अब वैसी कोई बात नहीं है। जिस दिनसे वह अमीनाके प्रेमका पक्षपाती हुआ, उसके गुणोंपर मुग्ध हुआ, उसी दिनसे घसीटीके साथ आमोद-प्रमोद, बात-चीत धीरे धीरे कम होती गई।

घसीटी हुसैनकुलीकी यह चातुरी, यह प्रतारणा, पहले पहल समझ न सकी; परन्तु यह नहीं कि कभी कभी उसका यह व्यवहार घसीटीको खटक न जाता हो, परन्तु घसीटीके अन्ध-विश्वासके सामने वह खटका ठहर न सकता था। वह समझती थी कि उसके प्रेमके आगे हुसैनकुलीखाँ और किसी से प्रेम नहीं कर सकता है।

घसीटीको इस अन्ध-विश्वासके होनेका एक कारण भी था

अर्थात् वह समझती थी, कि जब हुसैनकुलीखां ने नौकर होकर प्रभु-पत्नीको पाया है, शृगालको सिंहके उपभोग की सामग्री मिली है, तो इससे बढ़ कर उसका और क्या सौभाग्य हो सकता है? विशेष करके उसकी बराबर सुन्दरी जिसको चाहे, वह मनुष्य क्या किसी और के भुलावेमें आ सकता है?

इसी विश्वासके कारण, वह सन्देह होने पर भी हुसैनकुली पर सन्देह नहीं कर सकती थी; परन्तु जो लोग इन्द्रियपरायण हैं, वह कभी एक के प्रेममें बँधे नहीं रह सकते हैं। अवसर पाते ही, दूसरे प्रेमका अनुसन्धान करते हैं।

एक दिन हुसैनकुली और घसीटी, एक निर्जन स्थानमें, एक दूसरेके गलेमें बांहें डाले बैठे हुए थे, दोनों ही एक दूसरेको ओर एकटक देख रहे थे। इतने ही में एक बांदी अलक्षित भावसे वहां आ पहुँची। हुसैनकुलीखां और घसीटी सहसा बांदीको देखकर कांप गये, और लज्जाके मारे मरणप्राय: होगये और इस गुप्त प्रणयके प्रकाश होजानेके भयसे भयभीत हुए। बांदीको देखकर, प्रेमालिङ्गन छोड़कर, दोनों शीघ्रतासे अलग होगये।

घसीटी क्रोधसे अधीर होकर, पैरसे कुचली हुई कालभुजङ्गिनी की तरह तर्जन-गर्जन करके बोली, "तू यहां क्यों आई? किसने तुझको यहां आनेको कहा था? किस साहससे तू यहां आई? क्या तुझे अपने प्राणों की ममता तनिक भी नहीं है?"

बाँदीने हाथ जोड़कर विनय-वचनों से कहा, "नवाव-कुमारी ! अकारण क्रोध क्यों करती हो ? हमलोग आपकी दासी-बाँदीमात्र हैं ! हमलोगों को जिस समय आप जो आदेश देंगी, हमें उसको शिरोधार्य करके पालन करना होगा । हमलोग आपकी आज्ञानुवर्त्तिनी हैं । यहाँ मैं अपनी इच्छासे अथवा आपके सुखमें वाधा देनेके लिये नहीं आई हूँ ।"

घसीटी—क्या तू अपनी इच्छासे यहाँ नहीं आई है ?

बाँदी—इच्छा करके,भूखी सिंहनीके सामने कौन जायगा?

घसीटी—तो किसने तुझे यहाँ भेजा है ?

बाँदी—आपकी बहिन, अमीना बेगमकी आज्ञानुसार मैं आई हूँ ।

अमीना बेगमका नाम सुनते ही हुसैनकुली काँप गया । मन ही मन सोचने लगा, "न जाने बाँदी क्या आफ़त लाई है ?"

अमीनाका नाम सुनकर घसीटीको कुछ सन्देह हुआ । वह समझी कि इसमें कोई गूढ़ रहस्य अवश्य है । आग्रहके साथ पूछने लगी, "अमीनाने तुझे किस कामके लिये यहाँ भेजा है ? ऐसा कौनसा आवश्यक काम है कि विना कुछ कहे सुने,आनेका सम्वाद दिये विना ही, तू यहाँ आ गई ?"

बाँदी—प्रयोजन पत्रमें लिखा है ।

पत्रका नाम सुनकर घसीटीका आग्रह और भी वढ़ा । पूछने लगी, "पत्र ! पत्र ! किसने दिया है ?"

बांदी—आपकी वहिन, अमीना बेगमने दिया है।

घसीटी—किसको दिया है ?

बांदीने उँगलीका इशारा हुसैन कुलीकी ओर कर दिया।

अब घसीटीको उत्सुकताकी सीमा न रही। सन्देहके बादल और भी घनीभूत हो गये। बोली, "देखूँ वह पत्र ? देखूँ, क्या लिखा है ?"

बांदीने और कुछ न कहकर,पत्र घसीटी बेगमको दे दिया।

अब हुसैनकुलीका मुँह सूख गया। हृदय भयके मारे काँपने लगा। मन ही मन सोचने लगा कि अब निस्तार नहीं है। इतने दिनोंके बाद सब भेद खुल गया।

घसीटीने पत्र लेकर पढ़ना आरम्भ किया, उसमें इस प्रकार लिखा था:—

"प्राणेश्वर ! दासीके जीवनके जीवन ! क्या यही तुम्हारे प्रेमका परिचय है ? जो तुम्हारे प्रेमाधीन है, उसको इस तरह यातना देना क्या तुमको उचित है ? कह गये थे कि अभी आते हैं, सो अभी तक नहीं आये। तुम्हारे आनेकी आशामें सारी रात जागकर काटी, तब भी न आये। सब रात गई, अब भी दर्शन क्यों नहीं दिये ? इस आशाकी यन्त्रणाको मनुष्य कहाँ तक सह सकता है ? यदि मार डालनेकी इच्छा न हो, तो जहाँ जिस अवस्थामें बैठे हो, पत्र पढ़ते ही, इस बांदीके साथ चले आना और इस दासीको बचाना। यदि उपेक्षा करके नहीं आओगे, तो बांदीके लौटने तक आपकी

राह देखते देखते बची हो रहूँगी ; परन्तु यदि फिर भी दिखाई न दिये, तो तुम्हारे विरहमें मेरा बचना असम्भव है। तुम्हारा विरह मुझे अत्यन्त असहनीय हो रहा है। तुम्हारे प्रेमके कारण मैं अपने पतिका दुःख भूल गई हूँ। इस समय तुम ही मेरे वही पति हो। पत्नीकी यातना दूर करना, क्या पतिको उचित नहीं है ? प्राणेश्वर! और अधिक क्या लिखूँ ? दासी तुम्हारे विरहमें बड़ी कातर है, दर्शन देकर सुखी कीजिये। इति

तुम्हारी प्रेमाधीना,
अमीना।"

पत्र-पाठ शेष हुआ—आग सी भड़क उठी।

पत्र पढ़ कर घसीटीको ज्ञात हुआ कि, विश्व-संसार मानों जल रहा है, मानों आकाश पृथ्वी उलट-पुलट होरहे हैं। हृदयके भीतर भयानक उथल-पुथल होने लगा, मुख रक्तवर्ण हो गया, बड़ी भयानक मूर्त्ति हो गई। जैसे तारा टूटता है, उसी तरहसे हुसैनकुलीके पाससे उठ बैठी और बाणसे बिँधी हुई सिंहनीकी तरह गम्भीर गर्जन करके बोली, "क्या मुझको धोखा दिया गया है ? मेरे आधीन होकर मुझसे ही इतनी चातुरी! ऐसा कपट! इतने दिन तक जिस बातका विश्वास नहीं किया था, जिस बातको विश्वास-योग्य न समझकर हृदयमें स्थान नहीं दिया था, क्या वह बात सत्यमें परिणत हो गई ? ओह! कैसी चातुरी है! हुसैन! क्या यही तुम्हारा

धर्म है? क्या यही तुम्हारा उचित काम है? यही क्या तुम्हारी सत्यवादिताका परिचय है? इससे थोड़ी देर पहिले, क्या तुम नहीं कह रहे थे, कि मुझको छोड़कर और किसी रमणीसे तुमको प्रेम नहीं है? तुम्हारी बातोंकी यही सत्यता है? रे लम्पट! रे कपटी! मेरे हृदयमें जैसी तूने आज चोट मारी है, जिस प्रकार तूने मेरी आशाओंको धूलमें मिलाया है, जिस तरह तूने मुझे सदैवके लिये रुलाया है, इसी तरह तू भी उचित फल पावेगा।"

अग्नि प्रज्वलित हो गई, बांदी भी अवसर समझकर चल दी।

इधर घसीटीकी वह भयङ्कर मूर्त्ति देखकर, हुसैनकुलीखाँ के भयके मारे प्राण निकल गये। हृदय काँपने लगा। मन ही मन सोचने लगा, कि घसीटी की सान्त्वना न कर पाई तो किसी प्रकार मङ्गल नहीं है, जीवनकी आशा भी वृथा है। परन्तु घसीटीके भीतर जो ज्वाला उठ रही है, उसका ठण्डा करना सहज नहीं है।

आशा मनुष्यके जीवनकी प्रधान सहायक और परम सम्बल है। आशासे मुग्ध होकर, हुसैनकुली खाँ घसीटीके क्रोधको शान्त करनेके लिये बड़ी कातरताके साथ हाथ जोड़कर बोला, "घसीटी! प्राणाधिके! मुझको क्षमा करो। मैंने बिना समझे बूझे यह काम किया है। मैं शपथ खाकर कहता हूँ, कि अब कभी ऐसा न होगा। तुम्हारे अतिरिक्त और किसी रमणीसे प्रेम

करना तो दूर रहा, बात तक भी न करूँगा। प्रियतमे! मेरा अपराध क्षमा करो, और मुझपर प्रसन्न हो जाओ।"

इस प्रकार अनुनय-विनय करता हुआ हुसैनकुली वारम्बार कातरता दिखाने लगा। क्षमा-प्रार्थना की, किन्तु गर्विता कठोरप्रकृति घसीटीका क्रोध किसी प्रकार कम न हुआ। उसने कहा, "क्या तुझको क्षमा! जीवन रहते तो हो नहीं सकती। विश्वास-भाजन होकर, जिसने विश्वास-घातकताकी चिर विरहाग्नि जला दी है, उसी को अब क्षमा! रे प्रतारक! तेरे प्रलोभनमें अब मैं मुग्ध होना नहीं चाहती हूँ। तेरी बातों पर अब मैं विश्वास न करूँगी। तुझसे प्रेम, तुझसे अनुराग, अब मुझको तनिक भी नहीं है। तेरा मुख देखने की भी इच्छा नहीं होती है। तूने जिस तरह मेरे सुखमें बाधा दी है, वैसो हो मैं भी आजसे तेरी शत्रु हो गई हूँ। अब मैं तेरा मुँह नहीं देखूँगी।" यह कह कर घसीटी चली गई।

घसीटी को लौटानेके लिये हुसैनकुली खाँ ने बहुत कुछ अनुनय-विनय और बहुत अनुरोध किया; परन्तु घसीटीने उसकी कोई बात न सुनी, एकबार फिर कर देखा भी नहीं।

हुसैनकुलीखाँ के सिर पर मानों आकाश टूट पड़ा। उसने समझ लिया कि अब सर्वनाश उपस्थित है, अब उसकी रक्षा नहीं है। घसीटी की प्रतिहिंसाकी आगमें उसको भस्मीभूत होना पड़ेगा!

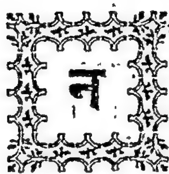
विश्वास-घातकता करके हुसैनकुलीखाँ ने जो कुकार्य्य किया है, उसने उसको व्याकुल कर दिया है। वह सोचने लगा, "हाय! क्यों मैं इस कुकार्य्यमें प्रवृत्त हुआ? नवाजिश मुहम्मद का विश्वासी होकर, उसके साथ क्यों मैंने अविश्वासका काम किया? आत्मीय होकर,क्यों अनात्मीयोंका सा काम किया? क्यों उसकी पत्नीके प्रेममें फँसा? छि:! छि:! यह काम क्या मुझसे अच्छा हुआ है? लोग सुनेंगे तो मुझसे क्या कहेंगे? नवाजिश मुहम्मद जान लेगा तो क्या कहेगा? यही क्या विश्वासका परिणाम है? यही क्या मेरा कर्त्तव्य है? हाय! मैं क्यों घसीटी के प्रलोभनमें भूल गया? हा घसीटी! हा अमीना! तुम्हारे प्रेमसे, तुम्हारे सौन्दर्यसे, तुम्हारे प्रलोभनसे मुग्ध होकर, यदि मैं यह जानता कि अन्तमें यह हलाहल उत्पन्न होगा, तो मैं कभी तुम्हारे धोखेमें न आता। कौन जानता था कि प्रेममें इतना दुःख होगा! अब समझमें आया है, कि बिना समझे बूझे इस प्रेममें जो भूलता है, परिणाममें वही दुःखका भागी होता है! घसीटी! प्राणाधिके! यही क्या तुम्हारे प्रेमका परिचय है? यदि नासमझीसे कोई अनुचित काम हो गया था, तो क्या वह क्षमा नहीं किया जा सकता था? क्षमा चाही, अनुनय-विनय करके इतना कहा, तब भी दोष मार्जन नहीं किया? नहीं, नहीं, मैंने जो विश्वास-घातकका काम किया है, उसके लिये क्षमा नहीं है। घसीटी! मैंने तुम्हारे साथ प्रतारणा करके अमीना बेगमसे प्रेम किया है। अपने

शौक़की वस्तु, प्रेमकी सामग्री, क्या कोई कभी किसी को देना चाहता है? हाय! मेरी ही दुर्बुद्धिके दोषसे यह अनर्थ हुआ! यह हलाहल उत्पन्न हुआ! प्रेम! प्रेम ही मेरा काल हुआ! नारीका प्रणय जिस तरह सुखका आधार है, वैसे ही दुःखका आकर है! इतने दिनोंके पीछे मैं समझा हूँ, कि नारी सब कुछ सह सकती है, किन्तु अपने प्रेमीको दूसरी नारीके प्रेममें आसक्त नहीं देख सकती है। और अन्यके प्रणयमें आसक्त देख कर उसका सर्व्वनाश करनेमें भी कुण्ठित नहीं होती है।

हुसैनक़ुलीख़ाँ इसी तरह बहुत देर तक सोच विचार करता रहा; किन्तु जिस चिन्ताकी सीमा नहीं, उसी चिन्ता-सागरमें डूबने उछलने लगा। अन्तमें उसको भय हुआ। वहाँ और ठहर नहीं सका। व्याकुलचित्तसे, विषण्ण-वदनसे, इस स्थानको छोड़कर चला गया।



चौदहवाँ परिच्छेद ।



वाब-महिषीका उद्देश्य सिद्ध हो गया। घसीटी और हुसैनकुलीके बीचमें सदैवके लिये विद्वेष की आग जलने लगी। घसीटी अब हुसैन-कुली का मुँह नहीं देखती है, यदि वह मिलना चाहे तो घसीटी नहीं मिलती है। नाम तक मुँह पर नहीं आने देती है। इससे पहिले घसीटी रात दिन हुसैनकुली के नामको जपती थी। इस समय नवाब-महिषी के कौशलसे, वही हुसैनकुली घसीटी की आँखोंका शूल हो गया है। इस समय वह हुसैनकुली का नाम सुनते ही अग्निमें घृताहुतिके समान जल उठती है। धन्य नवाब महिषीकी बुद्धि! धन्य उनका कौशल!

अब नवाब-महिषीने यही उचित समझा कि सिराजुद्दौला को शीघ्र ही उत्तेजित करे। देर होनेसे सम्भव है, कि उद्देश्य-सिद्धिमें कुछ गड़बड़ पड़े। सम्भव है, कि हुसैनकुली खाँ के प्रति घसीटी का विद्वेष लोप हो जाय। यह सोचकर नवाब-महिषी देर न करके परिवारके कलङ्क-मोचन और हुसैनकुली खाँ की हत्या-साधनके लिये उपाय करनेमें प्रवृत्त हुई।

सन्ध्याका समय था। दिवाकर दिन भर अविश्रान्त कर प्रदान करके, मानों थका हुआ, विश्रामके लिये पश्चिम-आकाश में चला गया है। इस समय उसका वह तेज, वह प्रखर किरणें, वह विश्व-संहारिणी मूर्त्ति नहीं है। जिस प्रकार बड़ी वयस होने पर मनुष्यका दर्प, गर्व, तेज, बल, बुद्धि साहस, यौवन कालके समान नहीं रहते हैं; दिवाकरमें भी इस समय वैसा ही परिवर्त्तन हो गया है।

सूर्यके अस्ताचल चले जाने बाद, धरणीने एक अपूर्व रूप धारण किया है। शीतल समीर मृदुमन्द गतिसे चल रही है। वृक्षों पर कोकिल आदि पक्षी बैठे हुए मधुर गान कर रहे हैं। वृक्षोंके पत्ते समीरके चलनेके कारण हिल रहे हैं, मानों उससे खेल रहे हैं। पश्चिम-आकाशमें कहीं लाल, कहीं नीले, कहीं हरे, कहीं पीले और कहीं श्वेत वर्णके बादलोंके ढेरके ढेर सज्जित होकर अनिर्वचनीय शोभा दिखा रहे हैं। दिवाकर के चले जाने बाद, इस समय सभी प्रीतिके भावसे परिपूर्ण हैं।

इस समय नवाब-महिषी अपने सोनेके कमरेमें बैठी हुई किसीकी प्रतीक्षा कर रही हैं। उनकी दृष्टि द्वारकी ओर है। कुछ भी शब्द होते ही, उत्सुकतासे उसी ओरको देखने लगती हैं।

इसी तरह बहुत देर हो गई, नवाब-महिषी मानों कुछ अधिक उत्कण्ठित और व्यस्त हो गईं। सहसा उनके मुखसे यह दो चार शब्द बाहर निकल पड़े,—"कब का सम्वाद भेजा

है, न जाने अब तक क्यों नहीं आया ? ऐसे स्वेच्छाचारीसे काम निकालना बड़ा कठिन है।"

बात पूरी पूरी मुखसे निकलने भी न पाई थी, कि बाहर किसीका पद-शब्द सुनाई पड़ा। क्रम क्रमसे, जैसे जैसे वह शब्द निकटवर्त्ती और स्पष्ट सुनाई देता गया, नवाब महिषी वैसे ही वैसे उत्सुक चित्तसे द्वारकी ओर अधिक ध्यानसे देखने लगीं। अन्तमें दिखाई दिया, कि सिराजुद्दौला घरमें आ रहा है।

सिराजुद्दौला को देखकर नवाब-महिषीकी उत्कण्ठा दूर हुई, परन्तु गाम्भीर्य्य कुछ बढ़ गया।

घरमें घुसते ही सिराजुद्दौला ने पूछा, "नानी! क्या आपने मुझे बुलाया था ?"

बेगम—हाँ, बुलाया था।

सिराज—किस लिये बुलाया है ?

बेगम—एक आवश्यक काम है, बैठ जाओ, कहती हूँ।

सिराजुद्दौलाने बैठकर कहा, "नानीजी! कहिये क्या कहती हैं ?"

नवाब-महिषीने धीर गम्भीर भावसे कहा, "सिराज! स्थिर हो जाओ, ऐसे व्यस्त क्यों हो रहे हो ? जिस कामके लिये मैंने तुमको बुलाया है, वह घबराहटका नहीं है। तुम ऐसा कौन सा भारी काम छोड़कर आये हो, जिसके लिये इतने घबरा रहे हो ? मैं जानती हूँ कि तुम दिन-रात केवल

आमोद-प्रमोदमें कालक्षेप करते हो। राज्यकी चिन्ता, अपनी उन्नतिकी चिन्ता, परिवारकी चिन्ता, कोई भी चिन्ता तुम्हारे हृदयमें स्थान नहीं पाती है। तुम युवक हो गये हो, पर अभी तुम्हारा बाल्यकालका स्वभाव दूर नहीं हुआ है। तुम केवल निरर्थक कामोंमें ही समय नष्ट किया करते हो। दो दिन पीछे यह विशाल राज्य-भार तुम्हारे ऊपर पड़ेगा, परन्तु तुमको इन बातोंकी कुछ भी चिन्ता नहीं है। किसी भी विषय को तो तुम नहीं देखते हो। तुम अब बालक नहीं हो, जो इस समय भी आमोद-प्रमोदमें समय नष्ट कर रहे हो! तुम दिन पर दिन जिस तरह आमोद-प्रिय होते जा रहे हो, इससे मुझे तनिक भी आशा नहीं है, कि तुम भविष्यत्में इस विशाल राज्यकी रक्षा कर सकोगे! तुम हमारे भावी उत्तराधिकारी हो, किन्तु तुम उस उत्तराधिकारके नितान्त ही अयोग्य हो! तुम इतने अयोग्य हो, यह मुझे नहीं मालूम था।"

सिराजुद्दौला मातामह और मातामहीके स्नेह और आदर का पाला हुआ था। उन्होंने कभी उसके ऊपर असन्तोष प्रकट नहीं किया था, स्नेह-वाक्योंके अतिरिक्त कभी कोई कड़ी बात नहीं कही थी। इसी कारण आज मातामहीकी कड़ी बातोंसे वह बड़ा ही विस्मित हुआ और बोला, "नानी! आज आप यह सब बातें क्यों कह रही हैं? राज्यकी ओर मेरी दृष्टि नहीं है, आपने यह किस प्रकार जाना?"

यह बात सुनकर, कुछ अप्रसन्नता का भाव प्रकाश करके,

नवाब-महिषी ने कहा, "जो मनुष्य अपनी जातिकी, अपने परिवारकी सुध नहीं रखता है, कि कहाँ क्या हो रहा है, वह समस्त राज्यकी सुध रक्खे, यह किस प्रकार विश्वास हो सकता है? सिराज! यदि तुम उस कामके योग्य होते, तो सदैव ही आमोद में रत न रहते। यदि तुमको सुख्यातिसे आनन्द और अख्याति से अपमान ज्ञात होता, यदि तुम अपनी वास्तविक मर्यादा समझते, तो तुम्हारे रहते ऐसी दुर्घटना कभी न होती। तुम तो कुछ देखते ही नहीं हो, केवल आत्माभिमान और आत्मगर्व लिये बैठे हो।"

मातामही का यह आकस्मिक तिरस्कार, जैसा पहिले कभी न हुआ था, सुनकर सिराजुद्दौला बहुत मर्माहत हुआ। बोला, "नानीजी! आप यह सब क्या कह रही हैं? मैं आपका अभिप्राय कुछ भी समझ नहीं सका हूँ। क्या हुआ है, मुझसे स्पष्ट करके कहिये?"

अब नवाब-महिषी विषण्ण वदनसे, दुःखित स्वरसे, बोलीं, "सिराज! और क्या कहूँ! जिसके सोचनेसे लज्जा मालूम होती है, जिसको मुखसे कहनेमें मुख अपवित्र हो जाता है, वही कलङ्ककी बात है, वह पाप-कथा कौनसे मुखसे तुम्हारे सामने कहूँ?"

सिराजुद्दौला बड़े विस्मयसे पूछने लगा, "नानी! किसका कलङ्क और किसका पाप है?"

बेगम—तुम्हारी जननी और तुम्हारी मौसी, यही दो कल-

ङ्किनी हैं, यही दो व्यभिचारिणी हैं। मैं बड़ी अभागिनी हूँ, इसीसे ऐसी कान्याओंको गर्भमें धारण किया था !

सिराजुद्दौला मन्त्रमुग्ध कालसर्पकी तरह स्तम्भित और विस्मित होकर बोला, "नानी ! आप यह क्या कह रही हैं ? मेरी माता और मेरी मौसी कलङ्किनी हैं ?"

बेगम—हाँ, तुम्हारी माता और तुम्हारी मौसी हीं हैं। यदि मेरी बातका तुमको विश्वास न हो, तो जाओ, हीरा झील जाकर अपने आमोद-प्रमोदमें मग्न हो जाओ ; परन्तु यह कलङ्क-कहानी छिपी न रहेगी, शीघ्र ही लोगोंमें प्रकाशित हो जायगी।

सिराज—नहीं नानी ! मैं आपकी बात पर अविश्वास नहीं करता हूँ ; परन्तु मैं यह पूछता हूँ, कि इतना साहस किसका है जो सिंहकी माँदमें घुसे ?

बेगम—सिंह यदि केवल सोता ही रहे, तो शृगाल भी साहस पा जाता है। तुम आमोद-प्रमोदकी मदिरा पिये हुए, आठों पहर, निद्रामें पड़े रहते हो; इसीसे शृगालकी स्पर्द्धा बढ़ गई है। और क्या कहूँ, खद्योतराशिने सूर्य्यकी प्रभा मलिन कर दी है। हुसैनकुलीखाँ ने हमारे निर्मल कुलमें कलङ्क लगाया है। इससे बढ़कर लज्जा और अपमान, और क्या हो सकता है ? सिराज ! धिक्कार है तुम्हारे जन्मको ! धिक्कार है तुम्हारे अभिमानको ! और धिक्कार है तुम्हारे पौरुष

को ! और उसको भी धिक्कार है, जो उपयुक्त पुत्रको पाकर कुलके कलङ्क-मोचनकी चेष्टा न करके निश्चिन्त रहे !

इतने दिनोंके पीछे सिराजुद्दौलाको सहसा फ़ैज़ीकी बात याद आई। माता और मौसीके कुचरित्रकी बात सुनकर, वह मानों मरणप्राय और हतबुद्धि हो गया। मन ही मन चिन्ता करने लगा,"एक समय फ़ैज़ीके मुँहसे यह बात सुनकर विश्वास नहीं हुआ था। यह बात विश्वास-योग्य भी नहीं समझी थी। जननीके चरित्र पर दोषारोपण ही, फ़ैज़ीके प्राण-विनाश का मुख्य कारण था। आज पुत्र होकर सत्य ही उस पूजनीया जननीके कलङ्ककी कथा सुननी पड़ी ! फ़ैज़ीकी बात सत्यमें परिणत हो गई ! छिः ! छिः ! कैसी लज्जा और घृणाकी बात है !"

यही सब सोचते सोचते सिराजुद्दौला का मुख मलिन हो गया। मातामही को मुँह दिखानेमें भी उसको लज्जा मालूम होने लगी।

नवाब-महिषी उसके मनकी अवस्थाको समझ कर, हुसैन-कुलीखाँ के विरुद्ध उसके क्रोधको उद्दीपित करनेके लिये बोली, "सिराज ! वृथा क्या सोच रहे हो ? जो कापुरुष हैं,निर्वीर्य्य हैं, वही चिन्ता करके निरर्थक समय नष्ट करते हैं। यदि वास्तव में तुमको अपनी मर्यादाका बोध हो, यदि तुम कुलके कलङ्क को छुड़ाना चाहते हो, यदि लोगोंका उपहास तुमको असह्य मालुम हो, तो तुमको शीघ्र ही वह उपाय करना चाहिये,

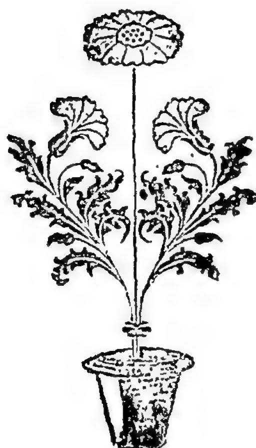
जिससे यह कलङ्क-कहानी लोग जान न पावें । वह उपाय न करके, तुम अभी तक निश्चिन्त बैठे हो ! तुम्हारा यह उदास भाव देखकर मुझको ज्ञात होता है, कि तुम अपनी माता और मौसीकी कलङ्क-कहानी सुनना पसन्द करते हो ; इसीसे अभी तक, कोई उपाय न करके, निश्चेष्ट बैठे हो ! सिराज ! यही क्या तुम्हारा वीरत्व है ! यही क्या तुम्हारा पुरुषत्वका अभिमान है ! मैंने समझ लिया कि तुम्हारे तुल्य दूसरा कापुरुष और न होगा ! धिक्कार है तुम्हारे जीवनको !"

यह बातें सिराजुद्दौलाके अङ्गमें तप्त लोह-शलाकाकी तरह लगीं । मातामहीके वाक्य-बाणोंसे क्षत-विक्षत होकर वह और न सह सका । बोला, "नानी ! बहुत हुआ और कुछ न कहिये । अब यह बतलाइये, कि कलङ्क-मोचनका उपाय क्या है ?"

बेगम—सिराज ! क्या यह भी मुझको ही बतलाना होगा ? यही क्या तुम्हारी राजबुद्धिका परिचय है ? तुम इसी बुद्धि पर इतना गर्व करते हो ? जिसकी बुद्धि इतना भी स्थिर न कर सके, उसकी बुद्धिको धिक्कार है !

"नानी ! समझ गया, आप कुछ न बतलाइये । मैं आज आपके सामने प्रतिज्ञा करता हूँ, कि यदि उसी हुसैनकुलीखाँ का सर्व्वनाश करके, कुल-कलङ्कको मोचन कर सकूँगा, तो फिर मुँह दिखाऊँगा और यही जीवन रक्खूँगा, नहीं तो

सदैवके लिये विदा होता हूँ।" यह कहकर सिराजुद्दौला बड़े वेगसे घरके बाहर हो गया। नवाब-महिषीने समझ लिया कि हुसैनकुली का अब निस्तार नहीं है। उसका उद्देश्य सफल हुआ।



पन्द्रहवाँ परिच्छेद ।



ई कितना ही निर्वीर्य्य क्यों न हो, कितना ही भीरु क्यों न हो, चाहे जैसा कापुरुष क्यों न हो, परिवारकी किसी रमणीको कुपथगामी होते देखकर, उसके क्रोधकी सीमा न रहेगी। वह परिवारके कलङ्कको कभी चुपचाप न सह सकेगा। प्रतिहिंसाके हिताहित-ज्ञानशून्य होकर, सम्भव है कि आत्म-प्राण विसर्जन करके मनकी व्यथा; भीतरकी ज्वालाको दूर करे, अथवा कलङ्क लगानेवालेके प्राण संहार करके मनकी अग्निको शान्त करे।

निष्कलङ्क कुलमें यह दारुण अमिट कलङ्क! सिराजुद्दौला लज्जा और घृणा और अपमानसे जलने लगा। उसके मर्मस्थलमें छेद हो गये। रोष और प्रतिहिंसासे सारे शरीरमें सैकड़ों बिच्छुओंके काटने की सी ज्वाला मालूम होने लगी। एक तो जननीके कलङ्ककी बात, तिसके ऊपर मातामहीके तरह तरहके ताने और तिरस्कार! उसके हृदयमें मानों किसी ने दावानल जला दी थी। आत्माभिमानी गर्वित सिराजको यह ज्वाला बड़ी ही असह्य ज्ञात होने लगी। उसके मनमें

शान्ति नहीं थी, आमोद-प्रमोदमें प्रवृत्ति नहीं थी, उठते-बैठते, खाते-पीते, सोते-जागते किसी समय शान्ति नहीं थी। जननीका कुचरित्र, हुसैनकुलीखाँ का दुःसाहस, मातामहीका तिरस्कार, एक एक करके चित्तमें घूमने लगे। वह प्रतिशोध की लालसासे व्याकुल हो उठा।

सिराजुद्दौला मातामही के पाससे प्रतिज्ञा करके, मनके आवेगसे मोतीझीलकी ओर चला; किन्तु कुछ दूर जाकर कुछ सोचकर खड़ा हो गया। खड़े खड़े न जाने क्या सोचता रहा। अन्तमें वहाँसे चलकर जहाँ उसकी नौका बँधी थी, वहाँ पहुँचा और नौका पर सवार होकर मल्लाहसे हीराझील चलनेका आदेश किया।

देखते देखते नौका भागीरथीके पूर्वी किनारे हीराझील पर आ पहुँची। सिराजुद्दौला नौकासे उतर पड़ा।

प्रमोदशालामें सहचर लोग सिराजुद्दौलाकी राह देख रहे थे, परन्तु आज उसको आमोद-प्रमोद,भोजन-पान कुछ भी अच्छा नहीं लगा। किसी के साथ कोई बात-चीत न करके सीधा अपने शयनगृहमें चला गया।

लुत्फुन्निसा उस घरकी अधिष्टात्री थी, सिराजको असमय शयनगृहमें आते देखकर बड़ी ही विस्मित हुई और बोली, "प्राणेश्वर! आज आपके इस बेसमयके आनेका क्या कारण है? कहनेमें यदि कुछ सङ्कोच न हो, तो दया करके दासीकी उत्कण्ठा दूर कीजिये।"

सिराज—लुत्फुन्निसा! आज यहाँ मेरे इस प्रकार आनेको देखकर, वास्तवमें तुम विस्मित होगी और कारण जाननेके लिये आग्रह भी हो सकता है; परन्तु जिस कारणसे यह हुआ है, वह बड़ा भयानक है!

लुत्फु—प्रभो! मेरा अपराध क्षमा कीजिये, परन्तु कारण जाननेके लिये दासी बड़ी उत्सुक है। क्या यह दारुण उत्सुकता निवारण न कीजियेगा?

सिराजुद्दौला एक गम्भीर, विषादपूर्ण, दीर्घ निःश्वास परित्याग करके बोला, "लुत्फुन्निसा! और क्या कहूँ? जिसको ध्यानमें नहीं ला सकता हूँ, मुँहसे भी नहीं निकाल सकता हूँ, जिसको एक दिन सुनना होगा, इसकी सम्भावना भी नहीं थी, आज वैसी ही एक बात सुनकर हृदयमें बड़ी व्यथा हुई है। ऐसी मर्मान्तक वेदना जीवनमें कभी भी नहीं हुई थी! इस वेदनासे मैं अस्थिर हो गया हूँ। आमोद-प्रमोद सब ही विषवत् मालूम होते हैं। कोई वस्तु अच्छी नहीं लगती है।"

लुत्फु—नाथ! ऐसी क्या बात है, जिसके कारण आप ऐसे कातर और दुःखित हो रहे हैं?

सिराज—लुत्फुन्निसा! जो कुछ हुआ है, वह अति शोचनीय है। सिंहकी माँदमें शृगालने अधिकार कर लिया है! पुत्र होकर जननीके कलङ्ककी बात सुननी पड़ी है! इससे बढ़कर और क्या दुर्दैव हो सकता है? इससे बढ़कर और क्या मर्मवेदना हो सकती है? लुत्फुन्निसा! धिक्कार है मेरे जीवनको!

धिक्कार है मेरे आत्माभिमानको ! और धिक्कार है मेरे दर्पको ! पुत्र होकर जननीके चरित्र-दोषकी बात सुनकर, मैं अभी तक जीवित हूँ ! अभी तक कोई प्रतीकार न करके निश्चिन्त बैठा हुआ हूँ ! मैं बड़ा ही भीरु हूँ, बड़ा ही कापुरुष हूँ, इसीसे शरीरमें रक्त होते हुए भी, बांहोंमें बल होते हुए भी, कमरमें तलवार बँधी रहने पर भी, अभी तक कलङ्क-मोचनका यत्न न करके निश्चेष्ट बैठा हुआ हूँ। क्या यही मेरा तेज है ! यही क्या मेरे पुरुषत्वका अभिमान है ! यही क्या मेरा वीरत्व है ! धिक्कार है मुझको !"

सासके कुचरित्रकी बात सुनकर लुत्फुन्निसा बड़ी ही विस्मित हुई। मन ही मन सोचने लगी, "कैसे आश्चर्यकी बात है, जो मनुष्य सोच भी नहीं सकता है, कानोंसे सुनना तो दूर रहा, आँखोंसे देखकर भी जिसका विश्वास नहीं हो सकता है, वही बात क्या सत्यमें परिणत होगई ? इसीलिये पुरुष रमणीको गोदमें बिठाये हुए भी उसका विश्वास नहीं करते हैं। धिक्कार है नारी-जातिको ! और धिक्कार है उनकी इन्द्रियोंको !"

लुत्फुन्निसा जितनी ही अपनी सासकी बातोंको सोचने लगी, उतनी ही उसके चित्तमें नारी-जातिके ऊपर घृणा बढ़ने लगी। नारी होकर भी वह नारी-जातिकी निन्दा करनेसे रुक न सकी। नारीके ऐसे कुचरित्रकी बातें जितनी ही उसके ध्यानमें आतीं, उतनी ही वह लज्जा और घृणासे मरणप्राय होने लगी।

लुत्फुन्निसा विषण्ण वदनसे बोली, "मुझको ऐसा ज्ञात होता है, कि हम लोगोंके किसी शत्रुने,हम लोगोंकी अप्रतिष्ठा करनेके लिये,यह मिथ्या कलङ्क लगाया है।

सिराजुद्दौलाने बड़े दुःखित स्वरसे कहा, "नहीं, लुत्फुन्निसा! तुम जो सोचती हो वह बात नहीं है। ऐसा किसका साहस है, कि सिराजुद्दौलाकी माता और मौसीके चरित्रमें मिथ्या कलङ्क लगावे?"

लुत्फु—आपने यह बात कहाँ सुनी?

सिरा— लुत्फुन्निसा! जिससे सुनी है, उस पर अविश्वास करनेका कोई कारण नहीं है। जनक-जननी अपने पुत्र-कन्या पर मिथ्या दोष नहीं लगा सकते हैं। लुत्फुन्निसा! यह कलङ्क मिथ्या नहीं है, मेरा हृदय इस बातकी साक्षी देता है कि यह बात मिथ्या नहीं है। यदि मिथ्या होती, तो मेरा हृदय इस तरह एकबारगी उसको विश्वास न कर लेता, और विद्वेषकी आग भी इस तरहसे जी को न जलाती। ओह! ज्वाला! ज्वाला! असह्य ज्वाला! हृदय जल गया है! लुत्फुन्निसा! मैं और अधिक स्थिर नहीं रह सकता हूँ। लाओ, दो, मेरी तलवार मुझको दो। मैं इसी समय उस दुरात्मा हुसैनकुली के रक्तसे कलङ्क-मोचन करके, हृदयकी ज्वाला,अन्तरकी व्यथा, निवारण करूँगा! ओह! असह्य! असह्य!

लुत्फुन्निसा सिराजुद्दौलाके दोनों पैर पकड़ कर बोली, "नाथ! स्थिर हूजिये, इतने उतावले क्यों होते हैं? किसी

कामको करनेसे पहिले, विशेष रूपसे उसकी विवेचना कर लेना उचित है; नहीं तो अन्तमें पश्चात्ताप करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त, शत्रुके प्रति क्षमा की बात भी सोच लेनी चाहिये।"

सिराज—लुत्फुन्निसा! कुलनाशी शत्रुको क्षमा कैसी! अब मैं स्थिर होऊँ! लुत्फुन्निसा! अब स्थिर होना कैसा? जिसके हृदयमें विद्वेषकी आग, चिताकी आगकी तरह प्रबल वेगसे जल रही है, वह क्या कभी स्थिर हो सकता है? यदि किसीकी उँगलीका अग्र भाग जल जाय, तो वह उसकी ज्वालासे अस्थिर हो जाता है; मेरे तो हृदयमें विद्वेषकी अग्नि प्रज्वलित हो रही है, और सारे शरीरको दग्ध कर रही है. मैं किस तरहसे स्थिर हो सकता हूँ? अग्नि बुझ जाये, ज्वाला ठण्डी हो जाय, तब स्थिर हो सकता हूँ। लुत्फुन्निसा! जो कापुरुष हैं, जो भीरु हैं, वही प्रतिशोध न लेकर क्षमाका आश्रय लेते हैं। मेरे शरीरमें जीवन रहते, मैं कभी कापुरुषता का काम नहीं कर सकूँगा। मेरे सामने कुलनाशी शत्रुको कभी क्षमा न मिलेगी। मैंने प्रतिज्ञा कर ली है, कि कल सूर्योदय तक, जैसे बनेगा वैसे, उस कुल-कलङ्ककारी हुसैनकुलीखाँ का प्राण संहार करके, उसके रक्तसे हृदयकी आग बुझाऊँगा; नहीं तो यह आग किसी तरह न बुझेगी।

सिराजुद्दौलाको दृढ़प्रतिज्ञ देखकर, लुत्फुन्निसाने और कोई बात नहीं कही।

सोलहवाँ परिच्छेद ।

जिस दिनसे हुसैनकुलीखाँ के साथ घसीटी बेगम को प्रेमके बदले चिर शत्रुता जन्मी, अबसे घसीटी बेगम हुसैनकुलीखाँ को विद्वेषकी आँखसे देखती है, जिस दिनसे घसीटी बेगमने हुसैनकुलीखाँ की प्रणयनी होने पर भी प्रणय-रज्जू तोड़ डाली, जिस दिनसे घसीटी बेगमने हुसैनकुलीसे मिलना-जुलना एकदम बन्द कर दिया है, जिस दिनसे घसीटी प्रति-हिंसासे अन्धी होकर हुसैनकुलीखाँ का सर्वनाश करनेकी बात अपने मुखसे कह चुकी है, उसी दिनसे हुसैनकुलीके हृदयमें बड़ी आशङ्का उत्पन्न हो गई है। इस समय वह बड़ा चिन्ता-ग्रस्त हो रहा है।

जैसे हो जैसे दिन काटने लगे, वैसे ही वैसे हुसैनकुलीका भय बढ़ता गया। उसके मनमें यही चिन्ता लगी रहती थी, कि न जाने घसीटी उसको किस भयानक विपद्में डालनेके लिये कौनसा षड़यन्त्र रच रही होगी।

इस आशङ्का और दुर्भावनाके उदय होनेसे, हुसैनकुलीखाँ उन्मादको तरह हो गया। उसको आमोद-प्रमोद, आहार-

विहार, सोना-बैठना कुछ भी शान्ति न पहुँचाता था। वह सदैव ही चिन्तायुक्त रहता था।

यद्यपि हुसैनकुलीख़ाँ सदैव ही चिन्तायुक्त रहता था, तथापि इस भयसे कि कहीं अमीना सब बातें न जान जाय, वह उसको चिन्तायुक्त देखकर किसी तरहका सन्देह न करे, जब वह अमीनासे मिलता, तो बहुत अच्छी तरह मिलता और अपने सब भाव छिपाये रखता।

तीन चार दिन हो गये, परन्तु हुसैनकुलीख़ाँ किसी तरह निःशङ्क अथवा निश्चिन्त न हो सका। दिन-रात उसके हृदय में घसीटी बेगमकी वही भयङ्कर मूर्त्ति बसी रहती थी। अनेक चेष्टा करने पर भी, वह उसको भूल नहीं सकता था।

रात दो पहर जा चुकी है। प्रकृति स्थिर, गम्भीर, निश्चल और नीरव है। जीवमात्रका कहीं शब्द सुनाई नहीं देता है। सभी शान्तिदायिनी निद्राकी कोमल गोदमें वाह्यज्ञान-शून्य होकर सो रहे हैं। सुखसे शान्ति-सुख और विश्राम-सुख अनुभव कर रहे हैं।

हुसैनकुलीख़ाँ इस समय शय्या पर लेटा हुआ है, यद्यपि दुग्धफेन की सी शय्या स्वच्छ और कोमल है, परन्तु उसको अच्छी नींद नहीं आई है। क्षण क्षण पर तरह तरहके भयानक स्वप्न देखकर निद्रा सुखमें विघ्न हो जाता है। वह स्वप्न देख रहा है, कि मानों घसीटी खुले हुए केशोंसे, बड़े वीभत्स वेशसे, शय्याके पास आकर खड़ी हुई है। हुसैनकुली घसीटीकी

वह भयानक मूर्त्ति देखकर काँप गया, उसको ओर देख न सका, कोई बात भी न बोल सका। परन्तु घसीटी उसको निर्व्वाक् देखकर, क्रोध भरे नेत्रोंसे, बड़े कार्कश स्वरसे बोली, "रे प्रतारक! तू क्या सोच रहा है? तू ने क्या समझा था, कि तेरी शठताकी शास्ति दिये बिना ही मैं निश्चिन्त हो जाऊँगी? आज जो तुझको तेरी प्रतारणाकी उचित शास्ति देने आई हूँ, सो क्या तू नहीं जानता है? नहीं तो, घसीटीने जीवन-भरके लिये तेरा मुँह न देखनेकी जो प्रतिज्ञा की है, सो क्या अब तेरी प्रेमाभिलाषिणी होकर यहाँ आवेगी, क्या तू यही समझता है? रे प्रवञ्चक! घसीटी यहाँ प्रेमाभिलाषके लिये नहीं आई है। तेरे प्राण लेनेके लिये आई है। तू ने जैसी मेरे साथ प्रतारणा की है, तू ने जैसा मुझे रुलाया है, तू ने जैसा मुझे दावाग्निसे जलाया है, वैसे ही मैं आज तुझे सभी सुखोंसे वञ्चित करूँगी। इस जगत्से तेरा नाम सदैवके लिये मिटा दूँगी। तू जीवित रह कर, अमीनाको लेकर, सुखसे जीवन व्यतीत करे और मैं आँखोंके सामने उसको देखकर पेट की पेट में जलती रहूँ,—यह कभी न होगा—यह मैं कभी न सह सकूँगी! तुझको संहार करके, मनकी आगको, हृदयकी ज्वालाको, आज ठण्डी करूँगी।"

घसीटीको प्राण-संहार करनेके लिये उद्यत देखकर, हुसैनकुलीखाँ बड़ा व्याकुल हुआ। जीवनकी आशासे बड़ा कातर

होकर बोला, "घसीटी! प्राणाधिके! मुझे क्षमा करो! मेरे प्राण नाश मत करो। मैंने बेसमझे बूझे जो काम किया है, उसके लिये क्या क्षमा नहीं है? मैं जीवन-भर अब ऐसा काम कभी न करूँगा और तुम्हारा अवाध्य कभी न होऊँगा। तुम मेरे प्राण नाश मत करो। घसीटी! प्रियतमे! यदि मैंने भ्रममें पड़कर कोई अनुचित काम किया है, तो क्या उस अपराधकी मार्जना नहीं है? मुझको जीवन-भिक्षा दो, मैं तुम्हारा ही हूँ। जिसको एक दिन तुमने 'प्राणेश्वर' कहकर सम्बोधन किया है, आज कैसे निठुर होकर उसके प्राण-संहारको उद्यत होती हो? घसीटी! प्राणेश्वरी! मेरी रक्षा करो, मैं तुम्हारा ही हूँ। जीवनमें कभी तुम्हारा अवाध्य न होऊँगा।"

इस बार घसीटी जलती हुई आगमें घृताहुतिकी तरह क्रोधसे रक्तवर्ण हो उठी। विकट रव से चीत्कार करके बोली, "रे प्रतारक! तू 'प्राणेश्वरी' कहकर किसको सम्बोधन करता है? अब मैं तेरी प्रणयिनी नहीं हूँ। मैं तेरी प्राण लेनेवाली शत्रु हूँ। तू क्या समझता है कि घसीटी तेरे प्रलोभनमें मुग्ध होगी, अथवा तुझको 'प्राणेश्वर' कह कर हृदयमें स्थान देगी? इस मुँहसे जो बात एक बार बाहर हुई, वह अन्यथा न होगी। जबकि तेरे प्राण-संहार करनेकी ही एक मात्र प्रतिज्ञा की है, तब तुझको किसी प्रकार क्षमा नहीं कर सकती हूँ। जब तक तेरा प्राण विनाश नहीं कर चुकूँगी, तब तक मेरे हृदय की आग किसी तरह न बुझेगी। तेरा प्राण-नाश करना ही

मेरा एक मात्र उद्देश्य है। यह देख, इसीके लिये यह सान धरी हुई तलवार साथ लाई हूँ। अब तेरा परित्राण नहीं है।" यह कह कर मानों घसीटी हुसैनकुलीखाँ के प्राण-संहारको उद्यत हुई। वह भी भयके मारे विकट चीत्कार करके बोला, "घसीटो! मेरी रक्षा करो, रक्षा करो, प्राणोंसे न मारो!"

दारुण चीत्कारसे हुसैनकुलीखाँ की निद्रा भङ्ग हो गई। उठने पर देखा कि कहीं कोई नहीं है। वह अकेला अपने घरमें पलँग पर पड़ा हुआ है, पासही दीपक जल रहा है। यह देखकर यद्यपि वह कुछ स्वस्थ हुआ, परन्तु सम्पूर्ण रूपसे स्थिर न हो सका। भयानक स्वप्न देखनेसे उसकी छाती धड़क रही थी, चित्त अस्थिर हो रहा था, तरह तरहकी चिन्तायें आकर मनमें उदय होने लगीं। वह ऐसा भयभीत और व्याकुल हो गया कि जिसका पार नहीं।

शय्या पर पड़ा पड़ा, तरह तरहकी भावनाएँ करने लगा। सोचता सोचता फिर सो गया, और वाह्यज्ञानशून्य हो गया। शङ्का और भय सभी जाते रहे। शान्तिमयी निद्रादेवीकी सुकोमल गोदमें सोकर, कुछ देरके लिये, सब दुःख-कष्ट भूल गया।

किन्तु क्षण भरके बाद फिर स्वप्न देखने लगा। देखा, कि एक टिकटी पर रखकर कई एक फ़क़ीर उसको कन्धों पर उठाकर लिये जा रहे हैं। फ़क़ीरोंकी पोशाक अपूर्व ढँगकी

है। सभीके मुँहसे "अल्ला:, अल्ला:, मुहम्मद, मुहम्मद," इत्यादि शब्द निकल रहे हैं।

यह स्वप्न देखकर हुसेनकुली खाँ के हृदयमें बड़ा आघात पहुँचा, वह फूट फूटकर रोने लगा।

यह स्वप्न भी गया। हुसेनकुली फिर एक स्वप्न देखने लगा। मानों वह राजपथ पर जा रहा है। इसी समयमें सहसा सिराजुद्दौलाने आकर उसको घेर लिया, और बहुत कड़े वचनोंसे यथेष्ट तिरस्कार और अपमान करके द्वन्द युद्धमें प्रवृत्त हुआ, और अन्तमें उसके ऊपर तलवारका आघात करने लगा। तलवारके आघातसे उसका सारा शरीर क्षत-विक्षत हो गया, रुधिर बहने लगा, प्राण कण्ठागत हो गये। बचनेके लिये "असीना! असीना! मेरी रक्षा करो, रक्षा करो, सिराज ने मुझको मार डाला" कह कर चिल्ला उठा। इस चिल्लानेसे फिर उसकी निद्रा भङ्ग हो गई। आँखें खुलने पर देखा, न राजपथ है, न सिराजुद्दौला है। कहीं कुछ भी नहीं है, घरमें अकेला शय्या पर पड़ा हुआ है।

एकके पीछे एक स्वप्न देखनेसे हुसेनकुली खाँ का चित्त बड़ा अस्थिर हो गया। फिर उसको नींद नहीं आई। सारी रात जागकर तरह तरहकी दुर्भावनायें करते करते कट गई।

प्रातःकाल हुआ। अन्धकार जाता रहा। निर्जीव जगत् सजीव हो गया। पक्षी घोंसलोंमें बैठे हुए प्रातःकालके मङ्गल-गीत गाने लगे। सवेरेकी समीर मृदुमन्द गतिसे चलने

लगी। उद्यानोंमें फूल खिलने लगे। भौंरे उनकी गन्ध पाकर मधुपान करनेके लिये गुन गुन करते हुए उड़ने लगे। निशावसान होने पर सभी जाग उठे। पृथ्वी कोलाहलसे भर गई।

प्रातःकाल होने पर हुसैनकुलीखाँ उठा, धीरे धीरे घरके वाहर आया। रातका भीषण स्वप्न और दारुण दुश्चिन्ता उसके चित्तको अस्थिर करने लगी। उसको कुछ भी अच्छा नहीं लगता था।

देखते देखते दिवाकर रक्तवर्णसे पूर्व्व-आकाशमें उपस्थित हुआ। नवोदित सूर्य्यकी किरणें जलमें, थलमें, वृक्षों पर पड़ने लगीं। कमलिनी-पतिके उदय होनेसे पृथ्वी आलोकित हो गई, पथ घाट सब लोगोंसे भर गये।

हुसैनकुलीखाँ दारुण चिन्ताकुल चित्तसे धीरे धीरे मोती भीलकी ओर चलने लगा। उसका चित्त आज बड़ा ही अस्थिर है। मनमें मन नहीं है, देहमें प्राण नहीं हैं, शरीरमें वल नहीं है, दृष्टिमें तेज नहीं है। मानों कठपुतलीकी भाँति चला जा रहा है। रातके दुःस्वप्न, सागरके पानीकी तरह चित्तको उथल-पुथल कर रहे हैं।

हुसैनकुलीखाँ इस प्रकार चिन्तित हृदयसे जा रहा है। कुछ ही दूर गया होगा, कि उसको कालरूप सिराजुद्दौला दिखाई दिया। सिराजुद्दौलाको देखते ही उसको रातका स्वप्न याद हो आया। हृदय काँपने लगा, कण्ठ सूख गया, पैर और आगे न बढ़ सके।

सिराजुद्दौला इस भाँति कभी राजपथ पर नहीं चलता है; विशेष करके इस समय प्रातःकाल है। इसी कारण उसको देखकर हुसैनकुलीको भयका सञ्चार हुआ। सिराजुद्दौला उसको साक्षात् यम दिखाई देने लगा।

दोनों सामने आये। सिराजुद्दौला अभी तक प्रतीक्षा कर रहा था, अब शिकारको सामने पाकर, रोषमें भर गया। मुख नवोदित सूर्य्यकी तरह रक्तवर्ण हो गया। नेत्रोंसे अग्नि निकलने लगी। वह मूर्त्ति देखकर हुसैनकुली समझा, कि स्वप्न सत्य मालूम होता है।

साहस करके हुसैनकुली ने जानेका उद्योग किया; परन्तु सिराजुद्दौला उसकी राह रोक कर खड़ा हो गया। दाँतोंसे दाँत पीसता हुआ चिल्लाकर बोला, "और आगे मत बढ़, यहीं खड़ा रह। तेरे कर्मका उपयुक्त फल, आज अभी, तुझको भोग करना होगा।"

किसी तरह भाग जानेकी इच्छासे, सिराजुद्दौलाके रोकने पर भी, हुसैनकुली खाँ ने दो चार पैर आगे बढ़ाये; किन्तु सिराजुद्दौलाने और अधिक उसको बढ़ने नहीं दिया। कमरसे तलवार निकाल कर बोला, "अब भी ठहर जा! यदि और एक पग भी आगे बढ़ा, तो अभी इस तलवारके आघातसे टुकड़े टुकड़े कर दूँगा!"

भयके मारे हुसैनकुली आगे नहीं बढ़ा। बहुत धीरेसे, काँपते हुए स्वरसे बोला, "सिराज! आज तुम राजपथमें खड़े

होकर मुझसे ऐसे अपमान-सूचक शब्द क्यों कह रहे हो? और जानेसे क्यों रोक रहे हो? किसके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिये, क्या तुमको इसका ज्ञान अभी तक नहीं हुआ है? जानते हो, एक समय मैं तुम्हारा शिक्षा-गुरु रह चुका हूँ। मुझसे ऐसे कटु वाक्य कहना उचित नहीं है। मैंने तुमको बड़े यत्नसे शिक्षा दी है, क्या शिक्षा-दानका यही फल है? गुरुकी अवहेलना! गुरुकी अवमानना! अभी तक तुम्हारा वह बालकपन दूर नहीं हुआ है? छोड़ो, राह छोड़ो, राहमें गुरुजनोंके साथ ऐसा व्यवहार करना बड़ी लज्जाकी बात है।"

सिराजुद्दौला दाँतोंसे दाँत पीसता हुआ व्यङ्गसे बोला, "हाँ, लज्जाकी बात अवश्य है! तेरी सी नीच प्रकृतिवाले मनुष्यसे मुझको शिक्षा-लाभ करना पड़ा है, इसलिये मुझको धिक्कार है! तुझसे शिक्षा-लाभ किया है, इससे मुझको घृणा होती है, और तू उससे अपना गौरव समझता है! धिक्कार है तुझको! और धिक्कार है तेरे गौरवको! तू बड़ा ही मूर्ख है, इसीसे गौरव समझता है। तू लोगोंको मुख किस प्रकार दिखाता है! क्या तू जानता है, कि तेरे चरित्रकी कथा सिराजुद्दौलाको मालूम नहीं है? जब तक तेरी यह कथा न जान पाई थी; और नहीं सुनी थी, तबतक तुझको शिक्षागुरु समझ कर भक्ति और सम्मान करता था। परन्तु इस समय तेरी ओरसे श्रद्धा-भक्ति जाती रही है। मैंने जान लिया है, कि तेरे बराबर पाखण्डी, नराधम और काफ़िर जगत्में दूसरा नहीं है।"

हुसेन—सिराज! तुम क्यों यह बात कह रहे हो? मैंने तुम्हारा क्या किया है?

"क्या किया है? याद नहीं है? रे विश्वासघातक! तेरे बराबर नराधम क्या संसारमें कोई दूसरा है? जो तेरा विश्वास करे, उसीका तू सर्वनाश करे! आज तुझको उसका उचित फल भोग करना होगा। आज सिराजके इस कराल हाथसे तुझ को उपयुक्त शिक्षालाभ होगा। आज तुझको मालूम होगा, कि अग्निमें हाथ डालने से क्या परिणाम होता है? आज तू किसी तरह न बचेगा। तेरे रक्तसे आज मैं हृदयकी ज्वाला ठण्डी करूँगा। तुझको आज यमके घर भेजकर मनकी व्यथा दूर करूँगा।" यह कहकर सिराजुद्दौलाने हुसैनकुलीके ऊपर तलवारका आघात किया। एक ही आघातमें, हुसैनकुली की देह दो खण्ड होकर, कदलीके पेड़ की तरह, पृथ्वीपर गिर पड़ी; रक्तका स्रोत बह निकला। हुसैनकुली की आँखें इस जीवनके लिये बन्द होगईं। गुप्त प्रेमका परिणाम कैसा भयङ्कर है, हुसैनकुलीखाँ इसका अच्छा दृष्टान्त है।

हुसैनकुलीखाँका संहार करके भी सिराजुद्दौलाके चित्तका दुःख दूर नहीं हुआ। उसने अनुचरोंको बुलाकर आदेश दिया,—"हुसैनकुलीकी इस खण्डित मृत देहको हाथी की पीठ पर डालकर खुले हुए राजपथ पर ले जाओ और सब लोगोंको बतलाओ कि हुसैनकुलीने अपने दुष्कर्मके शास्ति-स्वरूपमें सिराजुद्दौलाके हाथसे प्राण विसर्जन किये हैं।"

सिराजुद्दौलाका आदेश अन्यथा होनेवाला नहीं था। उन्होंने वैसा ही किया। हुसैनकुलीख़ाँ की मृत देह हाथी की पीठ पर रखकर राजपथ पर ले चले। युवराजकी प्रतिज्ञा-पूर्ण हुई। नवाब-महिषीका उद्देश्य भी सिद्ध हुआ। परिवार की कलङ्क-कालिमाने अधिक वृद्धि नहीं पाई।

हुसैनकुलीखाँ की हत्या-कहानी मुर्शिदाबादमें, नगर-ग्राममें, लोगोंके घर घरमें, प्रचारित होगई। जो सुनता था, इस भीषण हत्याकाण्ड की बात सुनकर काँप जाता था। बहुतोंने नाना रूपसे इस भीषण हत्याकी आलोचना करके सिराजको "घोर दुर्द्दान्त नृशंस" बतलाया। परन्तु वास्तवमें बात क्या थी, किसीने अनुसन्धान नहीं किया, अथवा कोई जान भी न सका।

हुसैनकुली की हत्याके सम्वादसे राजा राजवल्लभके भय की सीमा न रही। वह अपना परिणाम सोचकर व्याकुल होगया।

इस सम्वादसे अमीनाके हृदयको भारी आघात पहुँचा। शोक और दुःखसे मुह्यमान होगई, परन्तु उसका पुत्र ही उसके शोकका एकमात्र कारण था; इसलिये वह उसका बदला न ले सकी। यदि और कोई होता, तो अमीना कभी शान्त न होती; परन्तु पुत्र चाहे जैसा दुःख, कष्ट, यातना, वेदना देवे; पुत्रवत्सला जननी क्या कभी सन्तानसे बदला ले सकती है? अमीना बेगमने निरुपाय होकर इस दारुण शोक-ताप, भीषण मर्मवेदना को हृदयमें ही छिपा रक्खा, प्रकाशित न कर सकी।

सत्रहवाँ परिच्छेद ।

न वाव अलीवर्दी बीमार हैं, उदर-रोगसे पीड़ित हैं। यह आशा नहीं है कि रोगमुक्त होंगे। मरहटोंके साथ सदैव के लिये सन्धि होगई यह सत्य है, किन्तु उनलोगोंका दमन अलीवर्दी नवाबके लिये कालस्वरूप हुआ।

मरहटोंके दमनके लिये नवाब अलीवर्दी बराबर एक शिविरसे दूसरे शिविरमें घूमते फिरते थे, युद्ध-विग्रहमें ऐसे लिप्त रहते थे कि एक घड़ी भी चैन नहीं था। बिना खाये-पिये, बिना सोये, दारुण दुश्चिन्तामें दिन कटता था। इसी कारणसे सदैव के लिये उनका स्वास्थ्य बिगड़ गया। शेषमें, उदर-रोग काल होकर उनके पीछे लगा। बल-वीर्य, वीरत्व क्रम क्रमसे लोप होने लगी। जीवनकी आशा भी क्रम क्रमसे टूटने लगी। हकीम वैद्योंके बड़े यत्नसे चिकित्सा करने पर भी, रोगमें कुछ कमी न हुई। जैसे जैसे दिन कटने लगे, वैसे ही वैसे रोग बढ़ने लगा। साथ ही सब लोग नवाबके जीवन की आशासे निराश होगये।

विज्ञ बहुदर्शी वृद्ध नवाबने समझ लिया, कि काल-व्याधि

ने उनपर आक्रमण किया है, अब इससे बचनेकी कोई आशा नहीं है। इस बातको अलीवर्दी बहुत अच्छी तरह समझ गये थे, इससे जितनी अपने जीवन की रक्षाकी चिन्ता नहीं करते थे, उससे अधिक सिराजुद्दौला की चिन्ताने उनको अस्थिर कर दिया था। नवाब मृत्युशय्या पर पड़े पड़े, सदा स्नेहके आधार सिराजुद्दौलाके विषयमें सोचते रहते थे। उसका परिणाम सोच सोच कर, समय समय पर, वह व्याकुल हो उठते थे।

अभी तक नवाबने स्नेहके वश सिराजुद्दौलाको बालक समझ कर कोई उपदेश नहीं दिया था। यदि सिराजने कभी कोई कुकर्म किया भी, तो उसको सुनकर उससे कुछ कहना तो दूर रहा, अपनी आँखोंसे देख लेने पर भी कुछ नहीं कहा था, न कभी निवारण किया था और राज्यका कोई गूढ़ कौशल भी नहीं सिखाया था। उनको विश्वास था कि, सिराजुद्दौला इस समय चञ्चल मति का बालक है। इस समय कोई उपदेश देना अथवा किसी विषयमें निवारण करना वृथा है। वयोवृद्धिके साथ ज्ञान भी बढ़ेगा, तब सब दोष दूर हो जायँगे और उपदेश भी सफल होगा। किन्तु इस समय अपनेको मृत्युशय्या पर पड़े देखकर, अलीवर्दी दौहित्रके लिये बड़े ही व्याकुल हुए और सिराजको सर्वदा ही शय्याके पास बिठा कर उपदेश देने लगे।

अभी तक सिराजुद्दौला समझता था, कि मेरे मातामह

अजर अमर हैं, उनके लिये मृत्यु है ही नहीं, उन्होंने अपने बाहुबलसे मृत्युको जय कर लिया है, यमको हटाकर वह मृत्युञ्जय हो गये हैं। और जब मेरे मातामह अमर हैं, तो फिर सोच किस बातका है? जब तक नानाजी जीवित हैं, तब तक किसकी सामर्थ्य है जो बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाका राज उसके हाथसे लेसके। नानाजी के जीवित रहने तक, राज्य उनके अधिकारमें रहने तक, जो कुछ मनमें आवेगा वही करेगा, सारी उमर आमोद-प्रमोदमें ही काटेगा। नाना-जीके वर्तमान रहने तक किसकी ताक़त है कि उसके आमोद-प्रमोदमें बाधा देवे। किसकी सामर्थ्य है कि उसके आमोद-प्रमोदका प्रतिवादी होवे।

ऐसी भ्रमात्मक धारणा, इस अन्ध-विश्वाससे, सिराजुद्दौला धराको सरा (झरना) समझता था। सभीको तृण समान गिनता था। अहङ्कार और दर्पसे सभी को घृणा की दृष्टि से देखता था। जिससे जो बात न कहनी चाहिये थी, वही कह डालता था। जो न करने का था, वही कर डालता था। परन्तु इस समय उसी मृत्युञ्जय मातामहको मृत्युशय्या पर पड़े देखकर, सिराजुद्दौला का सिर चकरा गया, आशा-भरोसा सभी जाता रहा। अब उसके ज्ञानचक्षु खुले। सिराजु-द्दौलाने देखा कि उसका भविष्य-आकाश गहरे अन्धेरेसे छाया हुआ है।

सिराजुद्दौला भयभीत और व्याकुल होगया। सर्वदा ही

मातामहकी रुग्नशय्याके पास बैठा हुआ, राज्यकी मन्त्रणा, परामर्श और उपदेश ग्रहण करने लगा।

अलीवर्दी जानते थे, कि सिराजुद्दौला बड़ा शराब पीनेवाला है। एक तो मुसल्मानके लिये वैसे ही मद्यपान निषिद्ध है, फिर राजा लोगोंके लिये तो मादक द्रव्य बड़ी ही अनुचित चीज़ है। मनुष्यको नष्ट करनेमें, असत्पथमें डाल देनेमें, ज्ञान-बुद्धि ध्वंस करनेमें, वारुणीसे बढ़कर और कौन वस्तु है? सिराजु-द्दौलाको इसके पीनेसे न रोका सके, तो किसी प्रकार मङ्गल नहीं है। यह समझकर पके केशोंवाले प्रवीण नवाब, सबसे पहिले, दौहित्र को सुरापान से विरत करनेके उद्योगमें लगे।

जो काम बलसे नहीं हो सकता है, वह कौशलसे शीघ्र ही होजाता है। एक समयमें जिस काममें उपयुक्त फल प्राप्त नहीं होता है, दूसरे समयमें उसी कामसे वही फल निकल आता है। इसलिये विज्ञ, बहुदर्शी, विवेचक लोग सहसा किसी कामको न करके समय की प्रतीक्षा करते हैं।

बहुदर्शी विज्ञ नवाब अलीवर्दी अभी तक समयकी प्रतीक्षा कर रहे थे। इस समय उत्तम अवसर समझकर, उन्होंने एक दिन सिराजुद्दौला को अकेले में अपनी शय्याके पास बैठा कर, धीरे धीरे स्नेह-सूचक वाक्योंसे कहने लगे, "सिराज! मुझको काल-व्याधिने घेर लिया है, मुझको इससे बचनेकी आशा नहीं है। मैंने खूब समझ लिया है, कि शीघ्र ही मुझको यह संसार छोड़ना होगा।"

यह सुनते ही सिराजुद्दौला की आँखोंसे आँसू बहने लगे। वह आँसू भरी आँखों और गद्गद स्वरसे बोला, "नानाजी! आप क्यों जीवन की आशासे हताश होते हैं? यह रोग ऐसा कठिन नहीं है, जिससे मुक्तिलाभ की आशा न हो।"

अली—भाई सिराज! यदि मैं तुम्हारी तरह युवक होता, तो मैं आरोग्य होजाने की आशा कर सकता था; किन्तु इस समय मैं बूढ़ा हूँ। इस अवस्था में, कोई उदर-रोगसे पीड़ित होकर किसी प्रकार बच नहीं सकता है। जब कि जन्म ग्रहण किया है तो एक न एक दिन मरना ही है, इसके लिये मैं तनिक भी भीत अथवा चिन्तित नहीं हूँ। यदि चिन्ता है, तो केवल तुम्हारी है। यदि तुम मेरी एक बात, एक अनुरोधकी रक्षा कर सको, तो मैं निश्चिन्त हो सकता हूँ और भविष्यत् में तुम इस बङ्गाल, बिहार और उड़ीसा की मसनद पर आरोहण करके प्रजापालन और राज्यशासन करने में समर्थ होगे कि नहीं, यह भी मैं जान सकूँगा।"

सिराज—ऐसी कौनसी बात है नानाजी?

अली—सिराज! पहिले शपथ खाओ, कि जिस कामके लिये मैं मना करूँ उसको जीवन भर कभी न करूँगा।

सिराज—नानाजी! आज्ञा कीजिये, किसका नाम लेकर शपथ खानी होगी? आप जो कुछ कहेंगे, मैं उसीके करनेको प्रस्तुत हूँ।

अली—सिराज! मुसल्मानके लिये एकमात्र धर्म पुस्तक

और विश्वास की वस्तु कुरान है। क्या तुम उसको छूकर शपथ खा सकोगे?

सिराजुद्दौला कुछ विषाद की हँसी हँसकर बोला, "नानाजी! क्यों नहीं शपथ खा सकूँगा? मैं कुरानको छूकर सौगन्ध खाता हूँ, कि आप जिस कामके लिये निषेध करेंगे, मैं जीवनमें उसे कभी न करूँगा।"

अली—सिराज! खूब समझ-बूझ कर शपथ खाना। ऐसा न हो, कि अन्तमें धर्मपथ से पतित होकर लोगोंके सामने हास्यास्पद बनना पड़े।

सिराज—नानाजी! आप क्यों वृथा सन्देह करते हैं? यदि सिराजुद्दौलाने आपके वंशमें जन्म न लिया होता, तो आप सन्देह कर सकते थे।

अली—सिराज! इस बातका तुम्हारी ओरसे मुझे पूरा विश्वास है।

सिराज—तो कहिये, आपकी प्रीतिके निमित्त मुझे क्या करना होगा।

अली—सिराज! कुरान छूकर शपथ खाओ, कि आजसे जीवन भर मदिराका पीना तो दूर रहा, कभी हाथसे भी न छूऊँगा।

यह सुनकर सिराजुद्दौला दम्भ करके बोला, "नानाजी! इस सामान्य बातके लिये आपको इतनी चिन्ता है? यदि इसको छोड़ देनेसे आप निश्चिन्त हो सकते हैं, तो मैं अपने

इस धर्मग्रन्थ कुरानको छूकर प्रतिज्ञा करता हूँ, कि आजसे जीवनभर मद्यपान करना तो दूर रहा, कभी हाथसे भी न छूऊँगा। यदि कभी स्पर्श करूँ, तो धर्म-विरुद्ध होनेके कारण मैं जन्म-जन्म में भिक्षुक होऊँ।"

सिराजुद्दौला की इस दृढ़ प्रतिज्ञाकी बात सुनकर नवाब अलीवर्दी प्रसन्न होकर बोले, "सिराज! तुम्हारी प्रतिज्ञासे मैं अब निश्चिन्त होकर मर सकूँगा। किन्तु भाई! देखना, आ-जीवन इस शपथको भूलना मत।"

सिराज—नानाजी! सिराजुद्दौला यदि जैनुद्दीनका ही लड़का होगा, तो केवल प्रतिज्ञा ही की बात नहीं है, इस मुख से जो बात एक बार बाहर हो जायगी, जीवनभर उससे अन्यथा नहीं हो सकती है।

अलीवर्दीने सादर सिराजुद्दौलाकी ठोड़ी पकड़ कर कहा, "सिराज! तुमने जैसा आज मुझको सुखी किया है, मैं तुमको आशीर्वाद देता हूँ कि तुम यावज्जीवन सुखसे कालयापन करो और बादशाह होकर दिल्लीके सिंहासन पर बैठो।"

इस बार सिराजुद्दौला बड़े म्लानमुख और दुःखित भावसे बोला, "नानाजी! सिराजुद्दौलाके भाग्यमें यह आशा दुराशा मात्र है। दिल्लीका सिंहासन तो बहुत बड़ी बात है, बङ्गाल विहार और उड़ीसा की मसनद भी मेरे भाग्यमें लिखी हो, इसमें भी सन्देह है।"

अली—सिराज! तुम इस समय मेरे उत्तराधिकारी हो,

तुमको ही जब मैंने युवराज बनाया है, तब सन्देह किस बात का है?

सिराजुद्दौलाने विषाद से कहा, "नानाजी! जब तक आप जीवित हैं, तब तक सिराजुद्दौलाको बङ्गाल, बिहार और उड़ीसा के सिंहासनके सम्बन्धमें कुछ भी आशङ्का नहीं है, किन्तु आपके न रहने पर मसनद की आशा दुराशा मात्र है।"

अलीवर्दी व्यग्रतापूर्वक पूछने लगे, "क्यों सिराज! तुम यह बात क्यों कह रहे हो? और सिंहासनके लिये क्यों निराश होते हो? क्या तुम समझते हो कि मैं उस सिंहासन को तुमको न देकर किसी औरको दे जाऊँगा?"

सिराज—ऐसा भाव तो मेरे चित्तमें कभी भी उदय नहीं हुआ कि, आपने स्नेह और प्रेमसे मेरा लालन-पालन किया है और अन्तमें आप मुझको न देकर मसनद किसी और को देदें।

अली—तो तुम सिंहासनके सम्बन्धमें निराश क्यों होते हो?

सिराज—नानाजी! जब कि आपके सिवाय सिराजुद्दौला का मङ्गलाकाङ्क्षी इस संसारमें और कोई नहीं है, तब मैं किस प्रकार उसकी आशा कर सकता हूँ।

अली—सिराज! तुमने किस तरहसे जाना कि, तुमको सिंहासन नहीं मिलेगा?

सिराज—नानाजी! आपके आशीर्वादसे सिराजुद्दौलाने लोगोंके हृदयोंका हाल जान लेना अच्छी रीतिसे सीखा है।

कौन मनुष्य किस ढँगका, किस प्रकृतिका है, सिराज एक बार ही देखकर उसे पहिचान लेता है। आपके जितने मन्त्री और कर्मचारी लोग हैं, वह सब मेरे विद्वेषी हैं। यद्यपि यह लोग सत्यता, सरलता और प्रभु-भक्ति मुंखसे बखान करते हैं, किन्तु इन लोगोंके हृदय हलाहल से परिपूर्ण हैं। आप रुग्नशय्या पर लेटे हुए हैं, इसीसे आपकी मृत्यु निश्चय मान कर, सभी छिपे छिपे भीषण षड़यन्त्र कर रहे हैं। प्राय: प्रति दिन रातको इस बातकी मन्त्रणा-परामर्श किया करते हैं, कि आपके न रहने पर उस सिंहासनपर कौन बैठेगा? इन लोगोंका चक्र बड़ा भयङ्कर है। जहाँ, ऐसे ऐसे चक्र चल रहे हैं, वहाँ सिंहासन की आशा किस प्रकार की जा सकती है?

अली—इस चक्रका प्रधान नेता कौन हैं? और कहाँ यह सब सलाह-परामर्श हुआ करते हैं?

सिराज—इसका प्रधान नेता राजबल्लभ है, और मोती-झील में परामर्श हुआ करते हैं।

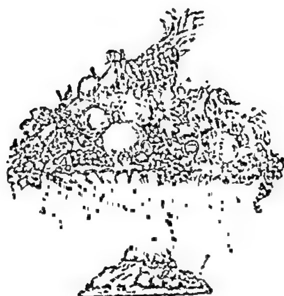
अली—यह लोग किसको सिंहासन पर बैठाना चाहते हैं?

सिराज—चचा नवाजिश मुहम्मदको।

यह सुनकर नवाब अलीवर्दी अतिशय चिन्ताकुल हुए। मन्त्रियों और लोगोंके व्यवहारसे उनको बड़ा कष्ट हुआ। मन ही मन सोचने लगे, "हाय! मनुष्य कैसा स्वार्थपर है।

कैसी भयङ्कर प्रकृति है! यह लोग अपने अपने मतलब के कारण, सौखिक अनुराग और मौखिक सरलता दिखलाते हैं! जबतक हमारा बल, विक्रम, सौभाग्य है तब तक हमारे हैं; किन्तु इन बातोंके न होनेपर सौहार्द-आत्मीयता कुछ नहीं रहेगी। धन्य है मानव-प्रकृति को!

मानव-प्रकृति की चिन्ता करते करते नवाब बड़े मर्माहत हुए। दुःख और क्षोभने उनको म्रियमाण कर दिया। एक तो रोगकी दारुण यातना पहिले ही से थी, तिसके ऊपर स्नेहाधार नैनोंकी पुतली सिराजुद्दौलाका सूखा हुआ मुख देखकर, उसके परिणाम की चिन्ता करके, और भी व्याकुल और अस्थिर होगये। शेषमें, वह आँखें बन्द करके परमेश्वर का स्मरण करने लगे।



अठारहवाँ परिच्छेद।



कण्टक दूर हुआ, शत्रुका नाश हुआ। आशङ्का एक प्रकारसे जाती रही। सिराजुद्दौलाके सिंहासनका प्रतिद्वन्दी और कोई नहीं है। जो एकमात्र प्रतिवादी था, वह शोथ रोगसे इस लोकको परित्याग कर गया। फिर सिरजुद्दौलाको किसकी आशङ्का है?

नवाज़िश मुहम्मद मर गया यह सत्य है, परन्तु सिराजुद्दौलाके प्रधान शत्रु राजा राजवल्लभके जीते रहने तक, वह शत्रुशून्य और निश्चिन्त न रह सका। मातामहकी रुग्नशय्याके पास बैठकर वह सदा ही राजा राजवल्लभके विरुद्ध नाना अभियोग उपस्थित करने लगा।

सिराजुद्दौलाने समझ रक्खा था, कि इस संसारमें यदि उसका कोई शत्रु है और सिंहासनका कण्टक है तो वह राजा राजवल्लभ है और राजा राजवल्लभ भी समझ गया था, कि यदि उसके धन-प्राण, कुल-मान इत्यादिका घोर वैरी कोई है, तो वह सिराजुद्दौला ही है। इस लिये दोनों सदैव

इसी उपायकी खोजमें रहते थे, कि जिसमें एकसे दूसरेको क्षति पहुँचे और दोनों दोनोंको विद्वेषकी आँखसे देखते थे।

जिस दिन नवाज़िश मुहम्मदने इस संसारसे कूँच किया, जिस दिन उसकी मृतदेह मोतीझीलकी मसजिदके चौकमें गाढ़ी गई, उसी दिनसे राजा राजवल्लभने समझ लिया, कि नवाब अलीवर्दीके मरनेपर सिराजुद्दौला अवश्य ही उसके दमन करनेमें प्रवृत्त होगा।

इसलिये राजा राजवल्लभ पहिले ही से सावधान हो गया। यद्यपि वह जानता था, कि अलीवर्दीके बाद सिराजुद्दौला ही बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाके सिंहासन पर बैठेगा, मुर्शिदाबादकी मसनद उसीके सम्पूर्ण अधिकारमें आवेगी, तथापि विद्वेषके वशवर्त्ती होकर, चोरी-चोरीसे ऐसा उद्योग करने लगा, कि जिसमें अलीवर्दीके बाद सिराजुद्दौला मुर्शिदाबादकी मसनद पर न बैठ सके और राज्य और सिंहासन, उसका न होकर, इकरामुद्दौलाके शिशुपुत्रके अधिकारमें आये। वह चारों ओर प्रचार करने लगा, कि नवाब अलीवर्दीके पीछे सिराजुद्दौलाको मसनद पर बैठनेका कोई अधिकार नहीं है, इकरामुद्दौलाका पुत्र ही उसका अधिकारी है, वही इस बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाके सिंहासन पर बैठेगा।

राजा राजवल्लभका यह आशय था, कि इकरामुद्दौलाके बच्चेको मुर्शिदाबादके राज-सिंहासन पर बैठा कर घसीटी

बेगमकी मातहतीमें वह बङ्गाल, विहार और उड़ीसाकी विज़ारत करे।

इस उद्देश्य-सिद्धिके लिये राजा राजवल्लभ छिपे-छिपे मोतीझीलमें फ़ौज जमा करने लगा। जिससे सिराजुद्दौला सिंहासन पर न बैठे, उसी काममें बद्धपरिकार हुआ।

अन्तमें इस काममें क्षतकार्य होंगे कि नहीं, राजा राजवल्लभकी बात कहाँ तक सत्य है, इसको अच्छी तरह समझे बिना ही, लोग उसके पक्षका अवलम्बन करने लगे।

पहिले कहा जा चुका है, कि नवाज़िश मुहम्मद ढाकेका शासनकर्त्ता था; किन्तु शासन-भार उसके हाथमें रहते हुए भी, वह कुछ नहीं करता था और न कुछ देखता ही था। वह प्रायः मुर्शिदाबाद आकर मोतीझीलमें रहा करता था। राजा राजवल्लभ उसका विश्वस्त मन्त्री था। इसलिये ढाके-का शासनभार सब उसीके ऊपर था।

इस समय राजा राजवल्लभने अपनी और घसीटी बेगमकी विपुल धनसम्पत्तिको निरापद करना ही युक्तिसंगत समझा। यद्यपि छिपे-छिपे सिराजुद्दौलाके बदले वह इकरामुद्दौलाके लड़केको राजसिंहासन पर बैठानेके लिये बद्धपरिकर हो गया था; किन्तु परिणाममें जाने क्या होगा, इसलिये अपने मालिकके धनरत्नको निरापद करनेके लिये उसने अपने पुत्र क्षणवल्लभको एक पत्र लिखा। उस पत्रका आशय इस प्रकार है:—

"वत्स कृष्णवल्लभ! क्या देखते हो! अब निश्चिन्त रहना उचित नहीं है। समय रहते ही सावधान हो जाओ! जो कुछ धनरत्न है, उसको निरापद करना ही बहुत आवश्यक है। नवाब अलीवर्दी अब अधिक नहीं जियेंगे, उनकी आयु अब पूरी हो गई है। वह बहुत शीघ्र इस लोकसे विदा हो जायँगे। नवाबके पीछे सिंहासनपर बैठनेकी सम्भावना सिराजुद्दौलाकी ही है; परन्तु मैं ऐसी चेष्टा करता हूँ, कि इकरामुद्दौलाका शिशुपुत्र सिंहासनपर बैठे। फिर भी; मैं यह नहीं कह सकता हूँ, कि इस काममें कहाँ तक कृतकार्य्य होऊँगा। अतएव समय रहते सावधान हो जाओ, सब धन-रत्न और परिवारको लेकर शीघ्र कलकत्ते चले जाओ। वहाँके लिये मैं ऐसा बन्दोबस्त कर देता हूँ, कि जिससे ईष्ट इण्डिया कम्पनीके आश्रयमें निरापद रह सको। अँगरेज़ सौदागरोंके साथ हमारा विशेष सौहार्द है। अँगरेज़ सौदागरोंके आश्रय में रहनेसे आशङ्काका कोई कारण नहीं है। अतएव तुम और देर न करके शीघ्र कलकत्ते चले जाओ। जानेका हाल किसी पर विदित न होने पावे। ईस्ट इण्डिया कम्पनी शरणा-गतको विमुख करनेवाली नहीं है।"

पुत्रको यह पत्र लिखकर राजवल्लभ निश्चिन्त हो गया हो, ऐसा नहीं है। वह, कम्पनीकी कासिमबाज़ारकी कोठीके अध्यक्ष, वाट्स साहबसे मिला, कि जिससे कृष्णवल्लभको कल-कत्तेमें ईस्ट इण्डिया कम्पनीके यहाँ आश्रय मिल जावे।

वाट्स साहब राजा राजवल्लभको अपनी कोठीमें आते देखकर कुछ शर्मा गये। बड़ी ख़ातिरसे उनको लिया और आनेका कारण पूछा।

राजवल्लभ बड़ा चतुर मनुष्य था। बोला, "आपसे मिलनेको आया हूँ।"

यह सुनकर वाट्स साहब बड़े प्रसन्न होकर बोले, "आपकी मेरे ऊपर जो इतनी अधिक क्षपा है, इस आपकी उदारताके लिये मैं अतिशय ऋणी हूँ।"

राजवल्लभ—आपसे मिलनेकी सदैव ही इच्छा रहती है, परन्तु कामकी अधिकतासे इतना समय नहीं मिलता है कि आपसे मिल सकूँ। विशेष करके जब तक इकरामुद्दौलाके पुत्रको मुर्शिदाबादके सिंहासन पर न बैठा लूँ, तब तक किसी तरह निश्चिन्त न हो सकूँगा।

वाट्स—डाक्टर फोर्थके कहनेसे मालूम होता है, कि नवाब अब अधिक जीवित नहीं रह सकते हैं।

राजवल्लभ—जब हकीमोंने हार मान ली है, नवाब भी जीवनकी आशासे हताश हो चुके हैं, और रोग भी क्रमशः बढ़ता ही जाता है, तब यही ज्ञात होता है, कि शीघ्र ही वह परलोक सिधारेंगे।

वाट्स—नवाबकी मृत्युके पीछे ही ऐसी सम्भावना है, कि युद्ध छिड़ जाय।

राजवल्लभ—हाँ, यह बहुत सम्भव है। सिराजुद्दौला सहज-

में सिंहासनकी आशा नहीं छोड़ेगा, इसलिये अवश्य युद्ध होगा।

वाट्स—यदि युद्ध होवे, तो क्या आप उसके लिये तय्यार हैं?

राजवल्लभ—एक तरह से तो तय्यार हूँ। परन्तु नवाब अलीवर्दीके जीवनकाल पर्य्यन्त तो इसकी आवश्यकता नहीं है।

वाट्स—हां, यह तो कर्त्तव्य ही है; नहीं तो नवावके विरुद्ध अस्त्र-धारण करना होगा!

राजवल्लभ—मैं तो यही सोचकर चुपचाप वैठा हूँ, किन्तु मेरा उद्देश्य यही है कि ससनद सिराजुद्दौलाको न मिले; क्योंकि वह बड़ा अन्याचारी है और मैं तो इकरामुद्दौलाके पुत्रको मसनदपर बैठाना चाहता हूँ। उसके लिये मैं कोई चेष्टा, कोई यत्न, उठा भी न रक्खूँगा।

वाट्स—सुना है, नवाब अलीवर्दीने सिराजुद्दौलाको अपना भावी उत्तराधीकारी स्थिर किया है।

राजवल्लभ—नवाबकी इच्छा है, कि सिराजुद्दौला बङ्गाल, विहार और उड़ीसाके सिंहासनपर बैठे; परन्तु सिराजुद्दौला सा स्वेच्छाचारी दुर्वृत्त यदि सत्य ही सिंहासनपर बैठे, तो अत्याचारकी सीमा न रहेगी। उसकी बरावर नृशंस और नहीं हैं। उस दिन अनायास, विना दोषके, उसने हुसेनकुली खाँ को मार डाला! सिराजुद्दौलाके सिंहासनपर बैठनेसे पहिले ही, लोग धन-प्राण, कुल-मानकी रक्षा की फ़िक्रमें पड़

गये हैं ! फिर सोच तो देखिये, कि यदि वह बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाके सिंहासन पर बैठ जायगा, तो लोगोंकी क्या अवस्था होगी ! मालूम होता है, कि फिर किसीको धन-सम्पत्ति और स्त्री-पुत्रोंको लेकर घरमें रहना भी नसीब न होगा। जिसके नामसे लोग इस समय सशंक हैं, उसके नवाब हो जानेपर किस प्रकार रक्षा होगी ? आजकल सिराजके भयसे मुझको भी बहुत सावधान रहना पड़ता है।

वाट्स साहब कुछ विस्मित होकर बोले—"क्या कहा ! सिराजके भयसे आपको भी सतर्क रहना होता है ?"

राजवल्लभ—हाँ, सिराजुद्दौलाके भयसे मुझे बड़ा उद्विग्न रहना पड़ता है। उसका कुछ भी ठिकाना नहीं है, कि कब किसको प्राणोंसे मार डाले, कब किसकी धन-सम्पत्ति छीन ले, कब किसका कुल-मान बिगाड़ डाले। मुझको इन सब शङ्काओंके कारण ढाका छोड़ना पड़ता है। अपनी और घसीटी बेगमकी धन-सम्पत्ति और परिवारकी रक्षाका भार, मैं आपके सिपुर्द करना चाहता हूँ। इस समय आप लोग हमको सिराजुद्दौलाके हाथसे रक्षित रखिये।

राजा राजवल्लभकी यह बात वाट्स साहबको हँसी की सी ज्ञात हुई। कहा, "मैं कुछ स्थिर नहीं कर सकता हूँ, कि आप कहाँ तक सत्य कह रहे हैं। आप हमलोगोंकी सहायता लेंगे, यह बात कुछ असम्भव सी ज्ञात होती है।"

राजवल्लभ—मैं आपसे हँसी नहीं करता हूँ। सत्य कहता हूँ, कि जब तक नवाबकी मृत्यु नहीं होती है, जब तक और कोई सिंहासन पर नहीं बैठता है, तब तक तो मुझको आपका आश्रय लेना ही होगा। धन-सम्पत्ति और परिवारको लेकर कलकत्ते जानेके लिये, मैंने अपने पुत्र कृष्णवल्लभको लिख दिया है। आपका आश्रय पाकर मैं निश्चिन्त हो जाऊँगा, और आपका इतना अनुगृहीत होऊँगा, जिसका पार नहीं है।

वाट्स साहब बोले,—"यदि वास्तवमें ही आपको हमारा आश्रय लेना है, और हमारी सहायतासे आपका कुछ उपकार हो जाय, तो हम उसके करनेको प्रस्तुत हैं। यदि आपकी सहायता करनेमें प्राण भी देने पड़ें, तो हम वह भी कर सकते हैं।"

राजवल्लभ—आपसे मुझको सहायता मिलेगी, यह मुझको पूरा विश्वास था, तभी मैं आपके पास आया हूँ। आपका यह उपकार, मैं जीवनभर न भूलूँगा।

वाट्स—मैंने आपके पुत्र और परिवारको कलकत्तेमें आश्रय देनेको कहा और स्वीकार किया है; परन्तु नवाब और सिराजुद्दौला अप्रसन्न होंगे ही। अभी, उस दिन झूठा दोष लगाकर उन्होंने १२ लाख रुपये हमलोगोंसे दण्डस्वरूप लिये हैं, और जब आपका हमारे यहाँ रहना सुनेंगे तो अवश्य ही अप्रसन्न होंगे, परन्तु हम लोग इसकी चिन्ता नहीं करते।

राजवल्लभ—यह बात किसी तरह प्रकाशित न होगी। आप

हमारा इतना उपकार करें ; और हम इस बातको प्रकाशित करके आपको विपदमें डालें, यह कभी सम्भव है ?"

वाट्स--आप निश्चिन्त रहिये। परन्तु मैं आश्रय देनेको बुरा नहीं समझता हूँ और डरता भी नहीं हूँ। आपका पुत्र और परिवार कलकत्ते पहुँचकर वहाँ आश्रय पावे, ऐसा बन्दोबस्त मैं किये देता हूँ।

राजवल्लभ—मैं जानता हूँ, आप जो कहते हैं वही करेंगे। आप लोग जिस तरह प्राण तक देकर अपनी बातका प्रतिपालन करते हैं, ऐसा और किसी जातिमें नहीं है। आप लोगोंका मुझे इतना विश्वास है, तभी मैं सहायता पानेकी आशासे आपके पास आया हूँ। ऐसे सत्यनिष्ठ, उद्यमशील, अध्यवसायी न होते ; तो क्या कभी आप लोग स्वदेशकी माया-ममता छोड़ कर, आत्मीय स्वजनोंके स्नेहपाश को तोड़कर, सात समुद्र तेरह नदी पार करके, इतनी दूर विदेशमें आकर वाणिज्य कर सकते ? आप लोगोंके चित्तमें स्थिरता है, कर्त्तव्यकी दृढ़ता है, बातमें भी सत्यता है।

वाट्स साहब स्वजातिकी ख्याति सुनकर गदगद हो गये और बोले, "हर एक को हर एक की सहायता करना, मनुष्य मात्रका कर्त्तव्य है। आपको इसके लिये अधिक कहनेकी आवश्यकता न होगी। आपके पुत्र और परिवारको जिस तरहसे वहाँ आराम मिले, उसके लिये विशेष अनुरोधसे चिट्ठी लिखकर अभी कलकत्ते भेजता हूँ।"

राजवल्लभ—तो अब मैं विदा होता हूँ।

"हाँ, कहकर वाट्स साहबने हाथ मिलाकर राजा राजवल्लभ को विदा किया।

राजवल्लभ चले गये। वाट्स साहब सब काम छोड़कर कलकत्तेको पत्र लिखने बैठे। पत्र इस प्रकार है:—

"आज घसीटी बेगमके मन्त्री राजा राजवल्लभ कासिमबाज़ार की कोठीमें आये थे। उन्होंने विशेष अनुरोध किया है, कि उनके परिवारको और पुत्र कृष्णवल्लभको हमारी कलकत्ते की कोठीमें आश्रय देना होगा। मैं उनके अनुरोधसे आश्रय देनेमें सम्मत हो गया हूँ। आप इसमें किसी प्रकारसे आनाकानी न कीजियेगा। राजवल्लभ इस समय नवाज़िश मुहम्मदकी घसीटी बेगमका विश्वस्त मन्त्री है। नवाब अलीवर्दीके अधिक जीनेकी अब आशा नहीं है। वह शीघ्र ही यह लोक परित्याग करेंगे। नवाबके न रहने पर घसीटी बेगमके गोद लिये हुए पुत्र, इकरामुद्दौला के पुत्र, को ही सिंहासन पर बैठनेकी पूरी सम्भावना है। राजवल्लभ हो सिराजुद्दौलाके सिंहासन पर बैठनेका घोरतर विरोधी है। राजवल्लभके रहते ऐसा विश्वास नहीं है, कि सिराजुद्दौला सहजमें बङ्गाल, विहार और उड़ीसाके सिंहासन पर बैठे। अतएव, ऐसी अवस्थामें, राजवल्लभके साथ उपकार करना अच्छा ही होगा। हमारे अनुरोधसे राजवल्लभके परिवार और उनके पुत्र कृष्णवल्लभ को कलकत्तेमें स्थान देना चाहिये।

कासिमबाज़ार। } आपका—
वाट्स।"

वाट्स साहबने यह पत्र लिखकर कलकत्ते भेज दिया।

यथासमय वाट्स साहबका अनुरोध-पत्र कलकत्ते पहुँचा। परन्तु ईस्ट इण्डिया कम्पनीके कर्त्ता, गवर्नर ड्रेक साहब, उस समय कलकत्तेमें नहीं थे; वायु-परिवर्त्तनके लिये बालेश्वर बन्दरमें गये हुए थे। गवर्नर ड्रेक साहबके उपस्थित न होने पर भी, वाट्स साहबका अनुरोध-पत्र प्राप्त होने पर, उस कामको पूरा करनेके लिये, वहाँ जो कुछ अँगरेज़ थे, उन्होंने एक छोटी सी सभा की। इस सभामें, जानबुल, मेनिंहाम, इत्यादि कलकत्तेके प्रधान-प्रधान अँगरेज़ जमा हुए और बहुत मन्त्रणा परामर्शके पीछे राजवल्लभके पुत्र और परिवारको आश्रय देनेमें सम्मत हो गये।

इधर राजा राजवल्लभका पत्र भी यथासमय, ढाकामें, कृष्ण-वल्लभके पास पहुँचा। कृष्णवल्लभ, पिताके आदेश-पत्रको पाकर, कलकत्ता जानेके लिये तय्यारी करने लगा। पीछे उसके जानेका सम्वाद खुल जाय, और यह समाचार सिरा-जुद्दौलाके कानों पड़ जाय, इसलिये उसने चारों ओर प्रचार कर दिया, कि वह सपरिवार पुरुषोत्तम श्रीमहाप्रभु जगन्नाथके दर्शनको जायगा। जगन्नाथ ही कलिकालमें जाग्रत देवता हैं। जो एक बार उनके दर्शन करे, उसको कुछ भी भव यन्त्रणा नहीं रहती है, फिर उसको इस नश्वर जगत्‌में नहीं आना पड़ता है।

चारों ओर उसने यही प्रचार कर दिया; किन्तु वास्तव

में उसका यह उद्देश्य था कि ढाकाके राज-भाण्डारकी विपुल सम्पत्तिको किसी प्रकार सिराजके हाथसे बचाकर कलकत्ते ले जाय।

कृष्णवल्लभने, बड़ी सावधानीसे राज-भाण्डारकी सब धन सम्पत्ति अपने साथ लेकर, रातके समय ढाका छोड़ दिया और परिवारके साथ कलकत्ते निरापद पहुँच गया। पहुँचते ही, कलकत्तेके अँगरेज़ोंने बड़े आदरके साथ दुर्गमें उसे आश्रय दिया। यह सम्वाद पाकर कि धन-सम्पत्ति अब रक्षित ठौर पहुँच गयी, राजवल्लभ निश्चिन्त हो गया।

किन्तु यह बात छिपी न रही। कृष्णवल्लभके भागनेकी बात सिराजुद्दौलाके कानों तक पहुँची। उसने जिस समय सुना, कि राजवल्लभके पुत्र कृष्णवल्लभने ढाकाके राज-भाण्डारका धन-रत्न जो कुछ था, सब लेकर सपरिवार कलकत्तेमें अँगरेज़ों के दुर्गमें आश्रय लिया है, तो वह जिस तरह, शिकार भाग जाने पर व्याघ्रकी दशा होती है उस तरह, रोष-क्षोभमें आप ही आप तर्जन-गर्जन करने लगा।

अन्तमें उसने राजवल्लभकी इस कार्य्यवाही को धूर्त्तता और अँगरेज़ोंकी इस कृपाको अवाध्यता बताकर, मातामहसे चुगली खाई।

उन्नीसवाँ परिच्छेद ।

दिन पर दिन बङ्गाल, विहार और उड़ीसाके प्रजा-हितैषी नवाब अलीवर्दीके जीवनकी आशा घटने लगी। उन्होंने निश्चय जान लिया, कि जिस खल व्याधिने उनको घेरा है, उसके कराल कवलसे किसी तरह छुटकारा नहीं मिलेगा। एक तो बूढ़ी वयस, तिस पर उदर-रोग। अलीवर्दी, जीवनकी आशासे निराश होकर, परमेश्वरके चरणोंमें शरणागत हुए।

नवाब अलीवर्दी को मृत्यु-शय्या पर पड़े देखकर, और उनकी मौतको आयी हुई समझ कर, सभी लोग इस समय चारों ओरसे अपने अपने उद्देश्य-साधन और अपने अपने भविष्यत्‌के सुभीतेके काम करने लगे। कोई नवाबसे कुछ न पूछता, कोई उनकी अनुमति की राह न देखता। जिसका जो प्रयोजन होता, अपनी इच्छासे ही वह उसको कर लेता। नाना प्रकारकी अराजकता चारों ओर फैल गई।

मातामहकी रोग-शय्याके पास बैठकर सब बातें, सब सम्वाद, सिराज उनको सुनाता। मरणप्राय नवाब दौहित्रके मुँहसे राज्यके सब समाचार सुनकर बड़े व्याकुल होते और

दौहित्रके भविष्य-भाग्य-आकाशको घोर अँधेरेमें ढका हुआ देखते थे। किन्तु इस समय उपाय क्या है? उठनेकी शक्ति तो अब रही नहीं, किस प्रकार तलवार हाथमें लेकर शत्रु-दमनके लिये बाहर निकलें, किस प्रकार रणस्थलमें शत्रुके पीछे दौड़ें! इस समय तो वह परवश हो रहे हैं, मानों लोहेकी जञ्जीरमें बँधे हुए हैं। किस प्रकार दौहित्रकी भविष्य-उन्नतिके पथमें से काँटे निकाल फेंकें? उन्होंने सिराजुद्दौलाको शत्रु-दमनके कौशल, राजत्वके गूढ़ तत्त्व सिखानेकी इच्छा की।

यह किसी दरिद्र मनुष्यकी बीमारी तो थी ही नहीं, कि उसके देखनेको कौन आता, उसके पास जाकर कौन बैठता। स्वयं बङ्गाल,विहार और उड़ीसाके नवाब अलीवर्दी बीमार हैं! इस कारण राजा, महाराजा, ज़मीन्दार, उमराव और राज्यके प्रधान-प्रधान प्रतिष्ठित लोग, अपने ऊपर अनुग्रहकी आशासे, सदैव उनके पास रहकर, तरह तरहकी सेवा-शुश्रूषा करके, उनका चित्त प्रसन्न करनेमें लगे रहते थे। सभीको अनुग्रहकी आशा थी। नवाबका घर सदैव लोगोंसे भरा रहता था। इससे नवाब दौहित्रको राजत्वकी गूढ़ नीति सिखानेका अवसर नहीं पाते थे, अवसरका अन्वेषण अवश्य किया करते थे, किन्तु दिन-रातमें एक बार भी कभी अकेले न रहने पाते थे।

सन्ध्या हुए थोड़ी देर हुई है। तारे चमकने लगे हैं। निशानाथ बड़ी क्षीणज्योतिसे पश्चिम-आकाशमें उदय हुए हैं। एक तो मधुर वसन्तकाल है, तिस पर सन्ध्याकी मलयानिल

मृदु मन्द गतिसे चल रही है। लोग उद्यानोंमें, रास्तों पर, और गङ्गातीर पर, घूमनेको बाहर निकले हैं।

नवाब अलीवर्दी आज निर्जन घर पाकर, सिराजको अपने पास बैठाकर, धीरे धीरे कहने लगे,—"भाई सिराज! चित्त देकर मेरी दो एक बातों को सुनो। मैं देखता हूँ, तुम्हारे चारों ओर शत्रु इकट्ठे हो रहे हैं। सभी तुम्हें हरा देनेकी इच्छा रखते हैं। किसी की भी इच्छा नहीं है, कि तुम मुर्शिदाबादकी मसनद पर बैठो। यद्यपि मैं तुमको अपना उत्तराधिकारी जानता हूँ, यद्यपि मुर्शिदाबादकी यह मसनद तुम्हारी ही कहकर मैंने तुमको युवराज बनाया है; परन्तु साधारण प्रजा तुमको राजा बनाना नहीं चाहती है। ऐसी अवस्थामें, मेरे न रहने पर, तुम क्योंकर राज्य-रक्षामें समर्थ होगे? सिराज! इस समय मैं अपने लिये कुछ भी नहीं सोचता हूँ, केवल तुम्हारे ही सोचसे मैं अस्थिर हो रहा हूँ। इस समय क्या उपाय किया जाय, क्या करनेसे तुम मेरे न रहने पर निरापद होकर सिंहासन-रक्षामें समर्थ होगे, दिन रात सोचने पर भी इसका कोई उपाय स्थिर नहीं कर सका हूँ। सिराज! सिराज! मुझको बड़ी आशा थी, कि मेरे न रहने पर, मेरे सिंहासन पर बैठकर तुम मेरा नाम रक्खोगे। बोलो सिराज! क्या तुम मेरा नाम रख सकोगे?"

सिराजुद्दौलाने अति दुःखित भावसे कहा, "नानाजी! आपकी कृपासे यदि एक बार सिंहासन पर बैठ पाऊँ; तो मैं

जानता हूँ कि हज़ार प्रतियोगी आने पर भी, सिराजद्दौलाके हाथसे राज्य न ले सकेंगे।"

यह सुनकर नवाब कुछ मुस्कराकर बोले, "सिराज! तुम बालक हो! तभी ऐसी बात कह रहे हो! विषय-वैभव बहुत लोग पार सकते हैं, किन्तु उसकी रक्षा करना बड़ा कठिन है। जो धन-सम्पत्तिकी रक्षा कर सकता है, वही क्षमताशील पुरुष है! चारों ओर शत्रुओंको देखकर तुम सिंहासन पर नहीं बैठ सकोगे, ऐसा तुम समझ रहे हो; परन्तु मैं स्पष्ट रूपसे देख रहा हूँ, कि इस विषयमें तुमको कोई बाधा नहीं दे सकेगा। तुम निश्चय वङ्गाल, बिहार और उड़ीसाके सिंहासन पर बैठोगे; किन्तु सिराज मैं देखता हूँ कि सिंहासनकी रक्षा करना तुम्हारे लिये बड़ा कठिन होगा! तुम कभी सिंहासन की रक्षा न कर पाओगे। मैं अच्छी तरह समझाता हूँ, कि अँगरेज़ सौदागरोंसे तुम मेल नहीं रखते हो, इस कारण उन्हीं के हाथसे सबसे बड़ा अनिष्ट तुम्हारा होगा।"

सिराज—नानाजी! यदि आपने ऐसा सोचा है, कि अन्त में अँगरेज़ोंके हाथसे ही मुसल्मान राज्य नाशको प्राप्त होगा, तो समय रहते उनका प्रतीकार क्यों नहीं किया?

अली०—प्रतीकार न करनेके कई कारण थे। उस समय क्या मुझे यह मालूम था, कि मुझको इतनी शीघ्रतासे इस संसारसे कूँच करना होगा। यदि आगे मुझे मालूम होता कि मरहट्टोंके दमन करने बाद, मुझे तलवार हाथमें

लेनेका अवसर प्राप्त नहीं होगा, यदि पहिले मैं यह जान पाता कि, यह काल-व्याधि इतनी शीघ्रतासे मुझ पर आक्रमण करेगी, तो अँगरेज़ सौदागरोंको दमन करनेसे पहिले मैं मरहट्टोंके दमनमें कभी प्रवृत्त न होता।* हाय! मैं जीवन-भर वृथा लड़ाइयोंमें लगा रहा। मतलबका काम कुछ नहीं किया। सिराज! मेरी बड़ी इच्छा थी, कि मैं तब इस संसारसे जाता जब, तुम्हारे सिंहासनका कोई शत्रु न रह जाता। परन्तु हाय, मेरी सब आशायें विफल हुई!

सिराज—नानाजी! आपने इतने दिनों बाद अँगरेज़ सौदागरोंको पहिचाना है, इसके लिये मैं इस समय दुःखी होनेपर भी सुखी हुआ हूँ। किन्तु मालूम होता है, कि पहिले आपने इन लोगोंको पहिचाना नहीं।

अली०—मैं उनको अच्छी तरह जानता हूँ। जिसके साथ तुम बुरा व्यवहार करोगे, वह तुम्हारे साथ अच्छा वर्त्ताव नहीं कर सकता है। वह वास्तवमें बुरे नहीं हैं, तुमने ही

---

* ईश्वर को तो यही मंजूर था, कि भारत मुसल्मानोंके और अत्याचारोंसे रक्षा पावे; भारतके धन-धान्य और प्रजाकी रक्षा होवे; सर्वत्र शान्तिका अटल राज्य हो; देशमें विद्याका प्रचार हो; कलाकौशल की उन्नति हो, इसी से ईश्वरेच्छा के विरुद्ध नवाब अँगरेजों के विरुद्ध लड़े होनेके पहले ही परमधाम को सिधार गये और पीछे दुष्ट अत्याचारी सिराजुद्दौला सिंहासनच्युत होकर मारा गया। प्रकाशक।

उनको छेड़-छेड़ कर अपना वैरी बना लिया है। और यद्यपि मैं जान चुका था, कि अँगरेज़ सौदागर हमारे शत्रु हैं, परन्तु वह लोग साधारण प्रजाके शत्रु तो थे ही नहीं, और मरहटे राजा-प्रजा सभीके शत्रु हो रहे थे ; इस लिये पहिले अँगरेज़ोंको दमन करनेकी आवश्यकता नहीं थी। सिराज! उस समय यदि मैं मरहटोंको दमन न करके अँगरेज़ सौदागरोंके दमन करनेमें प्रवृत्त होता, तो वह अवश्य ही मरहटोंसे मिल जाते। इसी कारण मैंने जान सुनकर भी उनके दबानेकी चेष्टा नहीं की। इस समय कालव्याधिने मुझपर आक्रमण किया है, इच्छा करनेपर भी अब मुझमें सामर्थ्य नहीं है, कि उनको दमन कर सकूँ। यदि तुम अपने सिंहासनको शत्रु-शून्य करना चाहो, तो मेरी बात सुनो। सिंहासन पर बैठकर तुम अँगरेज़ सौदागरोंसे विद्वेषभाव बिलकुल मत रखना। अँगरेज़ तुम्हारे सिंहासनके प्रधान शत्रु हैं, परन्तु यदि तुम बनाया चाहो तो वही तुम्हारे परम मित्र हो सकते हैं।

सिराजुद्दौलाने विषादपूर्ण वाक्योंमें कहा, "नानाजी! केवल अँगरेज़ ही क्यों, और भी बहुतसे मेरे विपक्षी हैं।"

अली—क्यों सिराज! तुम्हारे सिंहासनका प्रधान शत्रु नवाज़िश मुहम्मद था, वह तो इस लोकको छोड़ गया है। हुसैनकुली खाँ भी तुम्हारी तलवारके आघातसे मृत्यु पा चुका है! तुम्हारा छोटा भाई इकरामुद्दौला भी जीवित नहीं है।

तब फिर तुम्हारे सिंहासनका प्रतिद्वन्दी सिवाय अँगरेज़ोंके और कौन है ?

सिराज—राजा राजवल्लभ ही मेरे सिंहासनका प्रधान शत्रु है !

अली०—राजा राजवल्लभ तुम्हारे सिंहासनका प्रतिवादी क्यों है ? उसका अभिप्राय क्या है ?

सिराज—राजा राजवल्लभ एकरामुद्दौलाके शिशुपुत्र मुराद्दौलाको बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाकी मसनदपर बिठाकर, घसीटी बेगमके नामसे आप राज्य-शासन करना चाहता है।

अली०—घसीटीकी क्या इच्छा है ?

सिराज—उसकी यही इच्छा है कि मैं सिंहासन पर न बैठ सकूँ। वह मेरे सिंहासन पर बैठनेमें बाधा डालनेको बद्ध-परिकर है, और यहाँ तक कि राजा राजवल्लभ की सलाह से छिपे-छिपे सेना भी जमा कर रही है।

अली०—राजवल्लभ क्या तुम्हारा इतना बड़ा शत्रु है, कि तुम्हारे विरुद्ध सेना संग्रह करेगा ?

सिराज—जगत्में यदि कोई मेरा शत्रु हो सकता है, तो वह राजवल्लभ है। यदि किसीके द्वारा मेरे अनिष्टकी सम्भावना है, तो वह राजा राजवल्लभ ही है। सैकड़ों कुमन्त्रणाओं का मूल राजवल्लभ है। मेरे सिंहासनपर बैठनेमें बाधा डालनेके लिये वह पहिले ही से सब बन्दोबस्त कर रहा है, और पीछेसे अपने काममें अकृतकार्य्य होकर

मेरे कोपमें पड़कर अपने धनरत्नसे वञ्चित हो जाय, इस भयसे ढाकाके राज-भण्डारकी सब सम्पत्ति चुराकर अपने पुत्र और परिवारके साथ कलकत्तेमें अँगरेज़ोंके किलेमें भेज दी है। वहाँ के अँगरेज़ोंने कृष्णवल्लभको बड़े यत्नके साथ आश्रय दिया है।

अली०—किस आशासे उन्होंने राजवल्लभको आश्रय दिया है?

सिराज—उन्होंने समझ लिया है, कि नवाव तो अब बचेंगे नहीं! और उनके न रहनेपर, जब राजवल्लभ मुरादुद्दौलाको मुर्शिदावादकी मसनदपर बैठा लेगा, तो ऐसी अवस्थामें राजवल्लभके मनकी करनेसे भविष्यत्‌में उनके व्यवसाय-वाणिज्य में सुभीता होगा।

अली०—अँगरेज़ोंने क्या समझकर यह स्थिर कर लिया है, कि मुरादुद्दौला ही वङ्गाल, बिहार और उड़ीसाके सिंहासन-पर बैठेगा?

सिराज—धूर्त्त राजवल्लभने जैसा समझाया है वैसा ही उन लोगोंने समझा है, उसी तरह पर स्थिर किया है। इसके अतिरिक्त उन्होंने केवल कृष्णवल्लभको आश्रय ही नहीं दिया है, वरं उन्होंने ऐसा बन्दोबस्त आरम्भ किया है जिससे उनका दुर्ग दृढ़ हो जावे।

अलीवर्दीने विस्मयसे पूछा, "सिराज बतलाओ तो! क्या अँगरेज़ सौदागर इतने अबाध्य हो गये हैं, कि मेरे जीते

रहनेपर भी मुझसे कोई बात न पूछकर कलकत्तेमें दुर्ग बनवा रहे हैं ?"

सिराज—अँगरेज़ोंने समझ लिया है, कि नवाबको तो अब उठनेकी क्षमता नहीं है, बचनेकी भी आशा नहीं है, और मैं भी इस अवस्थामें युद्धमें प्रवृत्त नहीं हो सकता हूँ, इसी कारण इस सुयोगमें जहाँ तक हो सके अपने बलको दृढ़ कर रहे हैं।

अली०—हाय ! मेरा इतना यत्न, इतनी चेष्टा, इतना परिश्रम, सभी वृथा हुआ ! जिस आशासे मुग्ध होकर कष्टको कष्ट नहीं समझा, रणके श्रमसे कातर न होकर दिन रात केवल युद्ध करके मरा, क्या वह सब श्रम वृथा गया। हाय सिराज ! जिस आशासे हृदय कड़ा करके मैंने इतना किया, वह आशा सफल नहीं हुई, तुम्हारे सिंहासनके शत्रुओंको निर्मूल न कर सका ! उम्र भर केवल अशान्ति ही सञ्चय कर सका। परन्तु मैं फिर यही कहता हूँ, कि तुम अँगरेज़ोंसे मिलकर चलोगे तो तुम्हारे अनिष्टकी बहुत कम सम्भावना है।

एक तो नवाबको रोगकी असह्य यातना थी, तिसके ऊपर शरीरमें तनिक भी सामर्थ्य न थी; इससे इन सब जटिल विषयोंकी आलोचना उनको इस अवस्थामें विशेष कष्टकर हुई। यदि और किसी की बात होती तो कदापि उसको न सुनते, उसका उत्तर भी न देते ; परन्तु यह तो उनके स्नेहकी पुतली, सिराजकी भाग्य-लिपिकी बात थी, इसी कारण बड़े कष्टसे

स्थिर होकर, निर्बल शरीरको मनके बलसे बलिष्ट करके, इतनी बातें सुनीं और कहीं। उन्होंने देखा कि, सिराजके भविष्य-भाग्य-आकाशमें वर्षाकालकी अँधेरी रातसे भी अधिक अँधेरा हो रहा है। इससे उनको बड़ी घोर चिन्ता और उसके साथ ही नई यन्त्रणा उपस्थित हुई। उनका सिर चकरा गया, आँखोंके आगे चारों ओर अन्धकार दिखाई देने लगा। वह और कुछ न सोच सके और कुछ न पूछ सके। केवल इतना ही कहा; "सिराज! जल, जल, बड़ी प्यास है!"

सिराजुद्दौलाने सोनेके पात्रमें गुलाबमिश्रित शीतल जल लाकर दिया, पीकर नवाबकी प्यास बुझी। परन्तु और कोई बात उन्होंने नहीं पूछी। सिराजुद्दौला भी मातामहकी अवस्था देखकर और कोई प्रसङ्ग न छेड़ सका। उस दिन यहीं तक बातचीत हुई।

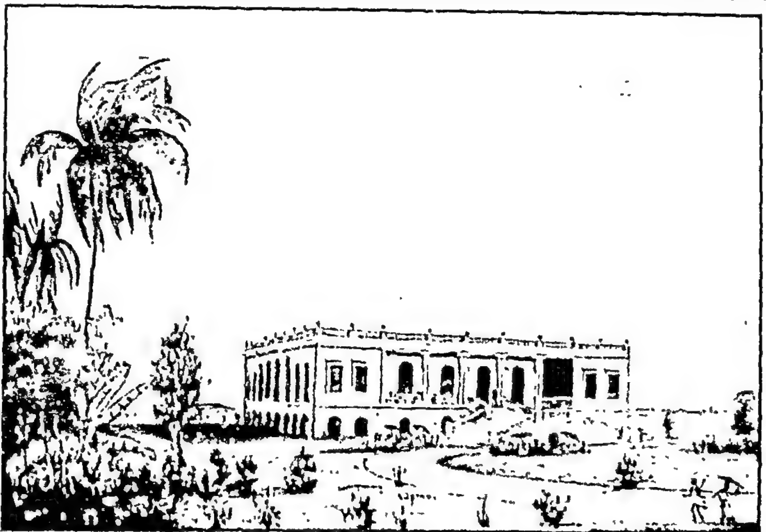


बीसवाँ परिच्छेद।

फो र्थ साहब एक डाक्तार थे। कासिमबाज़ारमें उनका एक औषधालय था। विलायतसे यह अपना चिकित्सा-व्यवसाय करनेको आये थे। नवाब-सरकारमें अपनी नामवरी फैलानेके लिये कासिमबाज़ारमें एक कोठी ले ली थी।

जिस समयकी बात मैं कहता हूँ, उस समय डाक्टर लोगोंकी कुछ ख्याति नहीं थी। लोग रोगी होनेपर डाक्टरको नहीं बुलाते थे और न डाक्टरी औषधिमें विश्वास ही करते थे। वैद्योंके ऊपर विश्वास था। रोग होनेपर लोग वैद्योंको बुलाते थे, उनको खिलाते पिलाते थे। जाति चले जानेके भयसे, धर्मनाशकी आशङ्कासे, लोगोंको मरजाना स्वीकार था; परन्तु सुरामिश्रित दवा खाना अथवा खिलाना स्वीकार नहीं था।

साधारण लोगोंमें डाक्टरोंका चलन न होनेसे, डाक्टर फोर्थकी ख्याति भी अधिक नहीं थी। केवल नवाब-सरकारमें कुछ कुछ जान-पहचान और आना-जाना था।



क़ासिमबाज़ार की पुरानी कोठी ।

HARSINGH PRESS CALCUTTA

डाक्टर फ़ोर्थ केवल डाक्टरी ही पर निर्भर नहीं थे। वह ईस्ट इण्डिया कम्पनीके एक कर्मचारी थे। वाणिज्य-सम्बन्धमें कम्पनीका प्रायः सभी काम देखते-भालते थे।

नवाब-सरकारमें डाक्टर फ़ोर्थकी जान पहचान होनेके कारण, वह कभी कभी नवाब-प्रासादमें आते जाते थे। इससे नवाब-दरबारकी बहुत सी बातें मालूम होती रहती थीं। जबसे नवाब बीमार हुए थे, उसी दिनसे डाक्टर फ़ोर्थको कुछ अधिक आना जाना पड़ता था, क्योंकि इस समय नवाब रोगी थे और वह चिकित्सक थे। वह प्रतिदिन नवाबको देखने जाया करते थे। वहाँ जाकर नवाबके यहाँ की सभी बातें देखने सुननेमें आती थीं।

डाक्टर फ़ोर्थ प्रतिदिन आठ बजे नवाब-प्रासादमें जाते और दो तीन घण्टे वहाँ ठहरकर अपनी कोठीको लौट आते थे।

इसी तरह एक दिन यथासमय वह नवाब-प्रासादमें आये। नवाबने बैठनेको कहा। डाक्टर भी बैठनेके बाद नवाबके अनुग्रह-लाभकी आशासे सहानुभूति दिखलाकर पूछने लगे, "नवाब बहादुर! आज आपकी तबियत कैसी है?"

नवाब अलीवर्दी उदास भावसे बोले, "अब अच्छे बुरेकी क्या पूछते हो? जैसा दुरन्त रोग मुझको हुआ है, उससे बचनेकी क्या आशा है? जो रोग दिन-दिन क्षण-क्षण बढ़ता जाता है, उसका अच्छा बुरा क्या है?"

फ़ोर्थ—यदि आप कुछ दिनके लिये वायु-परिवर्त्तनार्थ बाहर चले जायँ, तो आशा है कि रोग कुछ कम हो जाय।

अलीवर्दीने गम्भीर दीर्घ निःश्वास त्याग कर कहा, "नहीं डाक्टर साहब! यह रोग किसी प्रकार कम होनेवाला नहीं है; सिवाय मृत्युके आरोग्यता किसी प्रकार न होगी।"

अभी तक सिराजुद्दौला यहाँ नहीं था। अब उसने घरमें प्रवेश किया। उसको आते देखकर अलीवर्दीने कहा, "सिराज क्या ख़बर है?"

सिराज—सम्वाद मिल गया है, अँगरेज़ सौदागरोंने बागबाज़ार में 'पेरिंग' नामका एक दुर्ग बनाना आरम्भ किया है।

डाक्टर फ़ोर्थका हृदय काँप गया। वह मन ही मन कहने लगे, "क्या सर्वनाश हुआ! सिराजुद्दौलाने यह नई पख़ निकाली।"

"सिराज! अच्छे समय पर तुम यह सम्वाद लाये। डाक्टर साहब इस समय उपस्थित हैं, अभी ही इसका विचार हो जायगा।" यह कहकर नवाबने फ़ोर्थ साहबसे कहा, "डाक्टर साहब! बागबाज़ारमें जो पेरिङ्ग दुर्ग तुम बनवा रहे हो, वह किसके आदेशसे बन रहा है?"

डाक्टर फ़ोर्थ विषम विपद्में पड़ गये। क्या उत्तर दें, यह भी न सोच सके। जब कुछ उत्तर न बन पड़ा तो चुप रहे।

उनको चुपचाप देखकर अलीवर्दीने कहा, "डाक्टर साहब चुप क्यों हो गये? कोई उत्तर क्यों नहीं देते?"

फोर्थ—जो बात सत्य नहीं है, उसका उत्तर क्या दूँ नवाब बहादुर!

यह सुनते ही सिराजुद्दौलाका क्रोध बढ़ा। उसने रुष्ट होकर कहा, "आप इसके छिपानेकी यदि चेष्टा करें, तो इसमें आश्चर्य क्या है!"

"सिराज शान्त होओ, मैं अभी सब बातोंका विचार किये देता हूँ।"

यह कहकर नवाब अलीवर्दी फोर्थ साहबसे बोले, "तुम क्या कहना चाहते हो? तुम अपनी कोई खबर नहीं रखते हो, अथवा सब बातें तुमको मालूम हैं, और पेरिङ्ग दुर्गकी बात मिथ्या है?"

फोर्थ—मुझको वहाँ की सब बातें मालूम हैं, परन्तु बाग-बाज़ारके पेरिङ्ग दुर्ग निर्माण करनेकी बात झूठ है।

डाक्टर फोर्थकी बात पर सिराजुद्दौला बड़ा क्रोधित हुआ, परन्तु कोई बात नहीं कही।

अली०—तो यह बात कही किसने?

फोर्थ—हमलोगोंको नवाब बहादुरके विद्वेष-भाजन बनाने के लिये, किसी शत्रु-पक्षवालेने यह मिथ्या सम्वाद उड़ा दिया है।

अली०—कासिमबाज़ारमें तुम्हारी कोठी है कि किला है?

फ़ोर्थ—क़िलेकी बनावट की कोठीमात्र है।

अली०—वहाँ कितनी सेना रहती है?

फ़ोर्थ—जितनी का नियम है, उससे अधिक नहीं रहती।

अली०—कितने आदमियोंका नियम है?

फ़ोर्थ—कर्मचारी और सैनिक,कुल मिलाकर चालीस मनुष्य।

अली०—इससे अधिक कभी नहीं रहते हैं?

फ़ोर्थ—कभी बढ़ भी जाते हैं, परन्तु इस समय नहीं हैं।

अली०—कबसे नहीं हैं?

फ़ोर्थ—जबसे बर्गियों का हङ्गामा बन्द होगया है, जबसे मरहटोंके साथ हुज़ूर की सन्धि हो गई है, अधिक सेना तब ही से चली गई है।

अली०—तुम्हारे लड़ाई के जहाज़ कहाँ रहते हैं?

फ़ोर्थ—बम्बई में।

अली०—तुम्हारे जङ्गी जहाज़ बङ्गालमें तो नहीं आवेंगे?

फ़ोर्थ—अभी तो उनके आनेका कोई कारण नहीं है।

अली०—कुछ दिन पहिले तुम्हारे कई एक जङ्गी जहाज़ यहाँ आये थे कि नहीं?

फ़ोर्थ—आये थे।

अली०—किस लिये?

फ़ोर्थ—रसद ज़मा करने के लिये।

अली०—सब जङ्गी जहाज़ क्या रसद जमा करने के लिये ही इस देशमें आते हैं?

फ़ोर्थ—हाँ।

अली०—यदि रसद जमा करना ही अभीष्ट है, तो जङ्गी जहाज़ों की क्या आवश्यकता है? और बम्बईमें रह कर क्या रसद जमा नहीं हो सकती है?

फ़ोर्थ—हो सकती है; किन्तु बङ्गाल की तरह सुलभ मूल्य पर प्रचुर सामान कहीं नहीं मिलता है।

अली०—रसद जमा करने के लिये हर साल जङ्गी जहाज़ों के आनेका क्या प्रयोजन है?

फ़ोर्थ—प्रयोजन रसद का जमा करना, रास्ते घाटों को याद रखना और जनसाधारण को जङ्गी जहाज़ दिखलाना है।

अली०—रास्ते घाटों को पहिचानने और जनसाधारणको दिखलाने से क्या प्रयोजन है?

फ़ोर्थ—यदि हठात् कभी आवश्यकता पड़े, तो रास्ते घाटों का पहिचान रखना अच्छा है और युद्ध-जहाज़ दिखलाने से जनसाधारण भय पावेंगे, भय पानेसे हमलोगोंके साथ कोई अत्याचार करनेके लिये साहसी न होंगे।

अली०—तो क्या जङ्गी जहाज़ दिखाकर सभी लोगोंको भयभीत करना तुम्हारा उद्देश्य है?

फ़ोर्थ—सबको दिखाना अभीष्ट नहीं है, केवल फ़रासीसियोंको ही भय दिखाना चाहते हैं।

अली०—अच्छा, फ़रासीसियोंको ही भय दिखाने से क्या होगा?

फ़ोर्थ—युद्धकी कुछ अधिक आशङ्का न रहेगी।

अली०—जो कुछ हो, परन्तु तुम लोग हरसाल जो जङ्गी जहाज़ इस तरह विना अनुमति के ले आते हो; इससे तुम लोगों की बड़ी अवाध्यता मालूम होती है।

फ़ोर्थ—अँगरेज़ लोग कभी नवाव बहादुरके अवाध्य नहीं हुए और कभी होंगे भी नहीं। बतलाइये, कभी आपके अवाध्य हुए हैं?

अब सिराजुद्दौला और चुप न रह सका। बोला, "तुम लोगोंने राजबल्लभ की सलाह से घसीटी बेगमका पक्ष अवलम्बन किया है और कृष्णबल्लभ को कालकत्ते के क़िलेमें आश्रय दिया है, इससे बढ़ कर और क्या अवाध्यता होगी?"

अली—ठीक बात है, क्या यह सब तुम सुन रहे हो?

फ़ोर्थ—नवाब बहादुर! आपके राज्यमें रह कर अँगरेज़ लोग आपके अवाध्य होंगे, यह भी क्या कभी सम्भव है? विशेष करके व्यवसाय ही जिनका एकमात्र उद्देश्य है, वह पक्षापक्ष अवलम्बन करने क्यों जायँगे? इससे वाणिज्य में क्षति होनेके सिवाय लाभ नहीं है और देखिये, ईस्ट इण्डिया कम्पनी सैनिक नहीं सौदागर है। राष्ट्रविप्लवमें सौदागरको योग देने से क्या लाभ है? हमलोग घसीटी बेगमका पक्ष क्यों समर्थन करेंगे? अँगरेज़ लोग कभी एकका समर्थन करके दूसरे के विद्वेष भाजन बनना नहीं चाहते हैं।

सिराजुद्दौला इसको सुनकर बड़े कर्कश स्वरसे बोला, "क्या

यह बात भी झूठ है कि कलकत्ते के किलेमें कृष्णवल्लभ को सपरिवार आश्रय दिया है ? क्या यह भी किसी शत्रुपक्षवाले की उड़ाई हुई बात है ? क्या कहना चाहते हो ?"

फ़ोर्थ--जो बात सत्य है, उसको क्यों नहीं कहूँगा ? अँगरेज़ जाति प्राणान्त तक झूठ नहीं बोलती है।

अली—तुमने कृष्णवल्लभ को आश्रय क्यों दिया है ?

फ़ोर्थ—सौदागर होने पर भी अँगरेज़ लोग निराश्रयको आश्रय देनेमें पराङ्मुख नहीं हैं।

सिराज—जब तुमने हमारे शत्रुको आश्रय दिया है, तब तुम लोग हमारे अवाध्य क्यों नहीं हो ?

फ़ोर्थ—यह किस तरह मालूम होता, कि कृष्णवल्लभ आपके शत्रु हैं ? यह बात आज मैंने आप ही के मुखसे सुनी है।

सिराज—अच्छा, अब कृष्णवल्लभ को छोड़ सकते हो ?

फ़ोर्थ—ईस्ट इण्डिया कम्पनी का सब काम सभाके आधीन है। अतएव इस बातका उत्तर मैं अकेला किस प्रकार दे सकता हूँ ?

अली—अच्छा, इस विषयमें तुम्हारी क्या राय है, सभा करके शीघ्र मुझको बतलाओ।

इस बातचीत में ग्यारह बज गये। डाक्टर फ़ोर्थ वहाँ से विदा हुए और कोई बात नहीं हुई।

इक्कीसवाँ परिच्छेद ।

दिन प्रायः समाप्त होने को है। नवाब कभी अच्छे हैं, कभी नहीं। वह किसीसे अधिक नहीं बोलते हैं, तो भी दो चार बातें कह लेते हैं, परन्तु वह केवल सिराजुद्दौला से। रोग की यन्त्रणा से अब उनकी मति स्थिर नहीं है।

आज पीड़ा बहुत बढ़ गई है, क्षण-क्षण पर श्वासावरोध होता मालूम होता है, यन्त्रणा की सीमा नहीं है। पेट बहुत बढ़ गया है, एक एक नस दिखाई दे रही है। शरीर में हड्डी ही हड्डी शेष रह गई हैं। हाथ पैर सूज गये हैं। मृत्युके सब लक्षण दिखाई दे रहे हैं। तोभी कब प्राण निकलेंगे, इसकी स्थिरता नहीं है। विज्ञ चिकित्सक लोग भी इस रोगके मृत्युकाल को बतला नहीं सकते हैं।

विचक्षण नवाब अलीवर्दी, अपना अन्तिम काल समझ कर, दौहित्र को कुछ अन्तिम उपदेश देने की इच्छा से बोले, "सिराज! मैं तो अब चलता हूँ। मालूम होता है, कि अब अधिक देर नहीं है। किन्तु तुम मेरी यह अन्तिम समय की बातें याद रखना। यदि तुम सिंहासन दृढ़ करना चाहो,

यदि तुम शत्रुओंको वशमें और पराभूत रखना चाहो, तो मेरे इस उपदेशानुसार काम करना। सिराज! तुम्हारे लिये ही मुझको इतना सोच है। लोग मरकर चिन्ताके हाथ से छुटकारा पा जाते हैं; परन्तु मुझको मालूम होता है, कि मरने पर भी मैं तुम्हारी इस चिन्ता से छुट्टी न पाऊँगा। वत्स! तुम्हारा परिणाम सोच कर मरने की इच्छा नहीं होती है। रोग-पीड़ित मनुष्य बच भी जाय तो उससे क्या, परन्तु तुम्हारे लिये मैं फिर भी बचना चाहता हूँ। परन्तु मरना जीना तो मनुष्यके हाथ में नहीं है, बचने की इच्छा करने से अब क्या होगा? तो भी तुम्हारे लिये बचना चाहता हूँ।"

ऐसी कातरता की बातसे किसको दुःख न होगा? सिराजुद्दौला और चुप न रह सका, वह रोने लगा। आँखों में आँसू भरे गद्गद स्वरसे बोला, "नानाजी! तो क्या आप सत्य ही मुझको छोड़कर जाते हैं?"

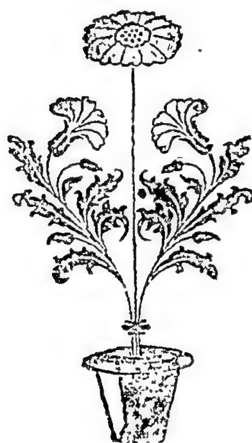
हाँपते हाँपते अलीवर्दीने कहा, "सिराज! क्यों रोते हो? रोनेका अब समय नहीं है। जो कहूँ उसको चित्त से सुनो, और उसी तरह करो। अँगरेज़ सौदागरों से मिलकर रहो, यदि उनसे मेल रक्खोगे तो युरोपके सौदागरमात्र उत्पात न कर सकेंगे और कोई शङ्का भी न रहेगी। यदि कभी कोई हमारे बङ्गाल, विहार उड़ीसा का शत्रु हो सकता है, तो यही अँगरेज़ सौदागर। उनको मिलाये रहने की सदैव चेष्टा करते रहो।"

बोलते बोलते नवाब थक गये। थोड़ी देर विश्राम करके फिर कहने लगे,"सिराज! जो राजा अच्छे मन्त्री की मन्त्रणा नहीं सुनता है, जो विनीत नहीं होता है और उग्र स्वभावका होता है,राज्य-सञ्चालन उसके लिये कठिन हो जाता है। राजा का कर्त्तव्य है, कि होशियार मन्त्रियोंके साथ परामर्श करके राज्यका काम करे। तुम भी बहुदर्शी विज्ञ मन्त्रियों के साथ मन्त्रणा करके राज-कार्य्य चलाओ। युद्धकाल उपस्थित होने पर, सब से पहले शान्ति-स्थापन करने की चेष्टा करनी चाहिये। सेना को सन्तुष्ट रखनेमें सदा यत्नवान रहना चाहिये। राजा और प्रजा सभी को स्नेह की दृष्टि से देखना चाहिये। सब के साथ सद्भाव रखना चाहिये। राज-कोष की ओर सतर्क दृष्टि रखनी चाहिये। राज्यके अभावको पूरा करने की चेष्टा करते रहना चाहिये। ऐसा विचार करना चाहिये,जिससे निरपराधको दण्ड न मिले; शत्रुके ऊपर तीक्ष्ण लक्ष्य रखना चाहिये। अवसर पाते ही राज्योन्नति की चेष्टा करनी चाहिये। युद्धके लिये सदा तय्यार रहना चाहिये। जब जो काम करो, आगा-पीछा सोचकर, विशेष विवेचना के साथ करो। अकारण अपनी ही बात रखने की चेष्टा मत करना।"

इतना कहते कहते अलीवर्दी का श्वास घुटने लगा। आँखें टंग गईं। उन्होंने बड़े कष्टसे कहा,—"सि-राज! सा-व-धा-न, र-ह-ना, अँ-ग-रे-ज़ सौदा-ग-रों से मे-ल र-ख-ना—और

कुछ मुख से न निकल सका। मुख की बात मुख में ही रह गई। श्वास बन्द हो गया। नवाब अलीवर्दीने सदैव के लिये आँखें बन्द कर लीं। सब शेष हो गया। मुसल्मानोंके गौरव का सूर्य्य सदैव के लिये अस्त होगया। मुसल्मानों का सिंहासन काँप उठा।

यथासमय, खुशबाग़में, अलीवर्दी की मृत देह गाड़ी गई। सभी ने नवाबके लिये अन्तिम आँसू बहाये।



तीसरा खण्ड ।

पहला परिच्छेद ।

चारों ओर शत्रु हैं। सिंहासनका प्रबल विरोधी राजवल्लभ कब क्या विपद उपस्थित करदे, कौन जानता है? इसीसे सिराजुद्दौला देर न करके, सन् १७६५ के अप्रेल महीने में, बङ्गाल, बिहार और उड़ीसा के सिंहासन पर बैठा। शत्रु-दल इतने दिनोंसे छिपा-छिपा सिंहासनके लिये जो दारुण षड्यन्त्र रचता था, सो सब वृथा हुआ। बाधा देने अथवा प्रतिवादी बनने का कोई साहसी न हुआ। वरं मनकी बात मन ही में रख कर, प्रकाशमें सभी ने सभास्थल में उपस्थित होकर राज-भक्ति दिखलाई और सिराजुद्दौलाको बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाका 'नवाब' स्वीकार किया। सबने देखा, सबने जाना, सबने सुना, कि नवाब सिराजुद्दौला—मन्सूरुलमुल्क सिराजुद्दौला शाहकुलीखाँ मिर्ज़ा मुहम्मद हैबतजङ्ग बहादुर—मुर्शिदाबादकी मसनद पर बैठा।

सिंहासन पर बैठ कर, सिराजुद्दौला का भय दूर हुआ। उसको आशङ्का थी, कि सिंहासनके लिये न जाने कितने विघ्न-विपत्ति, कितने खूनका क्षय और कितने लड़ाई झगड़े होंगे। परन्तु जब कहीं कुछ नहीं हुआ; किसी ने किसी तरह की बाधा न डाली, आसानीसे वह सिंहासन पर बैठ गया, शत्रुपक्षने भी बिना आपत्तिके उसको बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाका 'नवाब' कह कर स्वीकार किया; तो उसको बड़ा ही आश्चर्य मालुम हुआ और वह नवाबके अन्तिम उपदेशके अनुसार काम करनेमें प्रवृत्त हुआ।

सिंहासन पर बैठनेके पहिले सिराजुद्दौला घोर अँगरेज़-विद्वेषी था। सिंहासन पर बैठ कर भी मातामहके अन्तिम उपदेशके ऊपर बिल्कुल न चला। वह अपनी दुर्द्दमनीय इच्छा को दमन न कर सका। जिन अँगरेज़ सौदागरोंको दमन करनेके लिये वह मातामहको सदैव उत्तेजित करता रहता था, बङ्गालदेशसे उनको निकाल देनेके लिये बारम्बार अनुमति चाहता था; सिंहासन पर बैठकर, नवाबी पद पाकर, आज उसने उन्हीं अँगरेज़ सौदागरों पर अत्याचार करनेको मनमें ठानी और सहसा युद्ध-विग्रहमें प्रवृत्त न होकर, कासिमबाज़ार से वाट्स साहब को बुला भेजा, कि वह आकर अपने अपराध की मीमांसा कर जायँ।

सम्वाद पाते ही, सब काम छोड़ कर, वाट्स साहब नवाब सिराजुद्दौलासे मिलने चले। नवाब उस समय दरबारमें बैठे

हुए विचार कर रहे थे। वाट्स साहबको उपस्थित देखकर, विचार का काम बन्द करके, उनके साथ बात-चीत करनेमें प्रवृत्त हुए।

क्रोध के वशीभूत होकर, परन्तु सरल और धीर भावसे नवाब सिराजुद्दौला बोला, "देखो वाट्स साहब! तुम लोग बहुत ही स्वेच्छाचारिता का परिचय दे रहे हो। मालुम होता है, कि तुमने समझ लिया है कि तुम लोग ही इस देश के हर्त्ता-कर्त्ता-विधाता हो; इसीसे अनुमति न लेकर, जो इच्छा होती है वही करते हो। तुम्हारे इस व्यवहारसे मैं तुमसे इतना अप्रसन्न हुआ हूँ, जिसका पार नहीं है। तुम लोग राजाको मानते नहीं हो। जो कुछ तुम्हारे मनमें होता है वही कर बैठते हो, एक बात भी नहीं पूछते हो। इतनी उपेक्षा, ऐसी स्वाधीनता क्यों है, नहीं जानता हूँ। इससे तुम आप ही अपना अनिष्ट बुलाते हो। यदि देशमें विचार-वार्त्ता न होता, देश यदि अराजक होता, तो यह स्वेच्छाचार शोभा देता। तुम तो देखते हो, नवाब अलीवर्दीका सिंहासन ख़ाली नहीं है; तब हमारी अनुमति न लेकर, बाग़बाज़ारमें, पेरिंग दुर्ग क्यों बनवा रहे हो? किस लिये, मुझसे कोई बात न पूछ कर, कृष्णवल्लभको आश्रय दिया है? यह सब काम किस साहस से और किसकी आज्ञासे करते हो? मैं तुमको सौदागर जानता हूँ, व्यवसायके लिये तुम लोग यहाँ आये हो। तुम लोगोंने दिल्लीके बादशाह से जो आदेश-पत्र पाया है, वह

तो केवल बिना कर के दिये वाणिज्य करनेके वास्ते है। दुर्ग-निर्माण, युद्ध-विग्रहमें योग-दान देने अथवा स्वेच्छाचारी होनेकी अनुमति तो नहीं पाई है? यदि तुम सौदागर होकर, केवलमात्र व्यवसाय-वाणिज्य करके, शान्तिभावसे रहना चाहो, तो मैं तुमको इस देशमें रहने दूँगा; और यदि मेरे अवाध्य होगे, मेरी अनुमति न लेकर कोई काम करोगे, तो किसी प्रकार इस देशमें रहकर वाणिज्य न कर सकोगे। तुमको अवश्य, मेरे हुक्मसे, मेरे शासनके अनुवर्त्ती होकर चलना होगा। मैं तुमसे साफ़-साफ़ कहता हूँ, कि यदि तुम इस देशमें रहकर वाणिज्य करना चाहो तो क़िलेको तुड़वा डालो और कृष्णवल्लभको शीघ्र मेरे पास पहुँचा दो; और यदि तुम ऐसा न करोगे तो तुम्हारी यह धृष्टता मैं किसी प्रकार क्षमा न करूँगा।

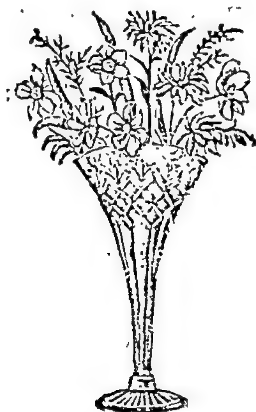
वाट्स साहब उसके उत्तरमें बोले, "नवाब बहादुर! मैं स्वयं इस बातका उत्तर नहीं दे सकता हूँ। कलकत्तेके कर्त्ता लोगोंको लिखता हूँ, वह जो कुछ ठीक समझेंगे वही होगा।"

सिराज—मैं शीघ्र ही इसका उत्तर चाहता हूँ। विलम्ब करनेसे परिणाममें तुम्हारे अमङ्गल होनेकी सम्भावना है। मैं अपने कर्मचारियोंको अभी तुम्हारे क़िलेके तोड़ने की आज्ञा दे देता; केवल यही देखनेको रुक गया हूँ, कि देखूँ, तुम मेरी बातका सम्मान करते हो या नहीं। यदि निरर्थक खून न

बहाना चाहो, यदि अवाध्यता न दिखलाना चाहो, तो क़िले को तोड़नेमें और कृष्णवल्लभको मेरे पास पहुँचानेमें, तनिक भी विलम्ब न करो।

"हुजूरके सभी हुक्म अवश्य कर्त्ता लोगोंको लिखूँगा, और वही करूँगा जिससे शीघ्र उत्तर आवे।" यह कह कर और सलाम करके वाट्स साहब विदा हो गये।

कई दिन हो गये, परन्तु कोई उत्तर नहीं आया। सिराजुद्दौला उत्तरकी प्रतीक्षामें और समय नष्ट न कर सका। उसने एक पत्र लिख कर कलकत्तेके अँगरेज़ोंके पास दूत भेजा। दौत्यकार्य फ़खरुत्तहिज़ार ख़्वाजा वाजिदके सिपुर्द हुआ।



दूसरा परिच्छेद।

उसी समय ख़्वाजा वाजिद अँगरेज़ोंके दरबार में पहुँचे और गवर्नर ड्रेक साहबसे मिलकर उनको नवाबका पत्र दिया। गवर्नर ड्रेक साहबने पत्र तो हाथमें ले लिया और पढ़कर रख लिया और कुछ सोचने लगे।

इस तरह कुछ देर हुई, जब कोई उत्तर न पाया तो शेषमें ख़्वाजा वाजिद और चुप न रह सके और बोले, "आप लोगों की क्या राय है? क्या पत्रका कोई उत्तर न दीजियेगा?"

यह सुनकर एक अँगरेज़ बोला, "हम क्या उत्तर दें? यदि हमने नबाबका कोई अपराध किया होता, तो उसका उत्तर देते। जब हमने कोई अपराध ही नहीं किया है, तो क्या उत्तर दें?"

ख़्वाजा वाजिद सिराजुद्दौलाके दूत थे। सौदागर अँगरेज़ों का उनको क्या भय था? उन्होंने कहा, "तो आप लोग नवाब बहादुरके आदेश-पालनमें असम्मत हैं?"

कप्तान ग्राण्ट साहबने कहा, "सम्मत हैं या असम्मत, यह तो हमने कुछ नहीं कहा है।"

ख़्वाजा—तो आप लोग बाग़बाज़ारके पेरिंग दुर्गको न तोड़ेंगे ?

ग्राण्ट—यदि क़िला बनाया होता तो उसको तोड़ते, जब बनाया ही नहीं है तब तोड़ें किसे ?

ख़्वाजा—तो आप लोग नवाब बहादुरके अवाध्य हैं ?

ग्राण्ट—हम लोग अपना वाणिज्य निरापद करना चाहते हैं, अवाध्य होना नहीं चाहते। और यदि आप अवाध्य समझें तो हम निरूपाय हैं।

ख़्वाजा—जो राजाका आदेश न पालन करे, वह अवाध्य नहीं तो कौन है ?

ग्राण्ट—हम तुम्हारे साथमें वादानुवाद करना नहीं चाहते, तुम सामान्य दूतमात्र हो! तुमको अधिक बातें करना आवश्यक नहीं है, जाओ, अपने स्थानको जाओ।

ख़्वाजा—अच्छी बात है, परन्तु मैं यहाँ रहने को नहीं आया हूँ। क्या तुम लोग समझ सकते हो कि मेरे चले जाने पर कैसा भयङ्कर काण्ड उपस्थित होगा ? एक तो नवाब सिराजुद्दौला पहिले ही से आपका घोर विरोधी है, तिसके ऊपर आपकी यह उपेक्षाकी बात सुनकर रक्षाका कोई उपाय नहीं रहेगा! आप लोग अपने आप ही यह निरर्थक विपद् आवाहन क्यों करते हैं ? सात समुद्र, तेरह नदी, पार करके, इस बङ्गाल देशमें आकर, उपायका पथ बन्द करके, सदैवके लिये नवाबके विद्वेष-भाजन बनना क्या युक्तिसङ्गत है ? नवाब

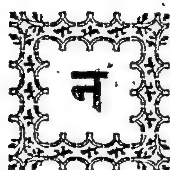
सिराजुद्दौलाके विद्वेष-भाजन बन कर, समरानलमें जलना अच्छा नहीं है।

ख़्वाजा वाजिद की यह बातें अँगरेज़ों को अच्छी न लगीं। परन्तु फिर भी अपने क्रोध को रोककर बोले, "ख़्वाजा साहब! जब हमने कोई अपराध ही नहीं किया है, तो अवाध्य किस प्रकार से आप कह रहे हैं? और हम क्या करें कि नवाबके विद्वेष-भाजन न बनना पड़े? नवाब यदि बिना अपराध ही हमको समरानलमें जलाना चाहते हैं, तो हमारे करने से क्या होगा? उनको सब क्षमता है, जो चाहें कर सकते हैं।

ख़्वाजा वाजिद इन बातोंको सुनकर, रुष्ट होकर, चल दिये।



तीसरा परिच्छेद।



नवाब सिराजुद्दौला इस उत्तरसे और भी रुष्ट हुआ। उसको तो किसी न किसी बहानेसे रुष्ट ही होना था; अतः वह उचित शास्ति देनेका प्रयासी हुआ। किन्तु फिर भी न जाने कैसे, मातामहके अन्तिम उपदेश की उपयोगिता समझ कर, सहसा युद्ध-विग्रहमें प्रवृत्त न होकर एक बार फिर एवा दूत भेजनेमें यत्नवान हुआ।

परन्तु इस दौत्यभार को कौन अपने ऊपर ले। कोई वाक्‌पटु, चतुर मनुष्य आवश्यक है। किन्तु ऐसा कौन मनुष्य है? वह किसको अँगरेज़ोंके पास भेज सकता है? एक ख़्वाजा वाजिद हैं, वह भी उस दिन गये परन्तु कुछ भी न कर आये। अब उनसे कुछ न होगा।

इस तरह स्थिर होने पर, नवाब सिराजुद्दौलाने राजा रामरायसिंह को बुलाकर कहा,—"वणिक अँगरेज़ों की उद्दण्डता को तुमने सुना होगा, अब क्या कर्त्तव्य है?"

राजा रामरायसिंह एक विश्वासी और उपयुक्त मनुष्य थे। नवाब-सरकारमें उनकी ख़ातिर और नामवरी बहुत थी।

यह जैसे ही कार्य्यकुशल थे, वैसे ही साहसी और प्रभुपरायण थे। नवाब अलीवर्दी ने इनके कामोंसे सन्तुष्ट होकर, इन्हें "राजा"की उपाधि देकर,मेदिनीपुरकी फौजदारीसे चारगणका अधिपति बनाया था। इसके अतिरिक्त, अनेक समयों पर इनकी मन्त्रणा-परामर्श के अनुसार नवाब काम करते थे।

अकेले नवाब अलीवर्दी ही राजा रामरायसिंह के परामर्श से काम करते थे, ऐसा नहीं है। उपयुक्त मन्त्रणाकुशल जान कर, नवाब सिराजुद्दौला भी समय समय पर उनकी सलाह लिये बिना न रहता था। परन्तु अपनी ज़िद्द के आगे, मानता वह किसी की न था।

सिराजके प्रश्नके उत्तरमें राजा रामरायसिंहने कहा,—"मैंने सब सुना है, किन्तु उनके ऐसे व्यवहारका कोई कारण तो मेरी समझमें नहीं आता है। जो दण्ड-मुण्ड का कर्त्ता है, जिसके अनुग्रहके अभिलाषी बङ्गालमें सभी हैं, उसकी उपेक्षा, उसके आदेशका उल्लङ्घन, बड़े विस्मय की बात है! निश्चय ही इसमें कोई गूढ़ रहस्य है।"

सिराज—वह रहस्य मुझे एक प्रकारसे ज्ञात हो गया है। मैंने जिस दिन सुना था, कि अँगरेज़ लोगोंने राजवल्लभके पुत्र कृष्णवल्लभको परिवार सहित कलकत्तेमें आश्रय दिया है; उसी दिन मैं समझ गया था, कि वह लोग राजवल्लभके प्रलोभनमें भूल कर और उसका पक्ष अवलम्बन करके छिपे-छिपे घसीटी बेगमकी सहायता करने पर सम्मत हो गये हैं।

राम०—घसीटी बेगमकी अब क्या सहायता करेंगी?

सिराजुद्दौला कुछ मुस्करा कर बोला, "क्यों? जिससे मैं इस बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाके सिंहासन पर न बैठ सकूँ।"

राम०—वह आशा तो पूर्ण हो गई, अब फिर क्या होगा?

सिराज—राजवल्लभने जो धोखा सब लोगोंको दिया है, वह अभी उन लोगोंके हृदयोंमें बना हुआ है। उसके पक्षवाले विश्वास करते हैं, कि राजवल्लभ इकरामुद्दौलाके शिशु पुत्र मुरादुद्दौलाको मसनद पर बिठा कर, घसीटी बेगमके नामसे राज्य-शासन करेगा।

राम०—आपको सिंहासन पर बैठा देख कर भी, क्या वह भ्रम दूर न हुआ?

सिराज—यदि दूर ही हो गया होता, तो अँगरेज़ हमारे ही राज्यमें रह कर, हमारे ही दूतकी अवहेलना कैसे करते?

राम०—परन्तु जहाँ तक मैंने सुना है, आपके दूतकी अवहेलना नहीं हुई है और वास्तवमें यह अपराध इन्होंने नहीं किया है, यह आपको भ्रम हो गया है।

सिराज—नहीं, नहीं, मुझको भ्रम नहीं हुआ है। मैं घसीटी बेगमका रुपया, जो कृष्णवल्लभ ले गया है, चाहता हूँ। युद्ध-विग्रह अथवा विवादमें लिप्त होनेकी कोई आवश्यकता नहीं देखता हूँ। युद्ध-विग्रह बड़ा ही अशान्ति-कर होता है। परन्तु रुपया अवश्य मिलना चाहिये और किला जो अँगरेज़ लोग बना रहे हैं उसका टूट जाना भी

आवश्यक है। इसके लिये मैं अँगरेज़ोंके पास फिर दूत भेजना चाहता हूँ। यदि अब की बार वह मेरे कहे के अनुसार न करेंगे; तो अवश्य ही रणक्षेत्रमें उतरकर उनको शास्ति दूंगा।

सिराजुद्दौलाकी इस बातको सुन कर राजा रामरायसिंह बड़े आश्चर्यमें आये। सिंहासन पर बैठनेसे पहिले, वह अँगरेज़ सौदागरोंके दमन करनेके लिये सदा ही बहाना ढूँढ़ा करता था। एक भी दोष पाने से ही मातामह को उनके विरुद्ध उत्तेजित करने की चेष्टा करता था। अब केवल रुपयेके लालचसे यह ढोंग रचा है। राजा रामरायसिंह अपने विस्मयभावको छिपा कर बोले,—"तो क्या आप अँगरेज़ोंके पास दूत भेजनेकी इच्छा करते हैं?"

सिराज—हाँ, एक बार और दूत भेज कर देख लूँ। और वह दूत का भार मैं तुम को ही दिया चाहता हूँ। तुम आप कर सको तो बहुत अच्छा, न कर सको तो कोई योग्य पुरुष भेजो। इस बार भी यदि वह पहिले को तरह अवज्ञा और असम्मानका भाव प्रकाश करेंगे, तो उनको इस अविवेचनाका फल उनको हाथों-हाथ मिल जायगा।

सिराजुद्दौलाको जो कुछ करना है वह करेगा। फिर दूत भेज कर क्या होगा? राजा रामरायसिंह को यह बात अच्छी न लगी। परन्तु क्या करते प्रभुकी आज्ञा! इच्छा न होने पर भी अन्यथा करनेका उपाय नहीं है। इसलिये प्रभु

को राज़ी करनेको बोले,—"मेरा भाई इस काममें विशेष दक्ष है। मेरी इच्छा है, कि उसी को कलकत्ते भेजा जावे।"

सिराज—तो और देर करनेकी आवश्यकता नहीं है। जितना शीघ्र हो सके, अपने भाई को यह पत्र देकर कलकत्ते अँगरेज़ोंके पास भिजवा दो।

'जो आज्ञा' कह कर, राजा रामरायसिंह नवाब सिराजुद्दौलासे विदा हुए।

राजा रामरायसिंह इस समय सोचने लगे,—"जबकि अँगरेज़ोंने ख़ाजा वाजिदसे साफ़-साफ़ कह दिया है कि उन्होंने कोई अपराध नहीं किया है और वह वास्तवमें निरपराधी हैं; तब भाई को कलकत्ते ड्रेक साहबके पास क्योंकर भेजूँ? गवर्नर ड्रेक साहब से साक्षात् करके क्या कहना होगा? वह फिर वही उत्तर देंगे।" यह सोच कर उन्होंने एक कौशल-जाल बिछाया। उन्होंने भाईको एक फेरीवालेके रूपमें बना कर, एक डोंगीमें बैठा कर कलकत्ते भेज दिया।

राजा रामरायसिंहके भाईका नाम रामहरिसिंह था। यह भी रामरायसिंह की तरह चतुर, बुद्धिमान्, साहसी कार्यदक्ष और उपस्थित बुद्धि-सम्पन्न थे। यह बड़े भाईके साथमें, गुप्तचर विभागमें, काम करते थे।

चौथा परिच्छेद ।

उमाचरण अथवा अमीचन्द पाठकों के अपरिचित नहीं हैं। सेठ लोगोंमें फ़तहचन्द जैसे धन-मर्यादा प्रभृतिमें प्रधान और विख्यात थे; बनियोंमें उमाचरण अथवा अमीचन्द भी उसी तरह श्रेष्ठ थे। वह बङ्गाली न थे, पश्चिमके हिन्दू बनिये थे, व्यवसाय-वाणिज्यके लिये यहाँ आये थे। ये दो भाई थे,—अमीचन्द व दीपचन्द। जिस समय अलीवर्दी. नवाब सरफ़राज़ख़ाँके विरुद्ध युद्ध घोषणा करके, सेना लेकर मुर्शिदाबाद आये थे और सरफ़राज़ख़ाँको मार कर मुर्शिदाबादकी मसनद पर बैठे थे; उसी समय उमाचरण अलीवर्दीके साथ इस देशमें आये थे। उमाचरण अलीवर्दीके अतिशय विश्वासपात्र थे। उमाचरण केवल बीस हज़ार रुपया लेकर इस देशमें आये थे। किन्तु जब किसीके ऊपर लक्ष्मीकी कृपा-दृष्टि होती है, उस समय वह महादरिद्र होने पर भी, थोड़े ही दिनोंमें, अतुल ऐश्वर्य्यका अधीश्वर हो जाता है। उमाचरणके भाग्यमें भी वैसा ही हुआ।

बङ्गालमें आकर उमाचरण व्यवसाय-वाणिज्यमें प्रवृत्त हुए। कमलाकी कृपासे उनका व्यवसाय दिन-दिन उन्नति करने लगा। देखते-देखते वह एक विख्यात मनुष्य हो गये। देश-देशमें उमाचरणका नाम मशहूर हो गया। सबने जान लिया कि अमीचन्द एक प्रधान वणिक हैं। व्यवसाय-वाणिज्य के कौशलको उमाचरण जितना समझते थे, जितना जानते थे, उतना और कोई न समझता था।

एक पुरानी कहावत प्रचलित है कि "व्यापारमें अपार लाभ है, खेतीमें लाभ है और चाकरी कूकर वृत्ति है इसमें देश-देश घूमना पड़ता है।" थोड़ा ध्यान करके देखा जावे, तो इसकी सत्यता ज्ञात होती है।

उमाचरणका नाम देश-विख्यात हो गया था। सब लोग उनको जानते थे, उनकी नामवरी भी सब लोग जानते थे। यहाँ तक कि अँगरेज़ सौदागर सदैव इनकी सहायता लिया करते थे। इन्होंके द्वारा अँगरेज़ लोग कपास, वस्त्र इत्यादि खरीदते थे।

व्यवसाय-वाणिज्य करके उमाचरण इस समय धनकुबेर हो गये हैं। अँगरेज़, फ़रासीसी, आरमीनियन इत्यादि नाना जातीय वणिक लोग तमस्सुक लिखकर इनसे कर्ज़ लेते थे। उस समय कलकत्तेमें कोई वणिक धन-सम्पत्तिमें उमाचरणके बराबर न था।

उमाचरण बनिये होने पर भी, व्यवसायी होने पर भी, बड़े

विलासी थे। अतुल ऐश्वर्य्यके अधीश्वर होने पर भी, वह उसको कञ्जूसकी तरह जमा न करते थे; भोग-विलासमें बहुत कुछ खर्च कर देते थे।

उमाचरणने बहुत सा रुपया लगाकर, कलकत्तेके नन्दबाग़ में, अपना एक प्रासाद बनवाया था। वह मकान कई महलोंमें विभक्त था। इसका निर्माण-कौशल अपूर्व्व था। प्रासादके सामने पुष्पोद्यान था, यह तरह तरहके पुष्पवृक्षोंसे सुशोभित था। प्रकाण्ड सिंहद्वार सर्वदा सशस्त्र प्रहरियोंसे रक्षित रहता था।

उमाचरणके इस प्रासादको देखकर कोई भी बिना प्रशंसा किये न रह सकता था। उनके इस विशाल प्रासाद और धन-सम्पत्तिको देखकर, अँगरेज़ सौदागर उनको राजा समझते थे। लक्ष्मीकी कृपा होनेसे सभी कुछ हो सकता है।

छद्मवेशी रामहरिसिंह निरापद कलकत्ते पहुँच गये और उमाचरणके घर आश्रय लिया। उमाचरणके साथ रामहरिसिंह की पहिले ही से जान-पहिचान और विशेष सद्भाव था। इसीसे उमाचरण ने इनको बड़े आदरसे अपने प्रासादमें स्थान दिया।

दूसरे दिन उमाचरण रामहरिसिंह को लेकर अँगरेज़ोंकी सभामें पहुँचे। सभास्थलमें उपस्थित होकर, रामहरिने अपना परिचय देकर नवाब सिराजुद्दौलाका दिया हुआ पत्र कौन्सिलके सभ्यागणोंके हाथमें दे दिया। मेनिङ्हाम साहब पत्र लेकर पढ़ने लगे। पत्र इस प्रकार थाः—

"कलकत्तेकी ईस्ट इण्डिया कम्पनीके सभ्यगण! मैं तुम्हारे व्यवहारसे बड़ा ही असन्तुष्ट हो गया हूँ। तुमने हमारे दूत की यथेष्ट अवमानना की है और हमको भी अवहेलना दिखलाई है। हमारे राज्यमें रहकर, हमारे साथ ऐसा व्यवहार करके, तुमने बड़े ही उद्धत स्वभावका परिचय दिया है। तुम जानते हो, कि यदि मैं चाहूँ तो तुम्हारे इस व्यवहारकी उचित शिक्षा दे सकता हूँ। राजाकी अवज्ञा करनेकी सज़ा क्या है, सो तुम निश्चय ही जानते होगे और यह भी अच्छी तरह जानते होगे, कि मैं ही इस देशके दण्डमुण्डका कर्त्ता हूँ। जान-सुन कर भी, ऐसा साहस क्यों? इस समय भी तुमसे कहता हूँ, कि यदि तुम अपना मङ्गल चाहते हो, यदि बङ्गाल देशमें रहकर वाणिज्य करना चाहते हो, तो पत्र पढ़ते ही मेरे आदेशका पालन करो। यदि यह न करके निरर्थक ढील करोगे, तो तुम्हारे दमन करनेमें देर न करूँगा। सेना लेकर तुम्हारे ऊपर चढ़ाई करूँगा। उस समय क्षमा माँगनेसे कुछ न होगा। इसीसे कहता हूँ, अभी समय है, अब भी विवेचना करके काम करो; नहीं तो अन्तमें पछताना पड़ेगा। दूतके लौटनेकी राह देख रहा हूँ। देखो आग लगाना इतना कठिन नहीं है, इच्छा करते ही लग सकती है। परन्तु लग जानेके पीछे उसका बुझाना कठिन है; इच्छा के साथ ही बुझाई नहीं जा सकती। इति

नवाब सिराजुद्दौला।"

पत्र-पाठ शेष हुआ। सुनते ही कौन्सिलके सभ्य-लोग क्रोधके मारे जल उठे। सब एक साथ बोल उठे, "हम लोग किसीके आधीन नहीं हैं। हम नवाबका आदेश पालन नहीं कर सकते। हम विलायतके राजाकी प्रजा हैं। उन्हींके आदेशसे काम करते हैं। वही हमारे दण्डमुण्डके कर्त्ता हैं। सिराजुद्दौलाके आदेश पर, हम लोग कभी नहीं चल सकते हैं।"

कौन्सिलके सभ्योंके इस प्रकार मत प्रकाश करने पर, नवाब-दूत रामहरिसिंह बोले—"इँगलैण्डेश्वर आपके राजा हैं, यह सत्य है; किन्तु आप लोग नहीं जानते हैं कि सिराजुद्दौला की आजकल तूती बोल रही है। उसके निगाह उठानेके साथ ही, आप लोगोंकी क्या दशा हो सकती है! फिर आप ऐसी स्वाधीनताका परिचय क्यों देते हैं? क्या आप सिराजुद्दौलाको नवाब स्वीकार नहीं करते हैं?"

उसके उत्तरमें मेनिंहाम साहबने कहा, "हम नवाब होना तो मानते हैं; परन्तु हमारा अपराध क्या है, जिसके लिये इतनी आपत्ति हमारे ऊपर लाना चाहते हैं। हमने अपनी जानमें कुछ भी अपराध नहीं किया है।"

रामहरि—तो मुझसे क्या कहते हो? क्या मैं जाऊँ?

मेनि०—आप स्वच्छन्दतापूर्व्वक जा सकते हैं।

रामहरि—यह क्या! मैं तो नवाबका पत्र लाया हूँ, क्या उसका उत्तर न दोगे?

मेनि०—मुझको जो कुछ कहना था वह कह चुका, और

में कुछ न कहूँगा। अँगरेज़ लोग अपना कर्त्तव्य आप ही समझते हैं, तुमको समझानेकी आवश्यकता नहीं है।

रामहरि—तो पत्रका उत्तर क्यों नहीं देते हो?

अँगरेज़ सभ्योंको और सह्य न हो सका, सभीको क्रोध हो आया; परन्तु फिर भी क्रोधको रोक कर बोले, "अब आप यहाँ से चले जाइये, हम और कुछ कहना नहीं चाहते हैं। जब नवाब हमको दुःखी ही करना चाहते हैं, तो जैसी उनकी इच्छा हो करें; परन्तु हम फिर भी यही कहते हैं कि हम निरपराध हैं।"

यह सुनकर रामहरिसिंह सेनिंहाम साहबके यहाँ से चल दिये; क्योंकि वह भी इसी उत्तरकी आशा कर रहे थे। उन्होंने मनमें कहा कि "देखो तो सिराजुद्दौलाको कैसा समझाता हूँ।"



पाँचवाँ परिच्छेद।

दूत रामहरिसिंह के मुर्शिदाबाद पहुँचने पर, नवाब सिराजुद्दौला क्रोधके मारे जलने लगा। सोते हुए सिंहको उठानेसे उसकी मूर्त्ति जैसी भयानक होती है, नवाब सिराजुद्दौला की भी वैसी ही हो गई। दोनों आँखोंसे अग्नि-वर्षण होने लगा। मुखमण्डल नवोदित सूर्य्यकी भाँति रक्तवर्ण हो गया। हाथ कमरसे लटकती हुई तलवारसे जाकर लग गया। दाँतोंसे दाँत काटता हुआ, विकट चीत्कार करता हुआ, बोला, "क्या अँगरेज़ सौदागरोंको इतनी स्पर्द्धा है कि बारम्बार हमारे दूतसे हमारे आदेशका उल्लङ्घन! क्या उनको नहीं मालूम है कि किसके राज्यमें रहकर वह वाणिज्य कर रहे हैं? बङ्गाल-बिहार और उड़ीसाका सिंहासन खाली तो पड़ा नहीं है! कैसे आश्चर्य्यकी बात है, कि जो इच्छा करते ही उन लोगोंको इस बङ्गालसे निकाल सकता है, उसीके साथ ऐसी उद्दण्डता! कैसा दुःसाहस है! एक बार उचित शिक्षा न देनेसे, इनको किसी प्रकार चैतन्यता न होगी। यह किसी तरह न समझेंगे, कि राजाकी अवज्ञा करनेका परिणाम क्या होगा?"

दूत रामहरिसिंह और चुप न रह सके। हाथ जोड़कर धीरे धीरे बोले, "नवाब बहादुर! वह अपराध ही स्वीकार नहीं करते हैं। वह कहते हैं कि हमने अपराध ही क्या किया है?"

सिराज—वह क्या कहते हैं?

रामहरि—वह कहते हैं कि कृष्णवल्लभ हमारे मित्रका लड़का है। उसको अपने यहाँ ठहराना हमारा धर्म है। दूसरा अपराध क़िला बनाना है, सो भी हमने नहीं बनाया है।

यह सुनते ही सिराजुद्दौलाके ध्यानमें कुछ और ही बात आई। वह इस बातका यह अर्थ समझा, कि अँगरेज़ोंकी इस उपेक्षाका मुख्य कारण घसीटी बेगम है। पहिले घसीटी बेगमको वशमें कर लेना चाहिये, पीछे अँगरेज़ोंसे बदला लूँगा। यह समझकर उस समय वह शान्त हो गया।

सिराजुद्दौला बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाके सिंहासन पर बैठा अवश्य, परन्तु राजवल्लभका खटका उसके चित्तसे दूर नहीं हुआ था। राजवल्लभ ही तो सब अनर्थोंकी जड़ है। राजवल्लभ जिस बलसे बलवान् हो रहा है, जबतक उसका दर्प चूर्ण न होगा, तबतक राजवल्लभका आशा-भरोसा न टूटेगा, और तबतक अँगरेज़ सौदागर भी भयभीत न होंगे। घसीटी बेगमका दर्प चूर्ण करना ही होगा।

यह समझकर, सिराजुद्दौलाने मौसी घसीटी बेगमको अपने प्रासादमें, अपनी माता और मातामहीके पास, ले आनेका

सङ्कल्प किया। उसने समझ लिया, कि घसीटी एक तो पतिहीना है, सिर पर कोई है नहीं, और तिस पर चरित्रहीन है। इस अवस्थामें, स्वाधीन भावसे उसके अकेली मोती झीलके प्रासादमें रहनेसे, अन्तमें उसके अमङ्गलकी आशङ्का है। और सम्भव है कि राजवल्लभके परामर्शसे, सिराजुद्दौलाके साथ शत्रुता करनेमें त्रुटि न कर सके। इसको सोचकर सिराज सबसे पहिले घसीटी बेगमको मोतीझीलसे अन्तःपुरमें लानेके लिये उद्यत हुआ।

परन्तु लावेगा किस प्रकारसे ? यही सोचनेका विषय है। वह जानता था, कि संसार उसके शत्रुओंसे भरा पड़ा है। यह सोचकर उसने मौसीको एक खुशामद भरा हुआ पत्र लिखा। पत्र इस प्रकार था:—

"मौसी !

पुत्रके योग्य होने पर,माताका कर्त्तव्य है,कि वह पुत्र के मतानुसार चले। सोचने पर मालूम होगा, कि आपका सब भार इस समय मेरे ही ऊपर है। मैं आपको अपनी जननीसे भिन्न नहीं समझता हूँ। मेरी इच्छा है, कि आप अकेली मोती झीलके प्रासादमें और न रहें, अपनी जननी और भगिनी के साथ इकट्ठी यहाँ आकर रहें। जहाँ आप हैं, वहाँ आपके ऊपर कोई नहीं है। सुतरां, वहाँ रहना आपके लिये किसी प्रकार उचित नहीं है। मैं आपके यहाँ आनेके लिये पालकी और आदमी भेजता हूँ। आप किसी प्रकारकी द्विविधा न

करके, मुझको कोई दूसरा न समझ कर, यहाँ आ जायँ; तो मैं इतना सुखी होऊँगा, कि जिसको पत्रमें लिखनेकी मुझमें क्षमता नहीं है।

मैं पैग़म्बरकी शपथ खाकर कहता हूँ, कि आप यदि इस जगह आकर मेरे अन्तःपुरमें अपनी जननी और भगिनीके साथ रहें; तो मैं सदैवके लिये आपका दासानुदास होकर रहूँगा और उस कामके करने में प्राणपण से उद्यत रहूँगा, जिससे आपके मान-सम्भ्रम में किसी प्रकार की त्रुटि न होने पावेगी।

आपका अनुगतदास

"सिराजुद्दौला"

यह पत्र लिखकर, सिराजुद्दौला ने घसीटी बेगम को बड़े समारोह और सम्मान से लाने के लिये पालकी भेजी।

किन्तु सिराज की यह चेष्टा वृथा हुई। घसीटी बेगम ने उसके प्रस्ताव को ग्राह्य न किया और लोगों को बुरा भला कह कर उलटा लौटा दिया।

चरित्र-दोष एक बार होजाने पर, उसका संशोधन होना दुःसाध्य होता है। घसीटी बेगम के चरित्र में जो दोष पैदा हो गया, वह दोष, वह अभ्यास, वह किसी तरह न छोड़ सकी। वरं पतिहीना और ऊपरवाले के न होनेसे एवं मोतीझीलके प्रासाद में अकेली रहने से उसको मनमानी करने में और भी सुभीता हो गया। उसने मीर नज़रअली नामक व्यक्तिको

अपना प्रणयपात्र बनाया। उसके मोतीझीलके प्रासादके न छोड़नेका यह भी एक विशेष कारण था।

इसके अतिरिक्त एक और भी प्रधान कारण था। राजा राजवल्लभ घसीटी का दीवान था। उसी के कहने से वह उठती बैठती थी। राजवल्लभ जो कुछ कहता था, वही करती थी। राजवल्लभ का आशा-भरोसा भी घसीटी ही थी। यदि घसीटी बेगम चली जावे तो सभी चक्र टूट जावें, सभी आशा जाती रहे, स्वार्थसिद्ध की राह ही बन्द हो जावे; इसी कारण राजवल्लभ उसको लगातार ऐसे ही कुपरामर्श देने लगा जिससे वह मोतीझीलका प्रासाद न छोड़े। घसीटी भी,स्वार्थपर राजवल्लभ की कुमन्त्रणासे और अपने प्रणयभाजन मीर नज़रअली के प्रेम के भुलावे में,मोतीझील छोड़कर जानेमें सम्मत न हुई। उसने सेना संग्रह करके, ऐसा आदेश देदिया कि सिराजुद्दौला मोतीझील पर आक्रमण न करसके। राजवल्लभ और मीर नज़रअली दोनों ही ने अपने अपने स्वार्थसाधन के लिये, प्रबल उत्साह से, सिराजुद्दौला को बाधा देनेके लिये मोतीझील के सिंहद्वार पर सेना इकट्ठी करली।

सिराजुद्दौला मौसी को अपने अन्तःपुरमें लाने के लिये यथासाध्य चेष्टा करने पर भी जब कृतकार्य न होसका,जब उसने देखा कि मौसी राजा राजवल्लभ की मन्त्रणा से और मीर नज़रअली के उत्साह से उसको बाधा देनेके लिये, उसके साथ युद्ध करने के लिये, बद्धपरिकर होकर मोतीझील के द्वारपर

सेना एकत्र कर रही है; तो मौसीके मान-रक्षा की ओर परवाह न करके, उसका गर्व खर्व करने, राजवल्लभ के सभी चक्रान्त चूर्ण करने, उसकी स्वार्थसिद्धि को सदैव के लिये रोकने और मीर नज़रअलीको उचित शास्ति देनेके लिये, सेनाध्यक्ष दोस्त मुहम्मदख़ाँ और रहीमख़ाँ को सेना सज्जित मोतीझील पर आक्रमण करने का आदेश दिया और कह दिया कि घसीटी बेगमको उसके धन-सम्पत्ति के साथ बन्दी करके राज-अन्तःपुर में लाना होगा।

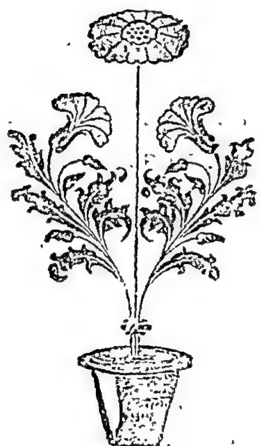
विपक्षवालोंकी सभी चेष्टाएँ,सभी आशाएं,सभी उद्यम व्यर्थ हुए। सिराजुद्दौला को बाधा देनेके लिये राजा राजवल्लभ और मीर नज़रअली ने जो सेना इकट्ठी की थी, उसमें से अधिकांश नवाब की विपुलवाहिनी को युद्ध के लिये बढ़ती हुई देखकर, प्राण-भय से भागगये। जो दस पाँच शेष रहगये,उन्होंने अस्त्र-शस्त्र छोड़ दिये। नवाब सिराजुद्दौलाकी सेना ने आकर मोती झील पर अधिकार कर लिया।

युद्ध करना तो बड़ी कठिन बात है। प्राण भी बचजावें तो बहुत है। मीर नज़रअली प्राणों के भय से सिराज-सेनापति के शरणागत हुआ और बहुतसी भेंट देकर छुट्टी पाई।

बिना युद्ध के, बिना रक्तपात के, मोतीझील अधिकार में आगई और घसीटी बेगम की सब धन-सम्पत्ति भी सिराजुद्दौलाके हाथमें आगई। परन्तु सिराजुद्दौला ने घसीटी बेगम की शत्रुता की सब बातें भूलकर, उसको बड़े सम्मान से राज-

अन्तःपुर में जननी और मातामहीके पास स्थान दिया; क्योंकि वह जानता था कि विना सम्मान किये काम चलना कठिन है।

सब शेष होगया। राजवल्लभ का आशा-भरोसा एक दम निर्मूल होगया। जिस आशा के धोखेमें मुग्ध होकर वह अभी तक सिराजुद्दौला को सिंहासनच्युत करने का स्वप्न देख रहा था, वह आशाका भुलावा टूटगया। सब कौशल, सब चेष्टा व्यर्थ हुई; किन्तु कुचक्री की कुटिलता दूर न हुई।



छठा परिच्छेद ।



अँगरेज़ोंने जब देखा कि, बहुत शत्रुता बढ़ाना अब अच्छा नहीं है तब नवाब-दरबारमें एक दूत भेजा ।

नवाब सिराजुद्दौला अँगरेज़ोंसे अतिशय असन्तुष्ट और क्रुद्ध था । अब अँगरेज़ोंके पक्षके वकीलको उपस्थित देखकर बोला, "मैं तुम्हारे व्यवहारसे बहुत ही विरक्त हो गया हूँ । तुमने बारम्बार हमारे आदेशका तिरस्कार किया है और मेरे दूतको यथेष्ट अवमानना और लाञ्छना करके निकाल दिया है, इस सबका क्या कारण है ?"

अँगरेज़ सौदागरके प्रतिनिधि वकील कहने लगे, "हुज़ूर ! आप विचारपति हैं । विचार करके देखिये, अँगरेज़ लोग आपके राज्यमें वास करके आपके दूतको अपमान करके निकाल दें, यह बात नितान्त ही असम्भव है ।"

सिराज—तुम क्या कहना चाहते हो, क्या हमारे दूतको तुमने अपमान करके निकाल नहीं दिया है ?

वकील—आप धर्मावतार हैं, दण्ड-मुण्डके कर्त्ता हैं, आपके सामने मिथ्या बात किस प्रकार कह सकता हूँ ? एक

दूत कलकत्ता अवश्य गया था, किन्तु यह कैसे समझमें आता कि नवाब बहादुरका दूत एक सामान्य फेरीवाले के रूपमें जायगा?

सिराज—क्यों क्या दूतने अपना परिचय नहीं दिया था? और क्या हमारा पत्र नहीं दिया था?

वकील—पत्र दिया था। किन्तु कौन्सिलके लोगोंको उसका विश्वास नहीं हुआ।

सिराज—परिचय होने पर भी विश्वास नहीं हुआ, यह क्यों?

वकील—अमीचन्द हम लोगोंका परम शत्रु है। आपके दूतको उसीके साथमें आते देखकर हम लोगोंने यही समझा कि यह केवल अमीचन्दकी धूर्त्तता है। कौशल और भय दिखाकर वह कार्य्य सिद्ध करना चाहता है। यदि आपका दूत अमीचन्दके यहां न ठहर कर और फेरीवालेके रूपमें न जाकर, राजदूत बनकर जाता तो उसका इतना आदर होता जिसका ठिकाना नहीं।

सिराज—मैं समझ गया। परन्तु मैंने पेरिङ्ग दुर्ग तोड़ने के लिये और राजवल्लभके पुत्रको मेरे पास भेज देनेको लिखा था, उसका क्या हुआ?

वकील—कलकत्तेके सभ्यगण इस विषयमें निश्चिन्त नहीं हैं। उन्होंने इँगलेण्डके कर्त्तागणोंको सम्वाद भेज दिया है, अब उसके उत्तरकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।

सिराज—कब तक उत्तर आवेगा ?

वकील—सम्भव है, कि दो ही चार दिनोंमें आ जावे।

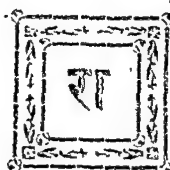
सिराज—ईस्ट इण्डिया कम्पनी यदि शीघ्र ही उसका कोई न्दोवस्त न करेगी; तो पेरिङ्ग दुर्ग तोड़ने, और साथ ही तुम्हारे वाणिज्यके बन्द करनेमें मैं कभी निरस्त न रहूँगा।

वकील—नवाब बहादुरको इसके लिये और कष्ट स्वीकार न करना होगा, शीघ्र ही इसकी मीमांसा हो जायगी।

यह सुनकर सिराज चुप रहने पर बाध्य हो गया।



सातवाँ परिच्छेद ।



जाका राजत्व केवल सुनने ही का है। वास्तविक सुख-शान्ति और स्वच्छन्दता इसमें कुछ भी नहीं है। इसमें यदि है तो दारुण दुश्चिन्ता, उद्वेग, भय, स्वार्थपरताका भीषण संघर्ष, मारकाट, रक्तपात, लोक-क्षय इत्यादि।

एक गृहशत्रुको दमन करते न करते, निश्चिन्त होनेका अवसर पाया भी न था, कि सिराजुद्दौला एक दूसरे गृहशत्रु को दमन करनेके लिये व्यस्त हो गया। पुर्नियाका अधिपति, शौकतजङ्ग, इस समय सिराजके सिंहासनका प्रतियोगी हो गया। इसलिये उसे अपनी सेना सहित पुर्नियाकी ओर जाना पड़ा।

तरलमति सिराजुद्दौला अभी पुर्नियाकी ओर को चला भी नहीं था, कि फिर अँगरेज़ोंके उत्तर आनेकी बात याद आ गई। अपना पहिला आदेश याद करके, उसने कल-कत्तेको एक पत्र लिखा। उस पत्रका भाव इस प्रकार है:—

"तुमको कई बार बागबाज़ारके पेरिङ्ग दुर्गके तोड़नेके लिये लिखा जा चुका है; परन्तु न तो तुम किसी तरह उसके

अनुसार करने पर तैयार हुए हो और न कृष्णवल्लभको अभी तक हमारे पास पहुँचाया है। अब मैं तुम्हारे भुलावेमें नहीं आऊँगा। इस समय मैं युद्ध-यात्रा पर जा रहा हूँ, नहीं तो आप ही आकर उसको तुड़वा देता। अब भी कहता हूँ, कि यदि अपना मङ्गल चाहो, यदि विवाद-सम्वादकी इच्छा न करते हो; तो पत्रको देखते ही पेरिङ्ग दुर्गका तोड़ना आरम्भ कर दो और कृष्णवल्लभको मुर्शिदाबाद भिजवा दो। यदि देर करोगे तो निश्चय जानना, कि दुर्गको समूल नष्ट करके ड्रेक साहबको भागीरथीमें डुबा दूँगा।

नवाब सिराजुद्दौला।"

अँगरेजोंको यह पत्र लिखकर सिराजुद्दौला युद्धके लिये चल दिया।

यह दृढ़ताव्यञ्जक भय दिखानेवाला पत्र पहुँचने पर, अँगरेज़ लोग और चुप न रह सके। पत्रका उत्तर देना ही होगा। वह लोग भयभीत होकर पत्रका उत्तर देने पर बाध्य हुए। ड्रेक साहबने पत्रका उत्तर दे दिया। वह इस प्रकार है:—

"नवाब बहादुरका आदेश उल्लङ्घन करना हमारी शक्तिके बाहर है। सात समुद्र, तेरह नदी पार करके, इतनी दूर विदेशमें आकर, युद्ध करनेकी इच्छा हमारी कदापि नहीं है। अकेले फरासीसियोंसे युद्ध होनेकी आशङ्का हमको सदैव लगी रहती है, तिसके ऊपर आपसे युद्ध छेड़ कर हम और अनर्थ अपने सिर पर नहीं ले सकते हैं! युद्ध करनेसे सिवाय क्षतिके

और क्या लाभ हो सकता है? हम लोग आपके अवाध्य नहीं हैं। हमारे शत्रु-पक्षके लोगोंकी बातें सुनकर आप भले ही समझ लें कि हम लोग आपके अवाध्य हैं; परन्तु वास्तवमें यह बात नहीं है। हम लोग इस तरहका कोई काम नहीं करते हैं, जिससे हमारी अवाध्यता प्रकाशित हो। आपने जो कुछ सुना है, वह किसी शत्रुकी कही हुई बात है। हमने कलकत्ते नगरकी चहारदीवारी नहीं बनाई है। परन्तु हमारे प्रबल शत्रु फ़रासीसियोंकी ओरसे शीघ्र ही युद्ध छिड़नेकी आशङ्का है; इसीलिये गङ्गाकी ओर तोप चलानेके जो स्थान टूट गये थे, केवल उन्हीं को फिरसे मरम्मत किया है, केवल इतना ही काम किया गया है। जहाँ पर ऐसी आशङ्का है, वहाँ पर सतर्क न रहनेसे किस प्रकार काम चल सकता है? इति।

आपका अनुगत और आश्रित,
ड्रेक
कलकत्तेका गवर्नर।"

सिराजुद्दौला को, राजमहलमें पहुँच कर, गवर्नर ड्रेक साहबका यह पत्र मिला। पत्र पढ़ते ही वह क्रोधके मारे आग-बबूला हो गया, पैरसे कुचले हुए विषधर सर्पकी तरह अपने स्थानसे उठ बैठा और बड़े ज़ोरसे चिल्लाकर बोला,—"क्या! बारम्बार हमारी बातका उल्लङ्घन! बारम्बार हमारे साथ चातुरी! अँगरेज़ लोग क्या नहीं जानते हैं, कि वह लोग यह कौशल किसके साथ कर रहे हैं? और नहीं! अब मैं अपेक्षा

नहीं कर सकता हूँ। इस बार मैं इन लोगोंको उचित शिक्षा दूँगा, इस बार उनकी वाणिज्यकी आशाको अथाह जलमें डुबा दूँगा, अब उनको किसी तरह क्षमा न करूँगा!"

सिराजकी भयानक मूर्त्ति हो गई। यह हाल देखकर मित्र, नौकर, सेनापति और सैनिक सभी स्तम्भित हो गये। किसीका भी इतना साहस न हुआ, कि उसके सामने जाकर उसको ठण्डा करता और सान्त्वना-वाक्य सुनाता। सभी निर्व्वाक् और भयभीत थे।

सिराजुद्दौला और विलम्ब न सह सका। वह शहमतु शौकतजङ्गके दमन करनेको जारहा था, परन्तु इस कामको उसने छोड़ दिया। पहिले अँगरेज़ोंको दमन करना होगा। उसने पुर्नियाकी यात्रा न करके सेनापतिको आदेश दिया, कि सैन्य सामन्त, गोला-गोली, तोप-बन्दूक, हाथी घोड़े इत्यादि जो कुछ हैं, सबको मुर्शिदाबाद भेज दो, तनिक भी देर न होने पावे।

यह सुनते ही गड़बड़ पड़ गई। हाथीके सवार हाथियों पर, घोड़ोंके सवार घोड़ों पर, पैदल अपनी अपनी बन्दूकें कन्धों पर रक्खे हुए पैदल चलने लगे। बड़े बड़े बैल तोपोंको खींचने लगे। गोला-गोली-बारूद छकड़ों पर लदकर चली। ऊँटों पर लदकर बड़े बड़े विराट् खेमे चल दिये। महा कल-रवसे दिग्मण्डल गूँज उठा। सिराजकी विपुल वाहिनी मुर्शिदाबादकी ओर चली। सभीने समझ लिया, कि अब अँगरेज़ सौदागरोंकी ख़ैर नहीं है।

आठवाँ परिच्छेद।

नवाब-सेनाने क़ासिमबाज़ार में आकर अपने शिविर स्थापन किये। उमरवेग जमादार तीन हज़ार सेना लेकर अँगरेज़ोंके क़िलेके सामनेके मैदानमें पहुँचा। सहसा इस प्रकार सेनाको जमा होते देखकर किसीने किसीसे कुछ भी न पूछा और किसी के मनमें कोई सन्देह भी न हुआ। सभी जानते थे, कि नवाबकी सेना बीच-बीचमें आकर इसी तरह शिविर स्थापन किया करती है। यह भी उसी तरह है।

सन् १७५६ ईसवीकी २४वीं मईको सोमवार था, वह दिन इसी तरह कट गया। किन्तु २५वीं मई मङ्गलवारको, सूर्योदय के साथ ही साथ, दोसौ अश्वारोही उमरवेगके शिविरमें आकर उपस्थित हुए। इसके बाद एक पहरके बीचमें और दो तीन सौ बरकन्दाज़ आ उपस्थित हुए। साथ ही साथ कई एक रण-निपुण हाथी भी दिखलाई पड़े। जो अँगरेज़ क़ासिमबाज़ार में थे, इस तरह पर सेना एकत्रित होती देखकर, उनके चित्तमें एक प्रकारका आतङ्क उत्पन्न हुआ। उन्होंने अनुमानसे जान

लिया, कि यह गति कुछ भली नहीं है। इतने दिनोंके पीछे नवाब हम लोगोंके सत्यानाश पर उतारू हुए हैं।

बाहर नवाब-सेना चुपचाप पड़ी हुई है। भीतर अँगरेज़ोंके दुर्गमें गड़बड़ मची हुई है। सभा बैठी। सभामें साइक्स, वारेन हेस्टिङ्गस, डाक्टर फ़ोर्थ, एच वाट्स, वाट्सन, कलेट, विलियम वाट्स, चेम्बर्स इत्यादि एकट्ठे हुए। बहुत कुछ वाद-विवाद और तर्क-वितर्कके बाद स्थिर हुआ, कि नवाब अवश्य ही युद्धकी इच्छासे सेना इकट्ठी कर रहा है। अब और निश्चिन्त रहना ठीक नहीं है। वह लोग भी युद्धके लिये तय्यार होने लगे।

अँगरेज़ोंका क़ासिमबाज़ारका क़िला वर्त्तमान क़िलेकी तरह प्रकाण्ड नहीं था। गठन-प्रणाली भी ऐसी नहीं थी। परन्तु उस समयका वह क़िला, क़िला ही कहलाता था और उसके द्वारा शत्रुका आक्रमण भी बहुत कुछ रोका जा सकता था। क़िला ठीक चौकोन नहीं था, परन्तु देखनेसे चौकोन ही ज्ञात होता था। उसके चारों ओर अच्छी दृढ़ चहार-दीवारी बनी हुई थी। चहारदीवारीमें चार बुर्ज थे। प्रत्येक बुर्जपर दस-दस तोपें थीं। चहार-दीवारीके ऊपर भी गङ्गाकी तरफ़ बाईस तोपें थीं। सिंहद्वारके दोनों किनारों पर भी बड़ी बड़ी दो तोपें थीं। इनके अतिरिक्त, दुर्गके भीतर भी और बहुत सी तोपें यथाक्रम लगी हुई थीं। वह सलामीके

काममें आया करती थीं, परन्तु युद्धके समय वह बहुत काम दे सकती थीं।

इस क़िलेमें, उस समय ३५ गोरे सिपाही और ३५ हिन्दुस्तानी सिपाही, कुल मिलाकर ७० सैनिक थे। विल्स वाट्स साहबने देखा, कि इतनी थोड़ी सेना लेकर नवाबकी सेनासे युद्ध करना असम्भव है। परन्तु क्या किया जाय, इतनी ही सेना लेकर एनसाइना इलियट साहब युद्धके लिये प्रस्तुत होने लगे। गोला-गोली-बारूद गोदामसे निकल निकल कर युद्धस्थलमें आने लगी। तोपें युद्धके योग्य हैं कि नहीं, इसकी भी परीक्षा होने लगी। वाट्स साहब दिन-रात परिश्रम करके खानेकी सामग्री इकट्ठी करने लगे। क़िलेके भीतर युद्धकी तैयारी होने लगी।

२४-२५-२६ मई, तीन दिन कट गये। सत्ताईसवींकी रात भी कट गई, तथापि नवाब-सेना युद्धके लिये फिर भी तय्यार नहीं हुई। उसने केवल शिविर स्थापन कर लिये, परन्तु युद्धका कोई उद्योग न था।

नवाब-सेनाको इस प्रकार निश्चेष्ट देखकर, अँगरेज़ोंकी उत्कण्ठाकी सीमा न रही। अनेक तर्क-वितर्क करने पर भी इसका कारण न समझ सके। अन्तमें यह जाननेके लिये कि मामला क्या है, डाक्टर फ़ोर्थको उमरबेग जमादारके पास भेजा।

कुछ आज ही नहीं, अँगरेज़ लोग सदैवसे ही साहसी, अध्य-

वसायी, परिश्रमी और कार्य्यकुशल हैं। जो चित्तमें आता है उसको करके ही छोड़ते हैं। जहाँ बुद्धिकी पहुँच नहीं है, वहाँ भी उनकी दृष्टि पहुँच जाती है। उनको प्राणोंकी ममता नहीं है, शोक-दुःख भी उनको कष्ट नहीं पहुँचाता है। किसी काममें पीछे हटना भी यह नहीं जानते हैं। इसी कारण, आज यह लोग शीर्षस्थान पर हैं और हमारे राजराजेश्वर हैं।

डाक्टर फ़ोर्थ साहस करके नवाबके सेना-निवासमें घुस पड़े। उमरबेग जमादारसे मिलकर पूछने लगे, "तुम्हारे इस प्रकार सेना जमा करनेका क्या कारण है?"

उमरबेगने कहा,—"वाट्स साहबको पकड़ कर ले जाना होगा, इसीलिये नवाब बहादुरने यह सेना भेजी है।"

एक आशङ्का दूर हुई, दूसरी आशङ्काने उसका स्थान ले लिया। उमरबेगकी बात सुनकर डाक्टर फ़ोर्थको इतना विस्मय हुआ, जिसका कुछ ठिकाना नहीं। पूछा,—"वाट्स साहबको किस लिये पकड़ ले जाओगे?"

उमरबेग—अँगरेज़ सौदागर बड़े स्वेच्छाचारी हैं। यह लोग नवाब बहादुरको ग्राह्य नहीं करते हैं, उनकी कोई बात नहीं सुनते हैं, जैसा चाहते हैं वैसा करते हैं, और अपनी स्वाधीनताका यथेष्ट परिचय देते हैं। वाट्स साहबको मुचलकानामा लिखना होगा, कि जिससे भविष्यत्‌में इस प्रकारके काम न हों।"

डॉक्टर फ़ोर्थने समझ लिया कि सहज व्यापार नहीं है।

बोले, "यदि वाट्स साहब इस मुचलकेनामेके लिखनेमें सम्मत न हों, वह पकड़ाई न देवें तो क्या होगा?"

उमरवेग जमादारने गम्भीर भावसे उत्तर दिया, "तो फिर नवाब बहादुरने इतनी सेना क्यों भेजी है? यदि सहजमें न जायँगे, तो बलपूर्व्वक ले जाये जायँगे। नवाब सेनाके सामने अँगरेज़ सौदागर कितनी देर ठहर सकते हैं?"

डाक्टर फोर्थ जो बात जाननेको आये थे सो मालूम हो गई। और कुछ न कहकर, नवाबके सेना-निवाससे विदा हुए।

हाल जानकर अँगरेज़ सौदागरोंकी उत्कण्ठा और भय कुछ दूर हुआ; किन्तु सहसा नवाब-दरबारमें हाज़िर होनेका साहस किसीको भी न हुआ। तब वाट्स साहबने अपनी विपद्के प्रधान सहायक जगत्सेठ महतावचन्द्से मिलकर यह सब बातें पूछीं कि, सिराजुद्दौलाका अभिप्राय क्या है? वह क्या चाहता है? क्या करनेसे उसका क्रोध शान्त होगा? और हमने तो कोई अपराध नहीं किया है वह क्या अपराध लगाता है?

जगत्सेठ महतावचन्द, नवाब सिराजुद्दौलाके साथ बात-चीतमें, उसके आकार-प्रकार और भावभङ्गीसे जो कुछ समझ सके थे उससे उनको यही मालूम हुआ, कि अँगरेज़ोंका इस बार भला नहीं है। सेठजी ने कहा, "इस बार सिराजुद्दौला पेरिङ्ग दुर्गको बिना तोड़े शान्त न होगा, और मुचलकानामा जब तक न लिखा लेगा तब तक युद्ध करनेसे न छूटेगा। रुपये भेंट देकर अबकी बार काम न चलेगा। ऐसा

ख्याल भी मत करना। अब उसके ऊपर कोई रोकनेवाला नहीं है। अलीवर्दी बहुत कुछ समझाते बुझाते रहते थे, अब उसको समझाना बड़ा कठिन काम है। इस समय तुम्हारी क्षमता खर्व न करके, और तुमसे कोई विशेष शर्त्त न कराके, नवाब बहादुर किसी प्रकार निरस्त न होंगे।"

यह सुनकर वाट्स साहब कांप गये। उन्होंने समझा था कि, क़ासिमबाज़ारकी कोठी का आक्रमण सिराजुद्दौलाका जुर्माना लेनेका कौशलमात्र है; किन्तु अब समझे कि, उनकी यह भूल थी।

वाट्स साहबने निरुपाय होकर कलकत्तेके अँगरेज़ोंके पास यह सम्वाद भेजा। उन्होंने भी बहुत कुछ परामर्श करनेके बाद वाट्स साहबसे कहला भेजा, "सिराजुद्दौला यदि जुर्मानेसे तुष्ट न होवे,तो जिस प्रकार राज़ी हो वही करना चाहिये।"

कलकत्तेकी अँगरेज़-सभाका आदेश पाकर, वाट्स साहब साहस करके नवाब-दरबारमें गये।

सिराजुद्दौला उनके ऊपर बड़ा ही क्रुद्ध होरहा था। वाट्स साहबको देखते ही, क्रोधके मारे कांपता हुआ, लाल लाल नेत्रोंसे, बड़े कर्कशस्वरमें बोला—"मैंने समझा था, कि अँगरेज़ लोग सरल स्वभावके हैं, लड़ाई झगड़ा कुछ नहीं जानते हैं; परन्तु अब मैं देखता हूँ, कि जो कुछ मैंने समझा वह मेरी बड़ी भूल थी। उपयुक्त दण्ड-विधान जबतक तुमको न मिलेगा, तबतक तुम्हारा यह उद्धत स्वभाव न सुधरेगा।"

सिराजुद्दौलाकी उग्र मूर्त्ति देखकर वाट्स साहबका गला सूख गया, बात कहनेका साहस न हुआ। वह समझने लगे, कि अब कुछ देरमें सिराजुद्दौला उनके प्राण लेनेका हुक्म देता है।

पात्र, मित्र, सभासद सभी स्तम्भित थे। किसीके मुखसे एक बात भी न निकलती थी। सभी समझ रहे थे, कि निश्चय ही आज वाट्स साहबकी जीवन-लीला शेष हुई।

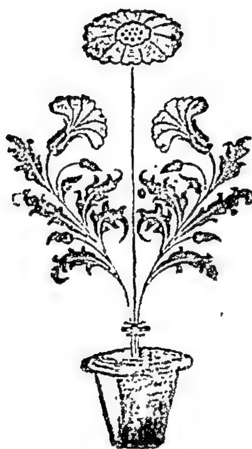
वाट्स साहबको भयभीत और नीरव देखकर सिराज बोला, "अबकी बार मैं तुमको सहज न छोड़ूँगा। यदि तुम अबसे मेरे राज्यमें रहकर वाणिज्य करना चाहो, तो एक मुचलका-नामा लिख दो; नहीं तो तुमको क़ैदमें रहना होगा।"

वाट्स साहबने सोचा कि जब हमको किसी से लड़ना झगड़ना नहीं है, तो मुचलकानामा लिखनेमें क्या हर्ज है। उन्होंने हाथ जोड़कर कहा, "किस प्रकारका मुचलकानामा लिखना होगा, आज्ञा कीजिये।"

सिराज—बागबाज़ारका पेरिङ्ग दुर्ग जड़से खोदकर फेंक देना होगा। जो विश्वासघातक कर्मचारी राजदण्डके भयसे भागकर कलकत्तेमें छिपे हुए हैं उनको मेरे पास हाज़िर करना होगा। ईस्ट इण्डिया कम्पनीने बङ्गाल देशमें बिना कर दिये हुए वाणिज्य करनेकी सनद दिल्लीके बादशाहसे पाई है, उस-की दुहाई देकर यूरोपके और-और लोग बिना कर दिये वाणिज्य करके राजभाण्डारको क्षति पहुंचा चुके हैं वह

पूरी करनी होगी और कलकत्तेके जमीन्दार हालवेल साहब देशी प्रजापर जो अत्याचार कर रहे हैं वह और न कर सकेंगे ।

इन शर्तों पर मुचलकानामा लिखा गया । वाट्स साहबने, बिना कुछ कहे सुने, उसपर दस्तखत कर दिये । इस समय उनको इस प्रकार छुटकारा मिला ।



नवाँ परिच्छेद ।

मुचलकेनामे पर दस्तखत तो भय दिखाकर करा लिये ; परन्तु जो बातें उसने लिखा ली थीं, वह हो किस तरह सकती थीं ? कलकत्तेके अँगरेज़ोंने उस मुचलकेनामेके पालन करनेमें असम्मति प्रकाश की। यदि वह इस पर चलते, तो उनको वाणिज्य करना भी कठिन हो जाता।

यह सम्वाद पाकर नवाब सिराजुद्दौला अधीर हो गया और मुचलकेनामेकी शर्तोंके अनुसार काम करानेके लिये वह युद्ध करनेको उद्यत हुआ और कासिमबाज़ारके दुर्गको अधिकारमें लेकर, वाट्स साहबको पकड़ लानेके लिये सेना भेजी।

आदेश पाते ही सेना क़ासिमबाज़ारकी ओर चली। अश्वारोही, गजारोही, पैदल, दल के दल छूटे। घोड़ोंकी हिनहिनाहट, हाथियोंकी चिंघाड़, तोपोंकी खड़खड़ाहटसे दिग्मण्डल काँपने लगा। नवाब-सेनाने आकर कासिमबाज़ारके दुर्गको घेर लिया।

उस समय तक, अँगरेज़ लोग भारतवर्षमें ऐसे दृढ़ नहीं हो

पाये थे, कि सिराजुद्दौला सरीखे नृशंस नवावसे युद्ध कर सकती। इस कारण विना लड़ाई हुए ही सिराजुद्दौलाकी फ़ौज वाट्स साहब और चेम्बर्स साहबको पकड़कर ले गई। सिराजने सोचा था, कि इनको पकड़ ले जानेसे कलकत्तेके सभ्य अँगरेज़ उनके छुड़ानेको आकर कुछ भेंट देंगे; परन्तु उसका यह अनुमान निष्फल हुआ। क्योंकि उनके छुड़ानेको कोई नहीं आया। अँगरेज़ जानते थे, कि सिराजुद्दौला रुपये का बड़ा लालची है।

वाट्स साहबकी मेमसाहब नवाबके अन्तःपुरमें आती जाती थीं। पहिले तो उन्होंने कुछ नहीं कहा; परन्तु जब नवाबने कई दिनतक वाट्स साहबको नहीं छोड़ा, तो उक्त मेम साहिबाने बेगमोंसे अपना दुःख प्रकाशित किया। सिराजकी माता अमीना बेगमसे भी कहा। कठोर होनेपर भी रमणीका हृदय मायासे और स्नेह-ममतासे नितान्त ही शून्य नहीं होता है। और यही हाल अमीना का भी था।

चरित्रहीन होनेपर भी, सिराजकी जननी बड़ी दयावती और दूसरेके दुःखसे कातर होनेवाली थी। दूसरेका दुःख देखकर वह पानी-पानी हो जाती थी। पतिके उद्धारके लिये वाट्सकी मेमसाहबाको दुःखी देखकर, अमीना बहुत दुःखी हुई। उसने सान्त्वनायुक्त वाक्योंमें कहा,—"क्यों इतनी कातर होती हो? दुःखी मत होओ, मैं शपथ खाकर कहती हूँ, कि मैं सिराजसे कहकर तुम्हारे पतिको छुड़वा दूँगी।"

यह कहकर अमीना बेगमने सिराजको बुलाया और कहा, "सिराज! मैं एक बात कहती हूँ, क्या तुम मेरा कहना मानोगे?"

सिराज—आज्ञा कीजिये। क्या करना होगा?

अमीना—मेरे सामने शपथ खाओ, तब मैं कहूँगी।

सिराजद्दौलाने कुछ हँसकर कहा, "आप इतनी आशङ्का क्यों करती हैं? आप कहिये, मैंने आपकी बात कब उल्लङ्घन की है?

इतनेमें सिराजकी नानी भी आ गई और बोली, "सिराज! क्या तुम कासिमबाज़ारकी कोठीसे दो अँगरेज़ों को पकड़ लाये हो?

सिराज—यह बात आपने कहाँ सुनी?

नानी—वाट्स साहबकी मेमने कहा है।

सिराज—वह आपको कहाँ मिली?

नानी—क्यों, वह तो हमारे यहाँ प्रति दिन आती है उसका दुःख देखा नहीं जाता है।

सिराज—वह मेम अन्तःपुरमें कैसे आती है?

नानी—वह तुम्हारी माताकी सखी है। अहा! वह बड़ी सरल प्रकृति की स्त्री है। वास्तवमें उसका दुःख देखनेसे चित्त बड़ा दुःखी होता है।

अमीना बेगमने कहा, "सिराज! मेरे अनुरोधसे एक काम तुमको करना होगा। मेरी इच्छा है, कि तुम वाट्स साहबको छोड़ दो।"

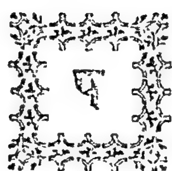
यह सुनते ही सिराजकी आँखें रक्तवर्ण हो गईं । उसने कहा, "अब मैं समझा कि वाट्स साहबकी मेमने आपलोगों-को फुसलाया है । पर अँगरेज़ लोग छोड़ने-योग्य नहीं हैं । यह मुझको बड़ा क्लेश पहुँचा रहे हैं । मेरे राज्यको यह लोग बड़ी हानि पहुँचाते हैं । मैं अपनी हानि पूरी किये बिना न छोड़ूँगा ।

यह सुनकर अमीनाने कहा,"यह मैं जानती हूँ, कि तुमने राज्यके मङ्गलके लिये ही उनको बन्दी किया है ; परन्तु मैंने वाट्सकी मेमके आगे शपथ खाई है, कि मैं उसके स्वामीको छुड़वा दूँगी । सिराज ! मेरी शपथ रक्खो !"

सिराजुद्दौलाको क्रोध तो बहुत आया । परन्तु उसने सोचा कि जिस मतलबके लिये मैंने उन दोनों अँगरेज़ोंको बन्दी किया था, सो मतलब तो सिद्ध न हुआ । अब माताका अनुरोध ही क्यों न रक्खूँ ? यह सोचकर उसने दोनों अँगरेज़ों को छोड़ दिया ।



दसवाँ परिच्छेद।


रन्तु सिराजुद्दौलाकी क्रोधाग्नि इनको छोड़ देनेसे और भी बढ़ गई। उसने मन्त्रियोंको बुलाकर कहा,—"देखो, मैंने अपनी माताके कहनेसे वाट्स और वैम्बर्सको छोड़ दिया; परन्तु जो मेरी इच्छा थी वह तो कुछ भी न हुई। मैं उन्हें अर्ध-दण्डसे दण्डित करना चाहता था, वह भी न हो सका। अब मेरी यही इच्छा है कि उचित शास्ति देकर ही इन लोगोंको दबाऊँ। मैं आप ही वहाँ जाकर, इनको उचित दण्ड दूँगा।"

सिराजुद्दौलाकी बात सुनते ही नवाब अलीवर्दीके समयके लोग जो राज्यके शुभाकांक्षी थे कहने लगे। पहले जगत्सेठ महतावचन्दने कहा, "राजधानी छोड़कर इस समय युद्ध-यात्रा करना उचित नहीं है। जब तक आप शौकतजङ्गको पराजय न करपावें, तबतक सिंहासन निरापद न होगा, उस समय तक आपको राजधानी छोड़ना उचित नहीं है। विशेष करके अँगरेज़-जाति बड़ी शान्त-स्वभाव है। वह वाणिज्य-व्यवसायसे ही सन्तुष्ट रहती है। इससे बढ़कर और कोई जाति धर्मभीरु नहीं है। यह लोग प्राण देकर भी लोगों का

उपकार करते हैं। इन लोगोंके द्वारा देशको बहुत कुछ कल्याण की सम्भावना है, और हो भी रही है। जो लोग देशका ऐसा कल्याण करनेवाले हैं, उनके विरुद्ध नवाब बहादुरकी युद्ध-यात्रा किसी प्रकार शोभा नहीं पाती है। इसके अतिरिक्त नवाब बहादुरने आपसे कहा भी है, कि अँगरेज़ोंके साथ मित्रभाव रखना चाहिये ; इसीमें राज्यका कल्याण है।"

मानिकचन्द—जो लोग सामान्य वाणिज्य-जीवी हैं, उनको दमन करनेके लिये स्वयं नवाब बहादुरको चढ़ कर जानेकी क्या आवश्यकता है? यदि आप मुझको आज्ञा दें, तो अभी जाकर उन लोगोंको दबा दूँ। मछली मारनेके लिये, तोप चलानेकी क्या आवश्यकता है?

इसी प्रकार सब मन्त्रियोंने सदुपदेश दिये। परन्तु सिराजुद्दौलाको तो अच्छे बुरेका कुछ ज्ञान ही न था, वह तो केवल क्रोधके वशीभूत हो रहा था। उसने स्पष्ट कह दिया कि, "तुम लोग अँगरेज़ोंकी ओर हो गये हो ; इसी कारण उनकी झूठी प्रशंसा किया करते हो। तुम लोग जितना ही उनका पक्ष समर्थन करते हो, उतना ही मैं उन लोगोंको अधिक दण्ड देनेकी इच्छा करता हूँ।"

सभासद और अमात्यवर्गने सोचा था, कि समझाने बुझानेसे यदि नवाब समझ जावें और अँगरेज़ोंको दमन करनेका ख्याल छोड़ देवें तो इस समय राज्यमें कुछ शान्ति रहेगी। परन्तु जब उन लोगोंकी चेष्टा वृथा हुई, और नवाब सिराजुद्दौला किसी

प्रकार सङ्कल्पसे न हटा तो अमात्यवर्ग दुःखित होकर चुप हो गये।

सिराजुद्दौलाने किसीकी कुछ न सुनकर सेनाको तय्यार होनेका आदेश दिया। उसके चित्तमें यह शङ्का उत्पन्न हुई कि जगत्सेठ महतावचन्द, मानिकचन्द और मीर जाफ़र दुश्मनोंसे मिल गये हैं। कहीं ऐसा न हो, कि जब मैं कलकत्ते जाऊँ तो मेरे पीछे यह लोग मेरे सिंहासन पर शौकतजङ्ग को बैठादें, इस डरसे उसने उनको भी अपने साथ चलने की आज्ञादी। केवल एक मोहनलाल के ऊपर भरोसा था, उनको राज्य-रक्षा का भार अर्पण करके अपनी फ़ौज लेकर चलदिया।

नवाब की सेना युद्ध को आ रही है, सुनकर अँगरेज़ लोग भी निश्चिन्त न रहे। उन्होंने भी नगर-रक्षाका जहाँ तक हो सका बन्दोवस्त किया। गवर्नर ड्रेक साहबने और-और कोठियोंमें जो अँगरेज़ थे उनको बुला लिया, परन्तु फिर भी वह लड़ाई के लिये पहिले से तय्यार तो थे ही नहीं। उनके यहाँ साधारण व्यवसाय-वाणिज्यका काम था, उसीसे जो कुछ तय्यारी कर सके वह कर ली।

ग्यारहवाँ परिच्छेद।

किसके ऊपर किस समय कौनसी विपत्ति उपस्थित हो सकती है, यह कौन कह सकता है? यदि पहिले से मालूम हो जाया करता, तो लोग उससे सावधान हो जाया करते।

सिराजुद्दौला को विपुल सैन्य सामन्त साथ लेकर बड़े आडम्बरसे युद्ध-यात्रा करते देखकर, सभी ने समझ लिया कि इस बार कलकत्तेका सत्यानाश हुआ। अब अँगरेज़ लोग सदैवके लिये इस देश से विदा हो जायँगे।

गुप्तचर विभाग के अधिपति राजा रामरायसिंह के मनमें भी यही विश्वास होगया। उनके मित्र उमाचरण ने कलकत्ते में बहुतसा धन लगाकर एक बड़ा भारी प्रासाद बनवाया था। रामरायसिंह ने गुप्तभाव से एक चिट्ठी लिख भेजी। उसमें उनने सावधान रहने और अँगरेज़ोंके विपक्षमें रहकर उनको कष्ट पहुँचाने की बहुतसी बातें लिखीं। परन्तु मङ्गल चाहते अमङ्गल होगया ; अर्थात् पत्र वाहक उमाचरण के पास न पहुँच कर अँगरेज़ोंके हाथ पड़गया।

अँगरेज़ोंने देखा कि अब तो यह कलाकौशल सब ही चलने

लगी, और उमाचरण ऊपर ऊपरसे उनको मित्रता दिखलानेपर भी षड़यन्त्रकारी है, इससे अँगरेज़ोंको भी क्रोध आगया।

अँगरेज़ लोग जिस समय देशमें व्यवसाय-वाणिज्य से अनभिज्ञ थे, बंगाल के सब स्थान भली प्रकार जानते न थे, किसी के साथ जान-पहिचान न थी, बंगाल में कौनसी वस्तु कहाँ उत्पन्न होती है, किस वस्तु का क्या मूल्य है, किसानों और शिल्पियों को किस प्रकार दादनी देकर अटकाना होता है, इन सब बातों की अनभिज्ञता थी, उस समय तक उमाचरण अँगरेज़ों के परम बन्धु थे। परन्तु जब उन लोगों को व्यवसाय के गूढ़ तत्त्व मालूम होगये, तो उमाचरण को इन लोगों से ईर्षा होगई, यह एक स्वाभाविक बात थी। क्योंकि अब उमाचरण को उनसे इतना लाभ होना असम्भव था, जितना पहिले हुआ करता था। षड़यन्त्र रचनेका एक यही कारण मुख्य था।

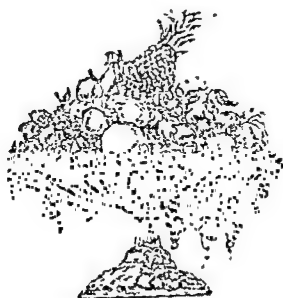
जब अँगरेज़ोंको यह चिट्ठी हाथ लगी, तो उन्होंने आपसमें सलाह करके यही निश्चय किया कि नवाब आरहे हैं। न जाने इस समय उमाचरण क्या क्षति पहुँचावे, इससे यही अच्छा है कि उसको पकड़कर क़ैद कर लिया जाय। यह सोचकर ४-५ अस्त्रधारी सिपाहियों को आज्ञा दी, कि उमाचरण को पकड़ लाओ। उमाचरण अपने बैठकखानेमें बैठे हुए थे, कोई लड़ाई झगड़ा नहीं हुआ। उमाचरण बन्दी होगये।

बारहवाँ परिच्छेद ।

अँगरेज़ों को विश्वास था, कि जब उन्होंने कोई अपराध नहीं किया है, तो सिराजुद्दौला सेना लेकर कभी कलकत्ते न आवेगा। केवल कलकत्ते आनेका भय दिखाकर, रुपया चाह रहा है; परन्तु वहाँ तो कुछ और ही बात थी। उसको तो किसी न किसी बहाने से इन व्यवसाय-वाणिज्य-जीवी लोगोंको देश से निकालना अभीष्ट था। जब सुना, कि सिराजुद्दौला बारानगर में आगया है तो उनको शंका उत्पन्न हुई और उनका वह भ्रम, वह विश्वास, जाता रहा और समझ गये कि जब आप ही नवाब आरहा है तो नगर की रक्षा असम्भव है।

नवाबके आनेसे नगरमें बड़ा कोलाहल मच गया। सभी लोग अपने-अपने स्त्री-पुत्र, परिवार को ले ले कर भागने लगे। अँगरेज़ोंने समझाया भी, कि तुम लोगों को भागने की आवश्यकता नहीं है। यदि नवाब आवेंगे भी तो वह हमसे शत्रुता रखते हैं, तुम लोगोंसे उनको क्या दुःख पहुँचा है जो तुमको मारेंगे। परन्तु सिराजुद्दौला का डर ऐसा न था जो शीघ्र ही उन लोगों के चित्तसे निकल जाता। अस्तु, वह लोग जहाँ जिसके सींग समाये भाग गये।

सिराजुद्दौलाने आते ही अँगरेज़ोंके क़िले पर आक्रमण कर दिया और बिना रक्तपात किये ही दुर्ग विजय कर लिया; क्योंकि अँगरेज़ लोग तो लड़ना चाहते ही न थे और वह यह भी जानते थे कि नवाब अर्थ लोलुप है, रुपया लेकर छोड़ देगा; परन्तु इस नृशंस नवावने, क़िलेमें उस समय जो प्राय: १४३ मनुष्य थे, उन सबको बन्दी करके एक छोटीसी कोठरी में बन्द कर दिया। वह इतिहासमें (Black Hole) काल कोठरीके नामसे प्रसिद्ध है। परन्तु खेदके साथ कहना पड़ता है कि प्रातःकाल जो कोठरी खोली गई, तो केवल २३ मनुष्य उसमें जीवित पाये गये। गरमीके दिन थे, तिसपर उस दिन बड़ी भारी गरमी थी, प्यासके मारे रात भर में ही इतने आदमी मर गये।



तेरहवाँ परिच्छेद।

सिराजुद्दौलाको अँगरेज़ों के ऊपर अकारण ही इतना क्रोध था, कि कलकत्ता अधिकृत करने के बाद उसका नाम तक बदलकर अलोनगर रक्खा। जब अभिप्राय सिद्ध हो गया, तो राजा मानिकचन्द को कलकत्तेका शासनभार अर्पण करके, उनके आधीन तीन हज़ार सेना करदी और दूसरी जुलाई को वहाँ से राजधानीकी ओर को चलदिया।

मोहनलाल को मंत्री के पदपर और मीरमदन को सेनापतिके पदपर अधिष्ठित करने से मीरजाफ़र, रहीमखाँ इत्यादि पुराने राज्य सेवक लोगोंको बुरा मालूम हुआ। उसके ऊपर तुर्रा यह, कि मानिकचन्द को कलकत्तेका शासनभार दिया। जिसका फल यह हुआ, कि इन लोगों के चित्त सिराजुद्दौला से फिर गये।

कलकत्तेसे आने पर थकावट दूर करनेके लिये, सिराजुद्दौला कुछ दिनके लिये हुगली ठहर गया। हुगली के हालेण्डीज़ और फ़रासीसी लोगों ने सुना कि उसने अँगरेज़ों पर ऐसा घोर अत्याचार किया है, तो वह लोग ऐसे भयभीत हुए कि

अपनी भेंटें लेलेकर अभ्यर्थना के लिये दौड़े। हालेण्डोज़ ने साढ़े चार लाख और फ़रासीसियों ने साढ़े तीन लाख रुपये नज़ार किये।

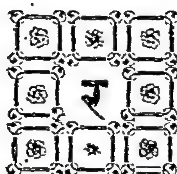
ग्यारह जुलाई को नवाब मुर्शिदाबाद पहुँच गया। समरमें मानों जीतकर आया था,इससे नगरमें बड़े उत्सव मनाये गये। राज-पथपर, स्थान-स्थान पर तोरण बाँधे गये और वे फूल पत्तोंसे सुशोभित किये गये। छोटे बड़े सब ही के द्वारों पर केलेके वृक्ष लगाये गये। समग्र नगर में नृत्यगीत होने लगे। यह सब काम मोहनलालके यत्नसे हुआ था,क्योंकि उनको ही नई पदवी मिली थी।

सिराजुद्दौला चाँदीकी पालकीमें जा रहा था। अश्वारोही, गजारोही और पैदल इत्यादि नङ्गी तलवारें हाथोंमें लिये हुए, उसके आगे आगे जा रहे थे। इस प्रकार नगरकी प्रदक्षिणा करके, राज-प्रासाद पर पहुँच कर, नवाब पालकीसे उतरकर, पात्र मित्र सैन्य सामन्तको विदा करके, जननी और मातामही के पास पहुँचा।



चौदहवा परिच्छेद।





ण-विजयी पुत्र को देखकर अमीना बेगम आनन्द से पुलकित होगई। उसने पुत्रका मुख-चुम्बन करके कहा,—"वत्स! आशीर्वाद करती हूँ कि चिरंजीवी होओ और बार-म्बार इसी प्रकार युद्धमें विजय प्राप्त करके अपने वीरत्व के गौरव को बढ़ाओ।"

अलीवर्दीकी बेगमने कहा,—"सिराज! तुम्हारी विजय की बात सुनकर मैं अति ही प्रसन्न हुई। परन्तु इन २३ मनुष्योंको बन्दी करके क्यों लाये हो? इनको मेरे कहने से छोड़दो।" यह उनको नहीं मालूम था कि यह २३ क्या,उसने तो १२० निर-पराधियों को ऐसी नृशंसता से मारा है, कि जैसा आज तक किसी हिन्दू मुसल्मान राजाने नहीं किया। मातामही के अनुरोधसे उसने तीन अँगरेज़ अर्थात् वाट्स, हालवेल और क्लेटको छोड़ दिया। शेष मातामही से छिपाके मरवा डाले!

धन्य सिराज! धन्य तुम्हारे हृदय की कठोरता! इतना करके सिराजुद्दौला हीरा झीलको लुत्फुन्निसा से मिलने चला।

पन्द्रहवाँ परिच्छेद ।

लुत्फुन्निसा आज, विविध वसन-भूषणोंसे भूषित होकर, पति-दर्शनके लिये व्याकुल हो रही है। कभी घरमें, कभी द्वार पर, समय काट रही है। इसी समय सिराजुद्दौला वहाँ पहुँचा। सती पतिको सम्मुख पाकर, पुलकित चित्तसे हँसती हुई आगे बढ़कर, प्रेमसे उससे लिपट गई और अनिमेष नेत्रोंसे एकटक उसकी ओर देखती रह गई। पतिप्राणाके इस पवित्र प्रेमको देखकर, उस नृशंस अत्याचारी की आँखोंसे भी आँसू निकल पड़े। लुत्फुन्निसा पतिको हृदयमें धारण करके स्वर्ग-सुख भोग करने लगी।

कुछ देर तक इस अवस्थामें रहकर, सिराजुद्दौलाने बड़े प्रेमसे मुख-चुम्बन करके कहा, "प्राणाधिके, लुत्फुन्निसा! तुम एकटक क्या देख रही हो?"

लुत्फुन्निसा मृदु मधुर स्वरसे हँसती हँसती बोली, "प्राणेश्वर! दासी आज आपके भीतर सौन्दर्यकी एक अनुपम शोभा देख रही है, इसीसे आज देखनेकी इच्छा नहीं मिटती है।"

सिराज—लुत्फुन्निसा ! आज क्या बात है, जो तुम्हारी दर्शन-पिपासा शान्त नहीं होती है ?

लुत्फुन्निसा हास्यपूर्ण मुखसे बोली, "स्वामिन् ! केवल आज ही नहीं, पत्नी प्राणपतिको जब देखती है, तभी उसकी यह दशा हो जाती है। विशेष करके जब स्वामी किसी प्रकारके गौरव-भूषणसे भूषित होवे, तब पत्नीकी आँखोंमें पति की और भी सुन्दर मूर्त्ति दिखाई देती है। अँगरेज़ोंसे समरमें विजय लाभ करके, आप उसी अभूतपूर्व शोभासे शोभायमान हो रहे हैं ; इसी कारण नयन भरकर देखने पर भी दासीको आज तृप्ति नहीं होती है।"

प्रणयिनीकी इस बातके सुननेसे सिराजुद्दौलाके सुखकी सीमा न रही। उसने बड़े प्रेमसे लुत्फुन्निसाको हृदयमें धारण करके कहा, "लुत्फुन्निसा प्राणाधिके ! इसी कारण सिराज तुम्हारा इतना अनुरक्त है ! तुम्हारे गुण, तुम्हारे इस अतुल रूपके अनुरूप हैं !"

लुत्फु—नाथ ! दासीमें ऐसे कौन से गुण हैं, जो आप को मुग्ध करते हैं ! परन्तु मुग्ध होनेके कारण आप जो प्रशंसा करते हैं, यह और कुछ नहीं, आपका अनुग्रह है।

सिराज—नहीं लुत्फुन्निसा ! तुम्हारे रूपकी अपेक्षा तुम्हारे गुण ही मुझको अधिक आकृष्ट करते हैं; इसी कारण तुमको नेत्रोंकी ओट करनेसे चित्तको व्यथा होती है। प्राणाधिके ! युद्धयात्रा करनेसे यह जो कई दिन मुझको विरह-



नवाब सिराजुद्दौला और लुत्फुन्निसा बेगम एवं उनकी पंच वर्षीया कन्या।

Narsingh Press, Calcutta.

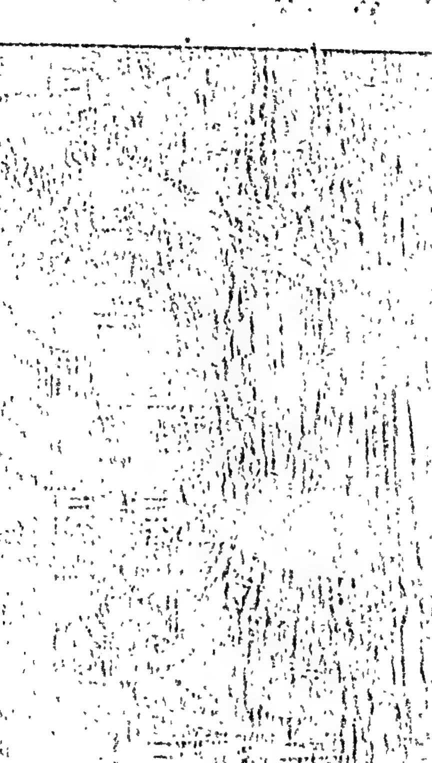
[illegible] है, इसकी महंत [illegible] हो जाय, [illegible] है [illegible] नहीं।

[illegible]! [illegible] दासीके प्राण भी [illegible] [illegible] समय ईश्वरको याद करती थी और रो रो [illegible] [illegible] करती थी. कि [illegible] [illegible] [illegible] नाथ हो. [illegible]-[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] छोड़ कहीं। [illegible] [illegible] दासीकी और कोई कामना नहीं थी। [illegible]! तुम्हारे [illegible] भी वैसा शुद्ध है, और तुम्हारे ही आनन्द [illegible] है।

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] कालिकाको [illegible] [illegible] [illegible] कालिकाको देखकर [illegible] [illegible]। कालिका भी [illegible] हुई [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] पकड़ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] शब्दोंमें [illegible] [illegible], "बाबा! तुम [illegible] [illegible] [illegible] थे?"

[illegible] आभार और [illegible] [illegible] [illegible] "[illegible]" [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] पड़ा। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] करने लगा और [illegible], "[illegible] बेटी! क्या तुम [illegible] याद आती थी?"

[illegible] [illegible] [illegible] नहीं दिया और [illegible] [illegible], "बाबा! क्या [illegible] [illegible] थी?"



यातना सहनी पड़ी है, उसको प्रकृत विरही ही कह सकता है और कोई नहीं।

लुत्फु—नाथ! आपके अदर्शनसे दासीके प्राण भी शून्य हो गये थे! हर समय ईश्वरको याद करती थी और रो रो कर यही प्रार्थना किया करती थी, कि अँगरेज़ोंके समरमें मेरे प्राणेश्वरको जय लाभ हो, वीरके वीरत्व-गौरवकी रक्षा हो और दुःखिनीका पति अक्षत शरीरसे घर लौट आवे। इस प्रार्थनाके अतिरिक्त, इस दासीकी और कोई कामना नहीं थी। नाथ! तुम्हारे सुखमें ही मेरा सुख है, और तुम्हारे ही आनन्द में मेरा आनन्द है।

इसी समय एक स्वर्ण प्रतिमाके तुल्य बालिकाको लिये हुए एक बाँदी वहाँ आई। बालिकाको देखकर सिराजुद्दौला ने हाथ बढ़ाये। बालिका भी हँसती हुई कूदकर उसकी गोदमें चली गई और गला पकड़ कर मुखके ऊपर मुख रख कर टूटे फूटे शब्दोंमें कहने लगी, "बाबा! तुम इतने दिनों तक कहाँ थे?"

ममताकी आधार और नयनोंकी पुतली तनयाके मुखसे "बाबा" शब्द सुनकर, सिराजुद्दौलाका वात्सल्य प्रेम उथल पड़ा। बड़े स्नेहसे बारम्बार दुहिताका मुख चुम्बन करने लगा और कहा, "मेरिना! बेटी! क्या तुमको मेरी याद आती थी?"

तरलमति बालिकाने उस ओर ध्यान नहीं दिया और आपने आप ही बोल उठी, "बाबा! क्या तुम मुझे चाहते हो?"

सिराज—हाँ मेरिना ! मैं तुमको बहुत चाहता हूँ।

मेरिना—और माँ को ?

यह सुनते ही सिराजुद्दौला और लुत्फुन्निसा दोनों ही हँसने लगे। लुत्फुन्निसा बड़े आदरसे प्राण-सम दुहिता को पतिकी गोदसे अपनी गोदमें लेकर बारम्बार मुख चूमने लगी। अहा ! संसारमें जिसके पुत्र कन्या नहीं हैं, जो वात्सल्यके अमिय रससे वञ्चित हैं, वह निश्चय ही बड़े दुःखी हैं।



सोलहवाँ परिच्छेद।



राजुद्दौलाने समझा था, कि अँगरेज़ोंको दमन करनेके पीछे निश्चिन्त हो जाऊँगा और निरापद होकर राज्यशासन करूँगा। परन्तु इतना करने पर भी वह निश्चिन्त न रह सका।

एक महीना भी न बीतने पाया था, कि एक गुप्तचरने आकर सम्वाद दिया कि पुर्नियाके नवाब शौकतजङ्गने दिल्लीके बादशाहसे सनद लाकर, अपने आपको बङ्गाल-बिहार और उड़ीसाका नवाब बतलाकर घोषणा की है, और युद्धके लिये तय्यार हो रहा है। वह शीघ्र ही मुर्शिदाबादपर आक्रमण करेगा।

गुप्तचरके मुखसे यह सम्वाद पाकर, सिराजुद्दौला और स्थिर न रह सका। उसने गृहशत्रुको नष्ट करनेके अभिप्राय से, अपने विश्वासी सेनापति मीरमदन और मोहनलालसे गोपनीय मन्त्रणा करके, उनको युद्धके लिये प्रस्तुत होनेका आदेश दिया।

सिराजुद्दौलाको ऐसा विश्वास हो गया, कि उसके मन्त्रियों की उत्तेजनासे और उनके ही परामर्शसे शौकतजङ्ग, परम आत्मीय होने पर भी, सिंहासनका लोलुप हुआ है और युद्ध करना चाहता है।

परन्तु प्रजाकी यही इच्छा हो रही थी, कि किसी प्रकार अँगरेज़ोंसे लड़कर सिराजुद्दौलाका दर्प चूर्ण हो। उसके अत्याचारसे क्या प्रजा, क्या मन्त्रीवर्ग सभी व्याकुल हो रहे थे। परन्तु उस समय परमेश्वरको यह अभीष्ट नहीं था और न उस समय तक अँगरेज़ोंकी ही इच्छा थी, कि किसीका राज्य छीनें। परन्तु जब इन लोगोंसे प्रजाका दुःख देखा नहीं गया, तब उन्होंने अपनी शक्तिको बढ़ाकर उस अत्याचारीके पञ्जोंसे प्रजाकी रक्षा की, जिसकी कथा आगे चलकर कहूँगा। अस्तु जब लोगोंकी यातना असह्य हुई तो, वह लोग शौकतजङ्गके पास गये और उसको मुर्शिदाबादकी ससनद छीन लेने पर आमादा किया।

मन्त्रीदलसे सिराजुद्दौला बहुत कुछ विरक्त हो गया था; परन्तु इतना ज्ञान उसको नहीं था, कि इन लोगोंको तो प्रसन्न रख सकता, अकेली प्रजा ही अप्रसन्न रहती। वह अपने इने-गिने मन्त्रिमण्डलको भी राज़ी न रख सका। उसको यही दिखाई देने लगा, कि यदि मैं कभी राज्यभ्रष्ट होऊँगा तो इस मन्त्रिमण्डलके षड्यन्त्रसे ही होऊंगा। अपने अत्याचारका उसको कुछ भी विचार नहीं था, कि मैं क्या कर रहा हूँ।

उसने सोचा कि जब शौकतजङ्ग सिंहासनका प्रतिद्वन्दी हुआ है, और ससनद पर बैठनेके लिये दिल्लीसे सनद ले आया है, तो यही अच्छी तरकीब है, कि जबतक स्वयं बादशाह उसकी सहायताके लिये यहाँ तक पहुँच पावें तब तक मैं

शौकतजङ्गको संहार कर दूँ, अथवा बन्दी कर लूँ। नहीं तो बादशाहके आ जाने पर, मेरे शत्रु खुलाखुली बादशाहसे कह कर शौकतजङ्गके पक्षमें हो जायँगे, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।

सिराजुद्दौला यह समझता था कि यद्यपि दिल्लीश्वरका प्रबल प्रताप इस समय क्षीण हो गया है, किन्तु सम्राट् नाम की महाशक्ति अभी भी लोप नहीं हुई है, जिसके आगे अब भी सभी सिर झुकाते हैं।

अस्तु जो कुछ हो, इस समय सिराजुद्दौलाने अपनी बुद्धि-मानी दिखलाई, और उस सम्वाद पर निर्भर न रहकर उसकी सत्यताकी जाँच करनेके लिये एक कौशल-जाल बिछाया। अर्थात्, पुर्नियाके वीरनगरमें फ़ौजदारका पद ख़ाली देखकर, रायदुर्लभराम के भाई रासबिहारीको वह पद प्रदान किया, और शौकतजङ्गको एक पत्र लिखकर भेज दिया। उस पत्र का मर्म इस प्रकार है:—

"पूर्निया-प्रदेशके वीरनगरके फ़ौजदारका पद ख़ाली है, मैं अपने विश्वस्त और अनुगत रासबिहारीको उस पद पर नियुक्त करके भेजता हूँ। तुम वह काम इसके सुपुर्द कर देना।

नवाब सिराजुद्दौला शाहकुली ख़ाँ।"

पत्र लेकर रासबिहारी पुर्नियाको चल दिया। राजमहल पहुँच कर, नवाबका पत्र उसने शौकतजङ्गके पास भेज दिया।

पत्र पाकर शौकृतजङ्ग कार्य निर्धारण करनेके लिये अपने मन्त्रीसे सलाह करनेमें प्रवृत्त हुआ। बोला, "देखो मन्त्री! सिराजुद्दौलाने पौरनगरके फ़ौजदारके पद पर एक व्यक्ति राम-बिहारोको नियुक्त करके भेजा है, मैं उसको यह पद कदापि न दूँगा। जबकि मैं दिल्लीसे बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाकी सूबेदारीकी सनद ले आया हूँ, तब सिराजका आदेश पालन क्यों करूँगा? इस समय बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाका शासनकर्त्ता मैं हूँ; तब पौरनगरके फ़ौजदारके पद पर किसी को नियुक्त करनेका सिराजुद्दौलाको क्या अधिकार है? सिराजुद्दौला नाममात्रका नवाब है।"

सुविज्ञ मन्त्री सय्यद गुलाम हुसेन बोला, "आप जो कुछ कहते हैं वह सब सत्य है; किन्तु सिराजुद्दौला आपका परम आत्मीय है। आत्मीयके साथ इस प्रकार लड़ाई झगड़ा करना लोक-समाजमें बड़ी निन्दाका विषय है। यद्यपि आप दिल्लीसे बादशाही सनद ले आये हैं और बङ्गाल-बिहार और उड़ीसाका नवाबी पद और शासन-भार प्राप्त कर लिया है, परन्तु विवेचना करके देखिये कि इस सनदमें राजशक्ति कहाँ है? सिराजुद्दौला अपने बाहुबलसे सिंहासन पर बैठा है, अपनी क्षमतासे अपनेको नवाब बनाया है। जब तक उसको आप पराजित न करें, तब तक केवल बादशाही सनदसे क्या होगा? सिराजुद्दौलाका इस समय प्रबल प्रताप है। अभी एक महीना भी नहीं बीता है, कि उसने अँगरेज़ोंको समरमें

हराया है। ऐसे प्रबल प्रतापी परम आत्मीयके साथ अनर्थक विवाद करना अनुचित है।"

शौकतजङ्ग मन्त्रीकी यह बातें सुनकर अप्रसन्न हुआ और बोला,"मैं समझा था कि तुम मुझे सिराजुद्दौलाके विरुद्ध उत्तेजित करोगे और युद्ध करनेका परामर्श दोगे। तुमको नहीं मालुम है, कि वह प्रजा पर कैसा अत्याचार कर रहा है। अँगरेज़ोंके हरानेकी तुमने खूब कही, वह विचारे लड़े ही कब हैं? उनको लड़ना अभीष्ट ही कब था? वह तो वाणिज्य-व्यवसाय करनेवाली जातिके लोग हैं, वे लड़ना कब चाहते हैं? ऐसी जातिको हरानेसे क्या वह प्रतापशाली हो गया? अँगरेज़ोंको ऐसी नृशंसतासे मार डालना, क्या कोई वीरताका काम है? मुझको ज्ञात होता है, कि तुम नितान्त भीरु हो।

"अँगरेज़ोंको हरा देनेसे क्या वह मुझको हरानेमें समर्थ हो सकता है? जिसमें अपने मन्त्रियोंको अपने वशमें करनेकी क्षमता नहीं है, जिसके पास बादशाही सनद नहीं है, वह मेरा क्या कर सकता है? तुम निश्चय जानना, कि युद्धका नाम सुनते ही वह राज्य-सिंहासन छोड़कर भाग जायगा। जबकि मुझको दिल्लीसे सनद मिल चुकी है, तब कोई सन्देह नहीं है कि बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाकी नवाबी मेरी है। मन्त्री होकर, तुम मेरे शुभकार्य्यमें बाधा मत डालो। मैंने जिस कौशलसे दिल्लीके बादशाहसे सनद पाई है, उसी कौशलसे सिराजुद्दौलाको सिंहासनच्युत करूँगा। जाओ, तुम

अपना काम देखो, मैंने तुमसे सलाह लेकर बड़ा अनुचित काम किया है।"

शौकतजङ्गने, मन्त्रीकी बात न मानकर, निम्न लिखित पत्र सिराजुद्दौलाके पत्रके उत्तरमें भेज दिया:—

"सिराज! तुम्हारे कथनानुसार रासविहारीको मैं वीरनगर का फ़ौजदारी-पद न दूँगा। यद्यपि वह पद ख़ाली है, परन्तु उस पर जिसको मेरी इच्छा होगी उसीको नियुक्त करूँगा। मैं तुम्हारा आज्ञानुवर्त्ती नहीं हूँ, तुम ही मेरे अधीन हो। मैं इस समय बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाका नवाब हूँ। दिल्लीश्वरने मुझको सनद प्रदान की है। तुमने जो अभी तक जन-साधारणके सामने अपनेको नवाब कहकर परिचय दिया है, वह तुम्हारी प्रतारणा मात्र है। तुम्हारे पास बादशाही सनद नहीं है, न तुमको वह मिली ही है। परन्तु मेरे पास वह है और मुझको मिली है। ख़ैर जो कुछ हो, जब कि तुम अलीवर्दी के वंशधर हो, तो मेरे भी परम आत्मीय हो। अपने आत्मीयके ऊपर कोई अत्याचार करूँ अथवा प्राणसंहार करूँ, ऐसी मेरी अभिलाषा नहीं है। तुम पत्रको पढ़ते ही समस्त राज्य-धनको छोड़कर पूर्वी बङ्गालके किसी निर्जन गाँव में चले जाओ, लोभके वशवर्त्ती होकर राज-कोषसे कोई वस्तु मत लेना। यदि तुम्हारे भरण-पोषणमें कोई अभाव हो तो उसका बन्दोबस्त मैं कर दूँगा। परन्तु यदि तुम मेरे आदेश पर नहीं चलोगे, तो तुम मेरी दयाका कोई भाग न पाओगे और

शत्रुता बढ़ जायगी। मैं युद्धके लिये प्रस्तुत हूँ। सेना तय्यार है। समय रहते समझकर काम करना, नहीं तो युद्ध छिड़ने पर मेरा अनुग्रह लाभ करनेमें समर्थ न हो सकोगे।

नवाब शौकतजङ्ग।"

शौकतजङ्गने यह पत्र लिखकर, राजमहलमें रासबिहारीके पास भेज दिया। रासबिहारीने भी लौटकर मुर्शिदाबादमें सिराजुद्दौलाको वह पत्र दे दिया।

उद्देश्य सिद्ध हुआ। शौकतजङ्गका पत्र पढ़कर, सिराजुद्दौलाको बड़ा क्रोध हो आया। उसने अपने सेनापतियोंको युद्ध-यात्राके लिये तय्यार होनेकी आज्ञा दी। परन्तु युद्धमें जानेके पहिले दरबार हुआ। सिराजुद्दौलाने पात्रमित्र सभीको शौकतजङ्गके उस पत्रके हालसे अवगत करके कहा, कि आप लोगोंकी इसमें क्या राय है।

अलीवर्दीके समयके जो लोग थे, उन्होंने अपनी अपनी सम्मति प्रकाश की; परन्तु उनकी कुछ भी सुनवाई नहीं हुई। जो लोग शौकतजङ्गसे मिले हुए थे, उन्होंने भी कहा कि वर्षाकाल ऊपर आ गया है, अब युद्धका समय नहीं है, इस समय युद्ध करनेसे सैनिकोंके कष्टकी सीमा न रहेगी; शरत्काल आने पर युद्ध करनेमें सुभीता होगा।

सिराजुद्दौला बोला, "अच्छा मैं समझ गया। परन्तु बादशाही सनद पाकर क्या वह बैठा रहेगा? वह बङ्गाल-बिहार और उड़ीसाका सूबेदार होना जो लिखता है, सो

यह सनद उसको कहाँ मिली ? और वह नवाब किस तरह हुआ ? अलीवर्दीका सिंहासन मुझको मिला है। बादशाही सनद भी मुझको ही मिलेगी। शौकतजङ्गको क्यों मिलेगी ? और यदि बादशाह उसको सनद दे ही देगा,तो मैं क्या सहजमें अपनी मसनद छोड़ सकता हूँ ?"

इसके उत्तरमें जगत्सेठ महताबचन्दने कहा,—"सम्भव है, कि शौकतजङ्गने अपनेको अलीवर्दीका वंशधर बतलाकर सनद प्राप्त की हो।"

इतना सुनते ही सिराजके क्रोधकी सीमा न रही, और नेत्रोंको रक्तवर्ण करके बोला, "तुम क्या कहना चाहते हो ? क्या सिराजुद्दौला अलीवर्दीका वंशधर नहीं है ?"

महताब—यह तो मैं नहीं कहता कि आप उनके वंशधर नहीं हैं, परन्तु जब शौकतजङ्ग सनद ले आया है तो सब लोग उसको ही मानेंगे ; क्योंकि बादशाह जिसको नवाब बनावेगा, उसकी नवाबीको कौन इन्कार कर सकेगा ?

सिराज—तो मालूम होता है, कि तुम मेरा नवाब होना स्वीकार नहीं करते हो ?

महताब—मैंने यह कब कहा है कि आप नवाब नहीं हैं, परन्तु जब दिल्लीका बादशाह दूसरेको सनद देता है, तो लोग उसको नवाब क्यों न मानेंगे ? जिसके पास बादशाहकी सनद नहीं है, उसको कौन नवाब कहेगा ? आपको बादशाहसे

सनद मँगानी चाहिये थी, बिना सनद पाये आपको लड़ना उचित नहीं है।

यह सुनते ही सिराज क्रोधके मारे जल उठा और बड़े ज़ोरसे चिल्लाकर बोला, "तो मेरी सनद कहाँ है?"

महतावचन्दने भयभीत होकर कहा, "मैं उसके विषयमें क्या जानूँ कि कहाँ है?"

सिराज—दिल्लीके बादशाहके पाससे सनद लानेका काम तो तुम्हारे ही सुपुर्द है, तुम उसको क्यों नहीं लाये?

महताव—आपने तो सिंहासन अपने बाहुबलसे प्राप्त किया है, अलीवर्दीके नामकी जो सनद थी वह मेरे पास है, परन्तु आपने तो कभी उसके लानेके लिये मुझसे नहीं कहा, विशेष करके आपने बादशाहका राज कर भी बन्द कर दिया है और स्वाधीन भावसे राजत्व कर रहे हैं। बादशाहको कैसे मालूम होता, कि शौकतजङ्ग अलीवर्दीका वंशधर नहीं है, असली वंशधर आपही हैं?

जब सिराजको कोई उत्तर न आया, तो क्रोधसे उन्मत्त होकर सिंहासनसे उठ बैठा और बड़े वेगसे महामान्य जगत्-सेठ महतावचन्दके पास जाकर उनकी गरदन पर बड़े वेगसे एक घूँसा मारा और क्रोध-भरे कम्पित स्वर से कहा, "यदि इस अवहेलनाके जुर्मानेमें तीन करोड़ रुपया न दोगे, तो जबतक न दोगे तबतक बन्दी रखे जाओगे।" यह कह कर, सिराजुद्दौलाने दरबार भङ्ग किया और जगत्सेठ महतावचन्दको बन्दी कर दिया।

सत्रहवाँ परिच्छेद ।

सिराजुद्दौलाने और विलम्ब न करके शौकतजंग को दमन करनेके लिये अपनी सेना लेकर यात्रा की। उसने अपनी सेनाको तीन भागों में बाँटा। एक भागका सेनापति मीरजाफ़र को किया, उसके साथ नवाब रहा और राजमहल की ओर को चला। दूसरे दलका सेनापति राजा रामनारायणको किया। उसने बादशाहका पथ अवरोध करनेके लिये पटना की ओर यात्रा की। तीसरी ओर, मोहनलाल एक तीसरा दल लेकर, पद्मा नदी पार करके, रानी भवानीके राज्यमें होकर, पुर्निया की ओरको चले। शौकतजंगके भागनेकी कोई राह न रही और बादशाह आकर सहजमें उसकी सहायता कर सके सो पथ भी बन्द होगया।

सिराजुद्दौलाके आनेका समाचार पाकर शौकतजंग शीघ्र ही सेना लेकर बाहर निकला। नवाबगञ्जके पास उसके शिविर स्थापित हुए। शौकतजङ्गके प्रवीण सेनापतिने जिस स्थानपर शिविर स्थापन किये थे उसके सामने बहुत दूर तक एक प्रकाण्ड जलाशय था, और वह इतना लम्बा चौड़ा था कि

शत्रु-सेना सहजमें उसके ऊपर आक्रमण नहीं कर सकती थी। उसके भीतर आनेका एक छोटा सा रास्ता था, जिसमें से एक समय में बीस मनुष्योंसे अधिक नहीं निकल सकते थे।

शौकतजंगके रण-निपुण सेनापतिने सर्वथा अनुकूल समझ कर इस स्थानको रणक्षेत्र निर्दिष्ट किया था, किन्तु गर्वोन्मत्त शौकतजंगके दोषसे सभी वृथा हुआ। ऐसे अनुकूल युद्धक्षेत्रके पाने पर भी, कार्य्य सिद्ध न हुआ। शौकतजंगने सेनापतियों की कोई मन्त्रणा ग्रहण न करके, जैसा उसके चित्त में आया वैसा करना आरम्भ किया। उसने दूर दूर पर हरेक सेना-पतिका एक एक पटमण्डप निर्देश करके, एक अद्भुत व्यूह-रचना की।

प्रवीण सेनापति बहुत चेष्टा करने पर भी जब शौकतजंग को अपने परामर्शके भीतर न लासके और जब किसी मन्त्रणा पर उसने कर्णपात नहीं किया, तो वह लोग विरक्त होकर चुप ही रहे और अपने अपने पटमण्डपमें चले गये।

जिस शौकतजङ्गने एक दिनके लिये भी कभी रणस्थलमें पदार्पण नहीं किया था, आंखोंसे कभी युद्ध देखा भी नहीं था, युद्ध-कला और व्यूह-रचना की कभी शिक्षा न पाई थी, तोपके चलने का कभी शब्द भी नहीं सुना था, शत्रुके सन्मुख खड़े होकर किस तरह युद्ध किया जाता है, किस प्रकार सेनाको चलाकर गोलागोली बरसाते हैं, जिसको ये बातें कुछ भी न मालूम थीं, वही शौकतजङ्ग आज रणकुशल

सेनापतियोंकी बात की उपेक्षा करके, स्वयं व्यूहरचना करके, सेना-सञ्चालनमें प्रवृत्त हुआ।

मोहनलाल और सिराजुद्दौला दोनोंके दल दो ओरसे आकर मिल गये,जिससे सिराजुद्दौलाका पक्ष बहुत ही प्रबल हो गया। रण-निपुण मोहनलालने शत्रु-सेनाको सज्जित होनेका अवसर न देकर तोपें दागदीं। यद्यपि गोले उस जलभरी हुई भूमिको पार करके जा नहीं सकते थे; उसी कीचड़ में पड़े रह जाते थे; परन्तु जो दो एक वहाँ से निकल कर शत्रुकी सेनामें पहुँच जाते थे, उन्हीं के मारे शौकतजङ्गकी सेनाका विनाश होने लगा। मोहनलाल भी कोई बाधा न पाकर उस सङ्कीर्ण पथ पर होकर चलने लगे।

शौकतजङ्ग रणस्थलमें उपस्थित था और देख रहा था, कि शत्रुसेना धीरे धीरे अग्रसर हो रही है और विपक्षियोंके गोलों के आघातसे बहुत सी सेना हताहत हो रही है; परन्तु वह उसकी रक्षाका कोई उपाय ही नहीं कर रहा था,शत्रुकी गतिको रोकने की भी कोई चेष्टा नहीं कर रहा था। उस समय एक अफ़ग़ान सेनानायक उसके सामने आकर हाथ जोड़ कर बोला, "बादशाह! यह कैसा युद्ध है? शत्रु-दल धीरे धीरे आगे बढ़ रहा है, कोई उसके रोकने की चेष्टा नहीं करता है, सभी निश्चेष्ट भावसे खड़े हैं। मैंने बहुत युद्ध देखे हैं, बहुत युद्धोंमें लड़ा हूँ, परन्तु ऐसी युद्ध-पद्धति कहीं नहीं देखी। सभी सेना स्वेच्छाधीन हो रही है। जिसके मनमें

जो आता है, वह वही करता है। शत्रु तो सामने पहुँच गया है, परन्तु हमारा एक भी मनुष्य युद्धमें प्रवृत्त नहीं है। मालूम होता है, कि सभी लोग बिना युद्ध किये आहत और बन्दी होंगे। यदि,जहाँपनाह को युद्ध करना अभीष्ट हो, तो सेना को इकाट्ठी करके युद्धमें प्रवृत्त हूजिये, तोपें चलाने की आज्ञा दीजिये, पैदल सेनाको आगे बढ़ा दीजिये। वृथा समय नष्ट करके, शत्रु-दलको अग्रसर न होने दीजिये। वह देखिये, विपक्षी सेना सङ्कीर्ण पथमें प्रवेश करनेको अग्रसर हो रही है।"

हिताहित-विवेचनाशून्य, अनभिज्ञ शौकतजङ्गने देखकर भी नहीं देखा। सिखाने पर भी नहीं सीखा। मदगर्वमें अन्धे शौकतजङ्गने तीव्र स्वरसे कहा, "जाओ जाओ, बहुत बक चुके। तुमको रणशिक्षा देने की आवश्यकता नहीं है। तुम युद्धके विषयमें क्या जानते हो? मैंने जो कौशल अवलम्बन किया है, उससे सिराजुद्दौलाकी क्या मजाल है, कि युद्धमें जय लाभ कर सके। यदि तुमको अपने प्राणोंका भय हो तो भाग जाओ, नहीं तो स्थिर भावसे यहां खड़े खड़े देखते रहो, कि युद्धमें कौन जयलाभ करता है?" यह सुन कर अफ़ग़ान सेनापतिने और कोई बात नहीं कही, चुपचाप वहां से चल दिया।

इधर मोहनलाल विपुल विक्रम और प्रबल उत्साहसे धीरे धीरे अग्रसर होने लगे। उस समय श्यामसुन्दर नामक एक हिन्दू सेनानायक चुप न रह सका और शौकतजङ्ग की किसी

अनुमति की राह न देखकर, मोहनलाल की गतिरोध करने के लिये अग्रसर हुआ और सामनेके पैदलों को पीछे करके तोप लेकर सिंह-विक्रमसे युद्ध आरम्भ किया।

दोनों पक्षोंमें तुमुल संग्राम होने लगा। तोपोंके शब्द सुनाई देने लगे। श्यामसुन्दरकी तोपोंके धुएँ से चारों ओर अन्धकार छागया। लगातार गोले चलनेके कारण मोहनलाल और आगे न बढ़ सके; घोड़ोंकी वागें वहींपर रोक लीं और बड़ी सतर्कतासे श्यामसुन्दरके उन विश्वसंहारी गोलोंसे अपनी सेनाको बचाने का उद्योग करने लगे।

श्यामसुन्दरकी अद्भुत रणपटुता देखकर, शत्रु-मित्र सभी विस्मित और स्तम्भित हो गये। शौकतजङ्ग उत्साहित हो उठा। उसने परिणाम न सोचकर, अश्वारोही सेनाको जला-शयकी भूमि पार करके पीछेसे सिराजुद्दौलापर आक्रमण करने का आदेश दिया। अश्वारोहियोंने इस प्रस्तावको स्वीकार न करके कहा, "वहाँ पर कीचड़ बहुत है। घोड़े उसपर होकर नहीं निकल सकेंगे, कीचड़में फँस जायँगे, फिर उसमें से निकल नहीं सकेंगे, लाभके बदले शत्रुके गोलोंसे सभी विनाश को प्राप्त होंगे।"

यह हित-वाक्य निर्बोध शौकतजङ्गके कानों में नहीं पहुँचे। उसने क्रोधसे अधीर होकर कहा, "तुमलोग नितान्त भीरु और कापुरुष हो, इसी लिये समरके वास्ते आगे नहीं बढ़ते हो। धिक्कार है तुम्हारे वीरत्व को! तुमने अस्त्र क्यों धारण

किये हैं? श्यामसुन्दर सामान्य कर्मचारी होने पर भी लड़ाई में जैसा वीरत्व और साहस दिखला रहा है, जिस भावसे शत्रु-सेना पर गोले बरसा रहा है, इसको देखकर भी क्या तुम लोगोंको उत्साह नहीं होता है? धन्य है वीर श्यामसुन्दर!"

इस अनुचित तिरस्कारको अश्वारोही सह न सके। अभिमान और अपमानके कारण, जीवन की ममता छोड़कर, एक दमसे उस दलदलके ऊपरको चल दिये।

हिताहित-ज्ञानशून्य शौकतजङ्गने समझा, कि अब शत्रु-दल अवश्यही निर्मूल हो जायगा। युद्धमें निश्चयही हमारी जीत होगी। श्यामसुन्दर कैसे अमित विक्रमसे युद्ध कर रहा है। उसके गोला-वर्षणसे शत्रु-सेना स्तम्भित होगई है, एक पग भी आगे बढ़नेका साहस नहीं करती है। अब अश्वारोही सेना शत्रुके पीछे से आक्रमण करनेके उद्देश्यसे दलदलके ऊपरसे प्रचण्ड वेगसे आ रही है, वहाँ पहुँच कर यह अश्वारोही सेना अवश्यही शत्रु-सेनाको विध्वंस कर देगी। मेरी इस अमित तेजवाली अश्वारोही सेनासे शत्रु कितनी देर तक लड़ सकते हैं? विजय अवश्य मेरी ही होगी। अब मेरे रणस्थलमें और खड़े रहने की क्या आवश्यकता है? अब मैं शिविर में जाकर विश्राम करता हूँ।

शौकतजङ्ग मन ही मन ऐसी कल्पना करता हुआ, आशाके धोखेमें मुग्ध होकर, उत्फुल्लचित्त से रणस्थल से चल दिया और पटमण्डपमें प्रवेश करते ही आज्ञा दी कि,"नाच रङ्ग होने

दो, मुझको थोड़ी सी शराब दो।" नाचरङ्ग होने लगा, शराब उड़ने लगी। पटमण्डपके बाहर रणक्षेत्रमें तोपें चल रही हैं, भयङ्कर युद्ध हो रहा है, इसकी कुछ भी सुध न रही।

शौकतजङ्ग अपरिमित सुरापानमें उन्मत्त था। उसके ऊपर मधुर गाना, वाराङ्गनाओंका मोह-जाल,इन सब बातोंने उसको एकदम अचेत कर दिया। पटमण्डपके भीतर गीत-वाद्य-मद्य अविराम चलने लगा। आनन्द की सीमा न रही।

इधर पटमण्डपके बाहर,अश्वारोही कुछ दूर तक उस दल-दल पर चलकर आगे उसमें फँसने लगे और आगे न चल सके। दलदलमें आधी दूर तक जाकर ही रुक गये। उधर जानेकी अथवा वापिस लौटने की आशा न रही। घोड़े उसीमें फँसकर रह गये।

सिराजुद्दौला की सेनाने यह सुयोग पाकर, गति-शक्तिहीन अश्वारोहियोंके ऊपर गोले बरसाना आरम्भ किया। वह बेचारे क्या करते, निरुपाय होकर, दलदलमें शत्रुके गोलोंके आघात से पञ्चत्वको प्राप्त होने लगे।

इधर श्यामसुन्दर अविश्रान्त युद्ध करते करते क्रमसे थक चला। उसका गोलावर्षण भी शिथिल होने लगा। उस समय रण-विशारद मोहनलालने, अवसर समझ कर, उस संकीर्ण पथ पर धीरे धीरे अग्रसर होना आरम्भ किया और सावन की झड़ी की तरह श्यामसुन्दरके ऊपर लगातार गोला वर्षण आरम्भ कर दिया।

श्यामसुन्दर थककर बिलकुल ही अवसन्न होगया था; तो भी उसने गोला चलाना बन्द नहीं किया। सहसा शत्रु-पक्षका एक गोला आकर उसके ऊपर पड़ा; जिससे वह आत्म रक्षा न कर सका और उसके आघात से उसने प्राण त्याग दिये। सेना भीत और निरुत्साहित होगई। नाविकहीन नौका की तरह, सारथीहीन रथकी तरह, वह सेना कुछ भी स्थिर न कर सकी और रणक्षेत्र छोड़ देनेका उपक्रम करने लगी।

अश्वारोही सभी पञ्चत्वको प्राप्त होगये। श्यामसुन्दरने भी प्राण त्याग दिये। सेना भी भागनेका उद्योग करने लगी। उस समय और सेनापति निश्चेष्ट न रह सके। वह लोग सेना इकट्ठी करनेके लिये प्राणपणसे चेष्टा करने लगे। परन्तु छत्रभङ्ग सेना कभी इकट्ठी हुई है? शेषमें, सारे सेनापति यह सोचकर कि यदि शौकतजङ्ग रणक्षेत्र में उपस्थित हो, तो सेनाका एकत्रित होना सम्भव है, उसके पट-मण्डपमें गये। परन्तु शिविरमें प्रवेश करने पर ज्ञात हुआ, कि शौकतजङ्ग सुरापान किये हुए बाह्यज्ञान शून्य हो रहा है, आँखें बन्द हैं, हाथ पैर ढीले पड़े हुए हैं, बैठने की शक्ति नहीं है, चलने की इच्छा करने से गिर पड़ता है, पगड़ी गिर गई है, तलवार अपने स्थानसे च्युत हो रही है, बुलाने पर कोई उत्तर नहीं मिलता है।

नाचगान उस समय भी बन्द नहीं है। यह हालत देख

कर भी सेनापति चुप नहीं रहे। उन लोगोंने दोज़ानू होकर हाथ जोड़कर कहा, "बादशाह सर्व्वनाश उपस्थित है! शत्रु-सेनाके हाथसे अश्वारोही सेना सब मारी गई, श्यामसुन्दर भी इस लोकमें नहीं है। सभी सेना पलायनोद्यत है, विपक्षदल निकटवर्त्ती हो रहा है। हम लोगोंके बहुत कुछ चेष्टा करने पर भी, तित्तर-बित्तर सेना इकट्ठी न हो सकी। ऐसी आशा है, कि यदि आप इस समय रणस्थलमें चलें, तो फिरसे सेना इकट्ठी होकर फिर युद्धमें प्रवृत्त हो जाय। जहाँपनाह! शीघ्र उठिये, विलम्ब करनेसे सभी नष्ट हुआ जाता है।"

सेनापतियोंका कहना जङ्गलका रोना हो गया। शौकतजङ्ग ने किसी बातका उत्तर नहीं दिया, आँखें खोलकर देखा भी नहीं, आँखें मलकर रुँधे हुए गलेसे कहा, "गाओ गाओ मर्जीना बीबी, ज़ोरसे गाओ! राज्यधन सब जाने दो, गाना बजाना मत छोड़ो।"

सेनापति बड़ी विषम विपद्में पड़ गये। क्या यत्न करें, कुछ भी स्थिर न कर सके। इधर शत्रुदल धीरे धीरे आगे बढ़ रहा था। वह लोग जितने ही आगे बढ़ते थे, उतने ही उनके गोले गोलियोंसे, इधरवाले धराशायी होते जाते थे। युद्ध नहीं होता था, वरन् नर-हत्या हो रही थी।

सेनापतियोंने आपसमें सलाह की, कि यद्यपि शौकतजङ्ग सुरापानमें उन्मत्त है, तथापि यदि उसको किसी प्रकार रणक्षेत्र में ला सकें, तो उसको देखकर सम्भव है कि भागती हुई सेना

रुक जाय और पुनः उत्साहित होकर युद्धमें प्रवृत्त हो जाय इस प्रकार स्थिर करके, उन लोगोंने शीघ्रतासे शौकतजङ्गको उठाकर एक हाथीके ऊपर बिठा दिया और उस हाथीको रणक्षेत्रमें ले चले।

परन्तु सेनानायकोंकी वह चेष्टा निष्फल हुई। सेना उस हाथीकी पीठ पर लेटे हुए बाह्यज्ञानशून्य शौकतजङ्गको देख कर अवसन्न हो गई। जो थोड़ी बहुत सेना अब तक युद्ध कर रही थी.उसने भी पलायनकी तय्यारी कर दी। शत्रु प्रचण्ड वेगसे आगे बढ़ रहा था। उसको बाधा देनेवाला कोई नहीं था। जो थोड़ी सी सेना अभी तक जीवित थी, वह भी एक एक करके पीछे हट रही थी और भागनेको तय्यार थी।

सेनापतियोंने शौकतजङ्गको होशमें लानेकी बहुत चेष्टा की। कातर स्वरसे बारम्बार विनय करने लगे कि, "जहाँप-नाह! शत्रुके हाथमें सब जाता है, एक बार आँखें खोलकर देखिये, एक बार सेनाको अपने श्रीमुखसे बुलाइये। देखिये, सब लोग आपके मुँहकी ओर देख रहे हैं। आपके मुँहका एक शब्द सुनते ही सब तितर-बितर सेना इकट्ठी होकर लड़ाई लड़ेगी।"

सेनापतियोंकी यह चेष्टा भी वृथा हुई। सुरा पिये हुए, उन्मत्त, बाह्यज्ञानरहित शौकतजङ्गने आँख खोल कर भी न देखा, न कुछ बात ही कही।

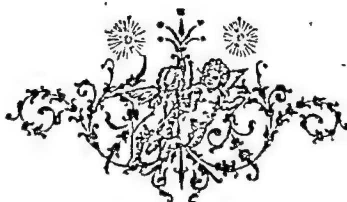
सहसा एक गोली शत्रुपक्षसे आकर शौकतजङ्गके ललाटमें

लगी। उसीके साथ राज्यकी आशा, नवाबीकी लालसा, सदैवके लिये जाती रही। हतभाग्यके प्राण निकल गये। विलासप्रिय राजदेह हाथीकी पीठसे पृथ्वी पर गिर पड़ी।

शौकृतजङ्गको मरा हुआ देखकर, एकबारगी सेनाने लड़ना छोड़कर, जिधर राह पाई उधरसे भागना आरम्भ किया। परन्तु कोई भाग न सका। बहुतोंने तो सिराजुद्दौलाके गोले-गोलियोंसे प्राण त्याग किये और शेष बन्दी हो गये।

सिराजुद्दौलाकी जय हुई। पुर्नियां-प्रदेश उसके अधिकारमें आ गया।

सिराजुद्दौला जिस समय बड़े उत्साहसे मुर्शिदाबादको लौटा; उस समय राजा, महाराजा, उमराव सभीने मिलकर जगत्सेठ महतावचन्दको कारागारसे मुक्त करनेकी प्रार्थना की। उसने भी उस हर्षके समयमें सेठजी को छोड़ दिया।



अठारहवाँ परिच्छेद।

ॐ

अंगरेज़ों के भाग्य के दिन अभी फिरे न थे। एक दिन एक गोरा सिपाही कलकत्ते के बाज़ारमें जा रहा था; दूसरी ओर से एक मुसल्मान फ़क़ीर आ रहा था। फ़क़ीरने गोरे को देखते ही पृथ्वी पर थूक दिया। गोरेको उसका यह व्यवहार अच्छा न मालूम हुआ। उसने फ़क़ीर से पूछा कि आपने किस मतलब से थूका। इसके उत्तर में फ़क़ीरने बड़ी निर्भयता से कहा, "तुम लोग शराब पीनेवाले हो। तुम्हारा मुख देखना भी हम लोगोंके लिये पाप है।" यह बात फ़क़ीरने इस कारण कही, कि वह जानता था कि सिराजुद्दौला सभी अँगरेज़ों से रुष्ट है।

गोरा—शराब पीना कोई बुराई नहीं है। तुम्हारा नवाब भी तो शराब पीता है। फिर तुम शराब पीनेवाले को क्यों बुरा कहते हो ?

फ़क़ीर—तोबा ! तोबा ! मैं तुम से कुछ बात नहीं करना चाहता। यदि तुम बहुत बकवाद करोगे, तो तुम्हारा अभियोग नवाब के पास लेजाऊँगा। सोच देखो कि मेरा अभियोग

पहुँचते पहुँचते तुम्हारी क्या दशा होसकती है, तुम शीघ्र ही हाथी के पैर के नीचे होगे।

इतना सुनना था, कि गोरे को क्रोध आगया और उसने उसी क्रोधमें फ़क़ीरके मुख पर एक घूँसा मार दिया, जिसके कारण वह बुड्ढा फ़क़ीर अचेत होकर गिर गया।

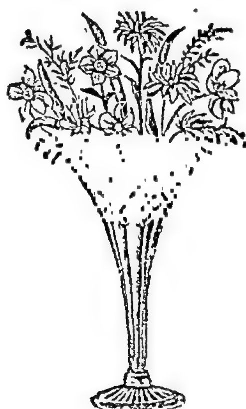
फ़क़ीरका राह पर गिरना था, कि महा कोलाहल मच गया। सिराजुद्दौला के पास भी यह समाचार पहुँचा, कि एक गोरे ने एक शाह साहबके ऊपर महा अन्याय किया है—राह चलते एक बुड्ढे शाहको बड़ा भारी आघात पहुँचाया है। बहुत से फ़क़ीरों ने नवाब-दरबार में पहुँच कर निवेदन किया, कि अँगरेज़ लोग बड़ा अत्याचार कर रहे हैं; हर किसी के धर्ममें आघात पहुँचा रहे हैं; यहाँ तक कि लोगोंके प्राण लेने में भी कुण्ठित नहीं हैं।

स्वजाति पर और विशेष कर फ़क़ीरों के ऊपर ऐसा घोर अत्याचार सुनकर, सिराजुद्दौला कब चुप रह सकता था? उस के क्रोध की सीमा न रही। उसने कलकत्ते के शासनकर्त्ता राजा मानिकचन्द से कहला भेजा, कि अँगरेज़ों को शीघ्र ही कलकत्तेसे निकाल दो। अब मैं अधिक सहन नहीं कर सकता हूँ। अँगरेज़ लोग बड़े अत्याचारी होगये हैं।

मानिकचन्द तो पहिले ही से अँगरेज़ोंसे रुष्ट हो रहा था। यह सुयोग उसके हाथ लग गया। वह सदैव ही सोचा करता था, कि किस प्रकार इन लोगोंका वाणिज्य-व्यवसाय बन्द करूँ

और किस तरह इनको देश से निकालूँ, परन्तु कोई अवसर हाथ न आता था। यह मौका उसे बहुत अच्छा मिल गया। कुछ सोच विचार न करके उसने एकबारगी हुक्म देदिया कि अँगरेज़ माल को, और यहाँ तक कि जो अँगरेज़ी कपड़े भी पहने हों उनको भी, एक पहर में कलकत्ते से निकाल दिया जाय।

अँगरेज़ लोग क्या करते, अपना अपना व्यवसाय-वाणिज्य छोड़ कर जहाज़ों पर जा चढ़े और जहाज़ोंको फल्ता बन्दरकी ओर लेगये। कलकत्ता अँगरेज़ शून्य हो गया। इस प्रकार धूर्त्त मानिकचन्द ने अपनी शासन-क्षमता दिखलाई।



उन्नीसवाँ परिच्छेद ।



गरेज़ लोग फल्ता बन्दर में आकर इकट्ठे होगये । व्यवसाय के बन्द होने से उनको बहुत क्लेश होने लगा । जिस वाणिज्य के लोभसे, जन्मभूमि की ममता छोड़कर, इतनी दूर आये थे वही सब समूल नष्ट होगया ।

अब यदि कोई भरोसा था, तो वह मदरासका था । वहीं से सेना लाकर कलकत्ते का पुनरुद्धार होसकता है, वहाँ से यदि कोई सुयोग्य व्यक्ति आकर किसी प्रकार नवाब सिराजु-द्दौलाको तुष्ट कर सके तो फिर वाणिज्य अधिकार मिल सकता है । परन्तु यह आशा दुराशा मात्र है । मदरासको सम्वाद भेजा गया, दिन पर दिन बीतनेलगे, लेकिन न तो सेना ही आई और न कुछ सम्वाद ही आया । राह देखते देखते सब लोग एक प्रकार से निराश होगये ।

फल्ता में आकर इन लोगों की दुर्दशा की सीमा न रही । एक तो वर्षा काल, तिसके ऊपर आश्रय के लिये पूरा पूरा स्थान नहीं । ऐसा कोई घर नहीं कि जहाज़ से उतरकर वहाँ बैठें, दिनरात जहाज़ पर ही रहना बड़ा कष्टकर होगया । तिस

के ऊपर खाने पीने की वस्तुओं की कमी, पास में कोई बाज़ार भी नहीं, कि जहाँ से खाने पीने का सामान मोल लेसकें और उससे अपने जीवन की रक्षा कर सकें।

किन्तु इन सब कष्टों की जड़ एक मात्र राजा मानिकचन्द ही थे। मानिकचन्द के आदेश से कोई भी दूकानदार अपनी दूकान फ़ल्ता में न लेजा सकता था। इच्छा होनेपर भी, कोई भय के मारे उनको सहायता न कर सकता था।

इस दुरवस्था में पड़कर भी अँगरेज़ लोग अपने कर्त्तव्य को न भूले। मदरास में जो कर्मचारी थे, उनको सम्वाद देने के लिये सेनिंहास साहब को मदरास भेजा।

मदरासके कर्मचारियों को १५ जुलाई को खबर लगी थी, कि क़ासिम बाज़ार की कोठी अवरोध की गई है। उन्होंने समझ लिया, कि बीच-बीच में सिराजुद्दौला से ऐसे ही झगड़े हो जाया करते हैं; परन्तु उन लोगों को विश्वास था कि कुछ भेंट दे देने से सब झगड़े शेष हो जाया करते हैं। सुतरां, वह लोग कुछ विशेष विचलित नहीं हुए और कलकत्ते की रक्षा के लिये कौनसा बन्दोबस्त आवश्यक है, इसका भी कोई विचार नहीं किया। व्यवसाय-वाणिज्य करने में ऐसे झगड़े हो ही जाया करते हैं, मिट भी शीघ्र ही जाते हैं। यही समझ कर, मदरास वालों ने कुछ विशेष चिन्ता न करके, केवल २३० मनुष्य मेजर किलपेट्रिक की अध्यक्षता में कलकत्ते के क़िले की रक्षा के लिये भेज दिये।

मनुष्य कुछ सोचता है, विधाता कुछ करता है।

मदरासके कर्मचारी यदि तनिक भी सुन पाते,कि क़ासिम-बाज़ार की कोठी पर सिराजुद्दौला ने अधिकार कर लिया है, साथ ही साथ कलकत्ते का क़िला भी उनके हाथ से जाता रहा है, और अँगरेज़मात्र कलकत्ते से बाहर कर दिये गये हैं, तो क्या वह लोग ऐसी सामान्य सेना भेजकर निश्चिन्त होजाते ?

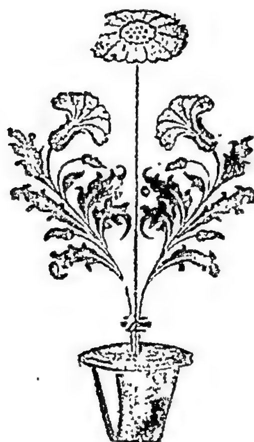
पाँचवीं अगस्त को मेनिंहाम साहब मदरास पहुँचे। वह जहाज़से उतरते ही, सबसे पहिले,गवर्नर पिगट साहब से मिले और उनसे सब हाल कहा।

पिगट साहब ने भी विलम्ब न करके कर्त्तव्य-निर्धारण के लिये सभा बिठायी। असमय में सभा बैठी। सभ्यगण इस सर्वनाश की कथाको सुनकर दुःख-शोकसे हतबुद्धि हो गये।

परन्तु अँगरेज़ जाति यदि, हम लोगों की तरह, शोक दुःख से व्याकुल होकर आत्मज्ञान खो बैठती, जीवन की ममता रखती, मरने मारने से डरती, रुपये से प्रेम करती अथवा दुष्कर कार्य से डरती और पीछे हटती, तो क्या आज सब जातियों के शीर्षस्थान पर बैठ सकती थी ?

यह शोचनीय सम्वाद पाकर, सब लोग हतबुद्धि और किंकर्त्तव्य विमूढ़ होगये। परन्तु जब शोक कुछ कम हुआ, तो कलकत्ते के पुनरुद्धार करने के लिये सभी के हृदय उत्तेजना से पूर्ण हो गये। किसी किसी ने तो शीघ्र ही सेना भेजदेने

की सलाह दी। परन्तु सभा में कोई विचार ठीक न हो सका; क्योंकि फरासीसियों से शीघ्र ही लड़ाई आरम्भ होनेवाली थी। कलकत्ते में युद्ध करना उचित है कि नहीं, इसको सहसा कोई निर्धारित न कर सका।



बीसवाँ परिच्छेद ।

सिराजुद्दौला दिल्लीके बादशाहको उनका प्राप्य राज-कर देनेमें बहुत दिनोंसे टालमटोल कर रहा था। बादशाह उससे बहुत असन्तुष्ट हुए और शेषमें मन्त्रिवर्गसे परामर्श करके शहज़ादेको बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाका सूबेदार नियुक्त किया। उद्देश्य यही था, कि सिराजुद्दौला सिंहासनच्युत किया जाय और शहज़ादेके नामसे शौकतजङ्गको राज्यशासन का भार दिया जाय। शहज़ादा इस अभिप्रायसे बादशाहकी विपुल वाहिनी लेकर पुर्नियामें शौकतजङ्ग से मिलने के लिये चल दिया; किन्तु उसके आनेसे पहिले ही शौकतजङ्ग का जीवन शेष हो चुका था।

शौकतजङ्गकी ललाट-लिपि पूर्ण हो चुकी थी, परन्तु पुर्नियाके विद्रोहानलके कारण सिराजुद्दौला को अँगरेज़ों के कोई समाचार नहीं मिले थे। इस अवसर पर, अँगरेज़ोंने देशके गण्यमान्य लोगोंसे घनिष्टता बढ़ा ली थी।

रोग शेष होने पर कोई औषधि नहीं खाता है, दुःखके

न रहने पर कोई किसी की क्षपा की आकाङ्क्षा नहीं रखता है, इसी प्रकार सिराजुद्दौला को भी अँगरेज़ोंसे अब कुछ और चाहना नहीं थी। इधर अँगरेज़ोंके दुःखका भी अन्त आगया था. इसी कारण उनके पक्ष में सुलक्षणोंका आभास दिखाई देने लगा!

लक्षण ऐसे बदलने लगे, कि मानिकचन्द्रने भी फ़ल्ता बन्दर में बाज़ार लगाने की आज्ञा देदी और अँगरेज़ों को अपनी इच्छानुसार खाने पीने को मिलने लगा।

और कहने सुनने पर उमाचरणने भी फिर से वाणिज्य-अधिकार दिला देनेका वचन दिया। इधर मद्रासमें भी सभामें स्थिर हुआ, कि वाणिज्यके लिये कलकत्तेसे अधिक उपयोगी और कोई स्थान नहीं है। उसको नहीं छोड़ना चाहिये। यद्यपि सैन्य-बल कम है और फ़रासीसियोंसे भी युद्ध अवश्य ही होगा, परन्तु सबसे पहिले सिराजुद्दौलाके हाथसे कलकत्तेका उद्धार अवश्य करना होगा।

जब यही निश्चय हुआ, तो इस बातकी आलोचना आरम्भ हुई कि सेनापति कौन बनाया जावे? सब लोग अपना अपना मत प्रकाश करने लगे। एकने कहा,—"मेरी समझमें पदगौरव में गवर्नर पिगट साहब ही सब से श्रेष्ठ हैं। इनको ही सेना-पति बनाया जाय।"

इस प्रस्ताव पर और सभ्य सम्मत नहीं हुए। उन्होंने कहा, "इसमें सन्देह नहीं है कि पद-गौरवमें यह सबके शीर्षस्थान

पर हैं, परन्तु युद्धके विषयमें उनको वैसी अभिज्ञता नहीं है। उनको सेनापति बनानेसे कुछ लाभ न होगा।"

"तो इस पदके उपयुक्त कौन है?"

इसके उत्तरमें एक सभ्यने कहा, "क्यों, कर्नल एल्डर क्राउन को सेनापति क्यों नहीं बनाते हो?"

इस प्रस्तावपर भी कोई सम्मत नहीं हुआ। सभ्योंने कहा, "बङ्गाल देशके युद्धके विषयमें वह बिल्कुल ही अनजान हैं।" इसी प्रकार बहुत देर तक सम्मति प्रकाशित होती रही। एकने कहा लारेन्सको सेनापति बनाना चाहिये। उसके उत्तर-में दूसरेने कहा कि वह अवश्य उपयुक्त सेनापति हैं, परन्तु उनको दमकी बीमारी है, बङ्गालकी जलवायु वह सहन नहीं कर सकेंगे।

एक एक करके तीन आदमियोंके नाम लिये गये, परन्तु कोई भी मनोनीत न हुआ। सभ्यगण विषम समस्यामें पड़ गये। तो क्या कलकत्तेका उद्धार-साधन हो न, होगा? क्या अँगरेज़-जातिमें कोई भी उपयुक्त सेनापति नहीं है?

सहसा, कर्नल क्लाइवको याद आई। एक सभ्यने सेना-पतिका पद उनको देनेका प्रस्ताव किया और कर्नल लारेन्स-ने उसका समर्थन किया। उन्होंने कहा, "हाँ, क्लाइव बङ्गालके उद्धार करनेके लिये उपयुक्त सेनापति है। वह साहसी है। उसमें बल-विक्रम भी है, अभिज्ञता भी है। वह अरकाटके



अत्याचारी नवाब सिराजुद्दौला को परास्त करके, भारतमें
अंगरेजी राज्य की बुनियाद डालनेवाले वीरवर
लार्ड क्लाइव।

युद्धमें विजयी हुआ है, और निश्चय है कि वङ्गाल देशका भी उद्धार कर सकेगा।

इस वार किसीने कुछ आपत्ति न की। सभी एक साथ बोले, "वङ्गाल देशके उद्धारकी उपयुक्त यही है। सिराजुद्दौलाके हाथसे यदि कोई वङ्गाल देशका उद्धार कर सकता है, तो वह क्लाइव ही हैं। कर्नल क्लाइव उपयुक्त पात्र हैं, इसीको सेनापतिका पद प्रदान करना चाहिये।"

कर्नल क्लाइव सबकी सम्मतिसे सेनापति बनाये गये। मानों पूर्व आकाशमें सौभाग्यसूर्य्यकी प्रथम किरण प्रकाशित हुई।

सेनापतित्व पाकर कर्नल क्लाइवने धीरे धीरे कहा, "आपका आदेश मैं शिरोधार्य करता हूँ; परन्तु सामरिक व्यापारमें मुझको पूर्ण स्वाधीनता देनी चाहिये। यदि इस प्रस्तावमें आप लोग अपनी सम्मति प्रदान करें, तो मैं इस भारी बोझको उठा सकता हूँ; नहीं तो इतनी थोड़ी सेना लेकर विपक्षियोंके सम्मुखवर्त्ती होना नितान्त असम्भव है।"

यह सुनकर मिस्टर सेनिहाम बोले, "एकबारगी सम्पूर्ण स्वाधीनता नहीं दी जा सकती है। सेनापतिको कलकत्तेके गवर्नर और कौन्सिलके आधीन होकर चलना होगा, नहीं तो क्या जाने किस समय राज्य अथवा अर्थके प्रलोभनमें आकर सेनापति नवाबसे मिल जाय।"

मिस्टर सेनिहामकी बात युक्तिसंगत होनेपर भी उस

समयके दरबारमें न टिक सको। सब लोग प्रतिहिंसाकी आग-से ऐसे जल रहे थे, कि यह बात किसी के हृदयमें न समाई और सब सभ्यगण एक साथ बोल उठे, "सामरिक व्यापारमें क्लाइव सम्पूर्ण रूपसे स्वाधीनतापूर्वक काम करेंगे।"

सब स्थिर हो गया। जल और थल दोनों ही स्थानोंपर एक ही समय युद्ध होनेपर अकेला क्लाइव किस प्रकार रक्षा करेगा, इसके लिये उन लोगोंने इङ्गलेण्डश्वरके नौ सेनापति एडमिरल् वाट्सनको क्लाइवको सहायताके लिये नियुक्त किया। क्लाइव स्थलयुद्धमें अधिनायक हुए, और जलयुद्धका भार वाट्सन साहबको अर्पण किया गया। क्लाइव और वाट्सनका ऐसा मेल हुआ, मानों मणि और काञ्चन मिल गये।

युद्धयात्राका आयोजन होने लगा। नौ सौ गोरे सोलजर और पन्द्रह सौ देशी सिपाही, सब मिला कर केवल २४०० सिपाहियोंकी सेना इकट्ठी हुई और केण्ट, कैम्बरलैण्ड, टाइगर, सेल्सबरी और ब्रिजवाटर नामके पाँच जहाज़ों पर गोला-गोली बारूद और रसदका सामान इकट्ठा किया गया। २६४ तोपें इन पाँच जहाज़ोंपर रक्खी गईं।

युद्ध-यात्राका सब सामान ठीक हो गया। परन्तु इसी समय एक दुःखदायी घटना हुई। अर्थात् कर्नल एल्डर क्राउनको जब सेनापतित्व नहीं मिला, तो वह मन ही मन बड़ा रुष्ट और ईर्षान्वित हुआ। इङ्गलेण्डेश्वरकी जितनी सेना गोला-गोली-बारूद इत्यादि जो उसके आधीन थी, और

जहाज़के ऊपर चढ़ाई गई थी, उस सबको अवसर पाकर ईर्षावश उसने जहाज़से उतार लिया। द्वेषभाव तो सभी जातियोंमें थोड़ा बहुत होता है।

प्रायः दो सौ सैनिक और उसके उपयोगी गोला-गोली-बारूद और रसद इत्यादि कम हो गई। एक तो पहिले ही से थोड़ी सेना थी, युद्धका ऐसा सामान्य सरञ्जाम, तिसपर सिराजुद्दौला सरीखे उद्दण्ड नवाबसे युद्ध करना, जिसकी इच्छामात्रसे लाखों सेना एकत्र हो सकती थी,—उसके साथ यह मुट्ठीभर सेना लेकर युद्ध करने जाना, वातुल अथवा बालकके अतिरिक्त और कौन कर सकता था? परन्तु निर्भीक क्लाइव इससे कुछ भी भीत अथवा विचलित न हुआ। वह साहसके साथ हृदय कड़ा करके, वीरोत्साहसे उत्साहित होकर, भविष्यके गौरवकी आशासे, उस अल्प सेनाको लेकर युद्ध-यात्राके लिये तय्यार हुआ।

सन् १७५६ ईस्वी की १६वीं अक्टूबरको महावीर क्लाइव और एडमिरल वाट्सन अन्यान्य सहकारियोंके साथ जहाज़-पर चढ़े। विदा होनेकी सहा धूम पड़ गई। मदरासके समुद्रके किनारे पर, अँगरेज़ नरनारी जो जो थे सबने इकट्ठे होकर उन लोगोंको विदा किया। जहाज़ छूट गये। जब तक दिखाई देते रहे, जहाँ तक दृष्टिने काम किया, सभी उस स्थानपर खड़े होकर, उनके उत्साहकी वृद्धि करते रहे।

इक्कीसवाँ परिच्छेद।

महावीर क्लाइवने भविष्य-उन्नति और यशकी आशासे यह मुट्ठीभर सेना और सामान्य युद्धका सामान लेकर मदरासके उपकूलको छोड़ दिया। उनके जङ्गी जहाज़ समुद्र-वक्षको विदारित करते हुए, निशान-झण्डे उड़ाते हुए, पाल फैलाये हिलते डोलते, कलकत्तेकी ओर को चले।

एक एक करके पाँचों जहाज़ोंने जब किनारा छोड़ दिया। तो पवनदेवने क्लाइवके विरुद्धाचरण करना आरम्भ किया। हवा प्रबल वेगसे चल निकली। उसने सारे समुद्रको उथल-पथल कर दिया। जहाज़ उस हवाके मारे इधर उधर मारे-मारे फिरने लगे। नाविक और कर्नल इत्यादिकोंकी बहुत चेष्टा करने पर भी वह स्थिर न हो सके और धीरे धीरे सभी एक दूसरेसे अलग हो गये। सब भयभीत हो गये और जीवन-की आशा छोड़ बैठे। परन्तु निर्भीक हृदय क्लाइव अचल और अटल रहकर सबको आश्वासन देकर उत्साहित करने लगे।

सहसा यह उत्पात क्यों उठ खड़ा हुआ? सम्भव है कि

पवनदेवने क्लाइवकी परीक्षा करनेके लिये ही यह उपाय रचा हो। इस मुट्ठीभर सेनाको लेकर किस प्रकार वीर क्लाइव उस दुर्द्धर्ष विपुल नवाब-सेनासे लड़ेंगे ; किस प्रकार वे समर-सागरको पार करेंगे ; शत्रुसेना और विपदको सामने देख-कर धीरजके साथ इस विपदसे उत्तीर्ण हो सकेंगे कि नहीं, इन्हीं सब बातोंकी परीक्षा करनेके हेतु, मालूम होता है, पवनदेवने ऐसा किया था। परन्तु जब उसने देखा कि महावीर क्लाइव उसकी परीक्षामें उत्तीर्ण हुए, तो क्लाइवको दिग्विजयी समझकर धीरे धीरे अपनी सौम्यमूर्त्ति प्रकाश की। जो भाग्यशाली है, विधाता जिसके ऊपर दयावान हैं, सामान्य कारणोंसे क्या वह कभी विचलित हो सकता है ?

अनेक बाधाविघ्न और विपत्तियोंको तुच्छ समझ कर, महावीर क्लाइव बालेश्वर बन्दर पर उतरे। वहाँ पहुँच कर देखा कि, पाँच जहाज़ोंमें से केवल इन्हींका जहाज़ पहुँचा है। यह देख कर वीरवर क्लाइव कुछ विचलित हुए, और अपार चिन्तामें मग्न होकर जहाज़के ऊपर टहलने लगे। इसी समय, बहुत दूरपर, एक जहाज़का मस्तूल थोड़ा थोड़ा दिखाई पड़ा। देखते ही वीरवरका चित्त कुछ शान्त हो गया।

धीरे धीरे वह जहाज़ आगया। क्लाइवने देखा कि वह जहाज़ उनके प्रिय बन्धु एडमिरल वाट्सनका है। यह देख कर क्लाइव बड़े ही आनन्दित हुए। हृदय आशा और उत्साहसे पूर्ण हो गया। वाट्सनके आ जानेपर और जहाज़ों-

की राह न देखकर, दोनों वीर फल्ता बन्दरकी ओर को चल दिये। पन्द्रहवीं दिसम्बरको दोनों जहाज़ फल्तामें पहुँच गये।

देखते देखते चार दिन कट गये। २० वीं दिसम्बरको एक जहाज़ और आ गया, केवल नहीं आया तो केम्बरलेण्ड नहीं आया, जो सबसे बड़ा जङ्गी जहाज़ था। उसमें एडमिरल पोक और २५० गोरे सैनिक थे। और मार्लबरा नहीं आया, जिससे गोलागोली बारूद और तोपें थीं।

इन दो विशेष प्रयोजनीय जहाज़ोंके न आनेसे क्लाइव कुछ बलहीन हो गये; परन्तु इससे वह कलकत्ता-उद्धारके लिये निरस्त नहीं रहे, युद्धकी तय्यारी करने लगे।

इससे पहिले किलपेट्रिक २३० सैनिकोंको लेकर फल्ता बन्दर में आकर शिविर स्थापन कर चुके थे, जिन में से प्राय: आधे अस्वास्थ्यकर जलवायुके कारण मर चुके थे, शेष आधे में से भी बहुत से बीमार और बेकाम हो रहे थे। अच्छे बलवान और युद्धोपयोगी केवल ३० मनुष्य थे। क्लाइवको बड़ी आशा थी, कि इन लोगोंसे सहायता मिलेगी; परन्तु यह अवस्था देखकर उनकी आशा दुराशामात्र हो गई; परन्तु फिर भी वह विचलित नहीं हुए।

फ़ल्तामें पहुँच कर क्लाइव युद्धका आयोजन करने लगे। परन्तु कलकत्तेके अँगरेज़ सहसा युद्ध करना नहीं चाहते थे। उनको आशा थी, कि उमाचरण नवाबके पास गये हैं, अवश्य

हो उनको वाणिज्य-अधिकार प्राप्त हो जायगा; फिर युद्ध करने की क्या आवश्यकता है? परन्तु वास्तविक बातका उनको ज्ञान नहीं था, कि सिराजुद्दौला किसी प्रकार उनको वाणिज्य-व्यवसायका अधिकार न देगा। अस्तु, सभीने एक वाक्य होकर कहा, कि युद्ध न होना चाहिये, कुछ दिनके लिये शान्त रहना चाहिये।

परन्तु वीरवर क्लाइव सिराजुद्दौला को खूब जानते थे। इसलिये उन्होंने किसी की भी न सुनी और युद्ध की तय्यारी करने लगे। अधिक विलम्ब न करके, कलकत्ते की ओर को धावित हुए। राहमें बजबजका क़िला था। उस पर अधिकार न करलें, तब तक आगे नहीं बढ़ सकते थे। इसलिये क्लाइव २७ वीं दिसम्बर को, मायापुरके मैदानमें, सेना लेकर जहाज़से उतर आये और उसी स्थानसे युद्ध-यात्राका उद्योग करने लगे, कि जिससे बजबजके दुर्ग पर आक्रमण करें।

भागीरथीके किनारे पर बजबज दुर्ग था। दुर्ग बहुत छोटा और मिट्टी की चहारदीवारीसे घिरा हुआ था। मिट्टी की होने पर भी, चहारदीवारी दृढ़ बनी हुई थी। चहारदीवारीके बाहर एक खाई थी। शत्रु सहसा चहारदीवारीके नीचे न पहुँच जाय, इसलिये वह खाई सदैव पानीसे भरी रहती थी।

किस प्रकार बजबज-दुर्गपर आक्रमण करना होगा, कौन सी दिशासे आक्रमण करना होगा, क्लाइव और वाट्सन इसी

की मन्त्रणा करने लगे। स्थिर हुआ, कि क्लाइव स्थल-पथसे और वाट्सन जल-पथसे क़िलेपर आक्रमण करें, जिससे क़िलेमें से कोई भाग न सके। यदि भागना चाहे, तो उसको यम-घर जाना पड़े।

यह स्थिर तो हो गया, परन्तु मायापुरसे बजबज प्रायः पाँच कोस दूर है, इतनी दूर स्थल-पथसे क्लाइवके युद्धका सामान किस तरह पहुँचे? पथ भी अच्छा नहीं। ऐसी अवस्थामें, तोपें, गोले गोली,बारूद और रसद किस तरह साथ जावें?' ऐसे सामानके ले जानेके लिये, घोड़े अथवा बैल चाहियें। क्लाइवने कालकत्तेके अँगरेज़ोंसे उन पशुओंके जमा करनेके लिये कहा; परन्तु वह लोग इसका कुछ बन्दोबस्त न कर सके।

परन्तु अध्यवसायशील क्लाइव इससे भी शान्त होनेवाले न थे। युद्धका सङ्कल्प वह त्याग न सके। अपनी ही सेना द्वारा उन पशुओंका बन्दोबस्त करा लिया। उद्योगी मनुष्यको क्या कभी कोई रोक सकता है?

केवल दो तोपें और एक गाड़ीमें गोला बारूद भरकर सेनाके साथ क्लाइव चल दिये। ये तोपें बन जङ्गलमें होकर बड़े कष्टसे बजबजके पास पहुँची। दारुण पथके कष्टसे सेना बहुत ही थक गई।

सेना बजबजके क़िलेमें बहुत थोड़ी थी; परन्तु विचक्षण क्लाइवने दो कारणोंसे क़िलेपर आक्रमण नहीं किया। एक

तो इस कारणसे, कि वाट्सन साहब अभी तक न आये थे। यदि उनके आनेसे पहले आक्रमण किया जाता, तो क़िलेके सिपाही जलकी राह भाग जाते, क्योंकि उधर बाधा देनेवाला कोई न था। दूसरी बात यह थी, कि पथके श्रमसे सब सेना थक गई थी। यदि उन लोगोंको विश्राम न देकर, युद्धमें प्रवृत्त कर देते, तो जैसा बल-विक्रम चाहिये था वैसा वे प्रकाश न कर सकते। इन्हीं दो कारणोंसे क्लाइव युद्ध करनेसे निरस्त रहे और सेनाको विश्राम करनेको छोड़ दिया।

राहके थके हुए सिपाही नङ्गी भूमिपर बैठकर थकावट दूर करने लगे। सब लोग ऐसे थक गये, कि लेटते ही घोर निद्राके वशीभूत हो गये और ऐसे सो गये, कि कोई पहरा देनेवाला भी न रहा।

धूर्त्त मानिकचन्द सभी कामोंमें चतुरता किया करता था। उसमें दम्भ और वाक्चातुरी बहुत थी, साहस कुछ भी न था। यद्यपि अँगरेज़ लोग कलकत्तेसे निकाल दिये गये थे, परन्तु वह लोग शीघ्र ही किसी न किसी तरह कलकत्ता वापिस ले लेंगे, यह बात मानिकचन्द बहुत अच्छी तरह समझे हुए था। वह जानता था कि सिंह पराजित होकर कभी भागता नहीं है। आज हो या कल, एक न एक दिन, वह अपना बल-विक्रम अवश्य ही दिखलावेगे।

जब उसने सुना, कि मदरासंसे कलकत्तेके उद्धार करनेके लिये सेना सज्जित अरकाट-विजयी क्लाइव आ रहे हैं, तो उसके

पेटमें पानी हो गया। परन्तु उसने एक कौशल किया। क्लाइवकी सेना सो रही थी। उस असहाय अवस्थामें, उस धूर्त्तने उस सेनापर गोलागोली बरसाना आरम्भ कर दिया। इस आकस्मिक घटनासे निद्रित सेना जाग पड़ी ; किन्तु भीत, चकित, स्तम्भित और किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गई और दस बीस मनुष्य भी मारे गये।

सहसा शत्रु-पक्षके आक्रमणसे सेनाको स्तम्भित और भयभीत होते देखकर, महावीर क्लाइवने रणोत्साहसे उत्साहित करनेके लिये कहा, "सैन्यगण! यही तुम्हारा प्रथम युद्ध है। तुम लोग यदि इस युद्धमें हारकर भागोगे, तो हिन्दुस्थानी सिपाही सदैव ही तुम्हारी हँसी किया करेंगे और कहेंगे कि अँगरेज़ सिपाही देखने के ही हैं, किसी कामके नहीं। तुम लोग वीर नाम ग्रहण करके, यह उपहास किस प्रकार सह सकोगे ? यदि कापुरुष न कहलाना हो, तो अभी युद्धमें प्रवृत्त हो जाओ और अपना वीरत्व और रण-कौशल दिखलाओ। शत्रुको पीठ दिखलाकर, रणस्थलसे भागकर जीवन-रक्षा करनेकी अपेक्षा, सामने समरमें जीवन विसर्जन करना निश्चय बड़े गौरवकी बात है। आओ, युद्धमें प्रवृत्त होओ, युद्ध करके वीरनामके गौरवको बढ़ाओ।

क्लाइवके ये ओजस्वी और उत्साहपूर्ण वाक्य सुनकर सेना होशमें आ गई। सभी रणोत्साहसे उत्साहित हो गये और अदम्य विक्रमसे शत्रुके साथ युद्ध करने लगे। दोनों

पच शक्ति-परीक्षा और रण-कौशल का परिचय देने लगे।

अँगरेज़ी सेनाने विपुल विक्रमसे युद्ध आरम्भ किया। तोपें दगने लगीं। तोपोंके शब्दसे जल और थल काँपने लगे। पक्षी भयभीत होकर, विकट रव करते हुए, आकाशकी ओरको उड़ गये। वन्यजन्तु, भीषण आर्तनाद करते हुए, बजबजको छोड़कर भागने लगे।

मानिकचन्द तीन हज़ार अश्वारोही और दो हज़ार पैदल लेकर युद्ध करने आया था; परन्तु उसमें साहस, बल, वीरत्व अथवा रण-कौशल कुछ भी न था। विशेष करके उसकी इच्छा भी न थी, कि जयलाभ मुझको ही हो, वह तो केवल नवाबको दिखानेके लिये लड़ रहा था। सहसा, एक गोला उसकी पगड़ीके पाससे सन सन करता हुआ निकल गया। मानिकचन्द असीम साहसी तो थे ही, प्राणोंके भयसे रण छोड़कर अपना हाथी फिराकर भागे और ऐसे भागे कि बजबज ही क्या कलकत्ते तकमें न ठहरे। सीधे मुर्शिदाबाद पहुँचे।

उस धूर्त्तके भागते ही, सेना भी जिधर जिसका मुँह उठा भाग निकली। क्लाइवको और युद्ध न करना पड़ा। विना युद्धके ही बजबजका क़िला हाथ आ गया। क़िलेके ऊपर अँगरेज़ी झण्डा उड़ाया गया। यहीं अँगरेज़ोंके सौभाग्यका प्रथम सूत्रपात हुआ। ३० दिसम्बर सन् १७५६,में क्लाइवने

वजवजके क़िलेपर अधिकार किया। बहुत उत्साहित होकर, जयपराजय होनेकी आशामे मुग्ध होकर, क्लाइव स्थल-पथसे और वाट्सन जल-पथसे कलकत्तेकी ओर धावित हुए।

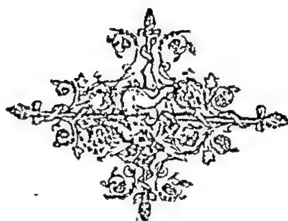
राहमें ही टानाका क़िला था। इसपर भी वीरवर क्लाइवने विना युद्धके ही अधिकार कर लिया और क़िलेके ऊपर सदैव-के लिये अँगरेज़ोंकी विजय-वैजयन्ती उड़ने लगी। सन् १७५७ की पहली जनवरको, यह क़िला अँगरेज़ोंके अधिकार-में आया।

वहाँ से फिर उसी प्रकार क्लाइव और वाट्सन कलकत्तेको चले। इस वार वाट्सनका जहाज़ क्लाइवसे पहले कलकत्तेके क़िलेके पास आकर ठहरा। ज्योंही क़िलेवालोंने देखा, त्योंही उन्होंने जहाज़ के ऊपर गोले मारने आरम्भ कर दिये। अङ्गरेज़ी जहाज़ 'केण्ट' पर अविरल धारसे गोला वर्षन होने लगा। केण्टसे भी गोले चलने लगे!

देखते देखते महावीर क्लाइव भी पूर्व दिशासे आकर क़िलेके आक्रमणमें दत्तचित्त हुए। क्लाइवको पहलेसे मालूम हो गया था, कि कलकत्तेके क़िलेमें केवलमात्र डेढ़ हजार सिपाही हैं और भागीरथीकी ओरकी जो तोपें लगी हुई हैं, वह प्रायः सभी वेकाम हैं। केवल २-४ तोपें हीं काम-लायक़ हैं। चारों बुर्ज वेकार हैं। क़िलेके विषयमें ऐसी अभिज्ञता होनेके कारण, क्लाइवने विपुल विक्रमके साथ क़िलेपर आक्रमण किया और ऐसी वीरता दिखलाई कि क़िलेके भीतरके सिपाही

एकबारगी लड़ाई छोड़कर भागने लगे। युद्ध शेष हो गया। महामति क्लाइवने बड़े हर्षसे क़िलेपर अधिकार करके, बड़ी प्रसन्नतापूर्वक, अपने हाथसे क़िलेके ऊपर विजय-निशान लगाया। वह कैसा शुभ दिन और शुभ घड़ी थी, जब कि वृटिश-पताका क़िलेके ऊपर उड़ी। सन् १७५७को दूसरी जनवरीसे आज पर्य्यन्त, वह पताका समभावसे उड़कर लार्ड क्लाइवकी अक्षय कीर्त्तिकी घोषणा कर रही है।

दुर्ग अधिकृत हुआ। रण-कोलाहल भी बन्द हो गया। सेना अपनी बन्दूक़ोंसे संगीनें उतारकर विश्रामके लिये प्रस्तुत हुई।



बाईसवाँ परिच्छेद।

कलकत्तेका पुनरुद्धार और वाणिज्य-अधिकार फिरसे प्राप्त हो गया। जो लोग कलकत्तेसे चले गये थे, वह फिरसे आगये। शून्य घरोंमें फिरसे आनन्द-कोलाहल सुनाई देने लगा। अँधेरे घरमें फिरसे दीपक जला। फिरसे दूकानें खुल गईं, और लेन-देन आरम्भ हो गया।

इधर क्लाइव, वाट्सन और मेजर किलपेट्रिक इत्यादि हुगली आक्रमणको सलाह करने लगे। हुगली बहुत पुराना बन्दरगाह है। वहाँ बहुतसे धनी रहा करते थे। बहुतसे बनियोंकी दूकानें, नवाबके फ़ौजदारका स्थान और राजधानी थी। अतएव हुगलीका आक्रमण ही स्थिर हुआ।

इस समय फिर यही प्रश्न उठा, कि कार्य्यभार किस को दिया जाय?

फिर मन्त्रणा-परामर्श होने लगे। वीरवर क्लाइव इस तुच्छ विषयमें तलवार धारण करने में सम्मत न हुए। एडमिरल वाट्सनने कुछ दिन विश्राम करना चाहा, इससे वह भी वहाँ जाने को राज़ी न हुए। शेषमें, मेजर किलपेट्रिकके

ऊपर कार्य्यभार अर्पण किया गया। वह बहुत दिन से खाली भी बैठे थे।

मेजर किलपेट्रिक इस अभियानके सेनानायक हुए। वे १०५० मल्लाह २०० गोरे और २५ देशी सिपाही लेकर हुगलीको चल दिये। ब्रिजवाटर और सेल्सबरी दो जङ्गी जहाज़ भी अपने साथ ले लिये।

सन् १७५७ की चौथी जनवरीको, यह सेना लेकर मेजर किलपेट्रिक हुगलीको चले। परन्तु जितनी शीघ्रतासे पहुँचनेकी आशा थी उतनी शीघ्रतासे न पहुँचे। और न मालूम किस तरह एक जहाज़ रेतमें अटक गया।

यद्यपि विधाताके अनुग्रहसे वह जहाज़ विपदसे निकल गया; परन्तु इसमें पाँच दिन लग गये। दसवीं जनवरीको, मेजर किलपेट्रिक हुगली पहुँच गये।

अँगरेज़ हुगलीपर आक्रमण करनेके लिये आ रहे हैं, यह सम्वाद पाकर फ़ौजदार नन्दकुमार हुगलीकी रक्षा करनेका बन्दोबस्त करने लगे। इससे पहिले नवाबने तीन हज़ार सेना भेज दी थी। और दो हज़ार नन्दकुमारके आधीन थी। इन्हीं पाँच हज़ार सिपाहियोंसे नन्दकुमार अँगरेज़ोंसे लड़नेको तय्यार हुए।

हुगली बड़ा समृद्धिशाली प्राचीन नगर था। इसके उत्तर में क़िला बना हुआ था। क़िला ईंटोंका बना हुआ था, परन्तु कुछ दृढ़ नहीं था। इसमें पचास सिपाही रहा करते थे।

मेजर किलपेट्रिक हुगली पहुँचते ही, जहाज़ोंसे अविश्रान्त गोला-वर्षण करने लगे। क़िलेसे भी जहाज़ पर गोले बरसने लगें। दिन भर इसी तरह गोले चले। रातको दोनों ओरसे गोला चलना बन्द हो गया। अँगरेज़ सहजमें क़िला ले तो नहीं सके, परन्तु वह बहुत जगहोंसे टूट गया।

ग्यारहवीं जनवरीको अँगरेज़ोंने कुछ गोरे सिपाही लेकर क़िलेके द्वार पर धावा किया और गोले मारना आरम्भ किया। नवाब-सेना यह समझकर कि द्वारकी रक्षा करनी चाहिये, उधरको ही चली गई। यह अवसर पाकर, कप्तान कुक ने कुछ मल्लाह-सेना लेकर टूटे हुए क़िलेकी राहसे भीतर प्रवेश किया। यह देखकर नवाब-सेना भयभीत होकर,दुर्ग-रक्षाकी आशा त्याग, रण छोड़कर गुप्त द्वारसे भागी।

यह सम्वाद सिराजुद्दौलाके पास पहुँचनेमें कुछ देर न लगी। इससे कुछ ही पहिले वह मानिकचन्द द्वारा सुन चुका था, कि अँगरेज़ोंने बजबज दुर्ग पर अधिकार कर लिया है। यह सुनते ही वह युद्धकी तय्यारी करने लग गया था। जब यह दूसरी खबर पहुँची, तो क्रोधके मारे प्रज्वलित हो उठा। शीघ्र ही अठारह हज़ार अश्वारोही, साठ हज़ार पैदल, दस हज़ार पथ-प्रदर्शक अर्थात् सफ़रमैना, चालीस हज़ार कुली, चालीस तोपें और पचास हाथी लेकर कलकत्तेको चला। हुगलीके पास पहुँच कर, वाट्सन साहबको एक पत्र लिखा, वह इस प्रकार है:—

"तुम लोगोंने हुगलीमें बहुत दङ्गा मचा रक्खा है। मेरी प्रजाके ऊपर बहुत अत्याचार कर रहे हो। तुम लोग बणिक हो, जो काम तुम कर रहे हो वह व्यवसाय-वाणिज्य-जीवी मनुष्यों का नहीं है। तुम्हारे इस व्यवहारसे मैं बहुत रुष्ट हो गया हूँ, और सेना लेकर कलकत्ते आ रहा हूँ। इस समय मैं हुगलीमें हूँ, और नदी-पार होनेका बन्दोबस्त कर रहा हूँ। कुछ सेना पार हो भी चुकी है, इस बार मेरी इच्छा है कि तुम लोगोंको अच्छी तरह उपदेश दूँ। यदि ईश्वरने चाहा, तो अबकी बार तुममें से एक को भी जीता न छोड़ूँगा; नहीं तो जितना मेरा नुक़सान हो चुका है, उसके क्षति-पूरण-स्वरूप मेरे पास भेज दो, अथवा उचित उत्तर भेजो।

नवाब सिराजुद्दौला शाहकुलीखाँ"

२३ जनवरी सन् १७५७ ई०

पत्र यथासमय एडमिरल वाट्सनके पास पहुँचा। कर्त्तव्य-निर्धारण करनेके लिये वह क्लाइवके पास गये। अनेक मन्त्रणा-परामर्शके बाद यह स्थिर हुआ, कि सन्धि कर लेनी चाहिये। सन्धिका एक कारण यह था, कि फ़रासीसी लोगोंसे युद्ध छिड़नेकी तय्यारी हो रही थी। और दूसरा कारण यह था, कि अँगरेज़-जाति सदैवसे ही शान्तिप्रिय है, वह कभी निरर्थक लड़ाई झगड़ा पसन्द नहीं करती है।

तेईसवाँ परिच्छेद ।

बणिकश्रेष्ठ उमाचरणका उद्यान कलकत्तेमें उस समय सबसे बढ़कर प्रशंसनीय और मनोरम स्थान था। इससे नवाब सिराजुद्दौला, उसी उद्यानमें अपना विराट् पटमण्डप स्थापन करके, वहीं ठहर गया। उमाचरणने आकर एक लाख रुपये भेंटमें दिये। नवाब उमाचरणसे बहुत देर तक वार्त्तालाप करते रहे। शेषमें, उमाचरणने डरते डरते कहा कि यदि मेरा अपराध क्षमा किया जाय तो एक बात पूछूँ। आप इतनी सेना लाये हैं, वह किस अभिप्रायसे लाये हैं?

सिराज—मैं इतनी सेना इस कारण लाया हूँ, कि इस बार अँगरेज़ोंको समूल नष्ट कर दूँगा। अब की बार बङ्गाल-भूमि पर उनका बीज तक न रक्खूँगा। हुगलीसे वाट्सनको मैंने एक पत्र लिखा है। उसका उत्तर आने तक राह देखता हूँ। उत्तर आते ही, यहींसे उनका क़िला तोपोंसे उड़ा दूँगा और एक अँगरेज़को भी जीता न छोड़ूँगा। मैं भी तो देखूँ, क्लाइव कैसा वीर है।

उमा०—मैं बड़े नवाबके समयसे आपका नमक खा रहा

हूँ । यदि सेवामें कोई त्रुटि हो जाय तो वह नमकहरामी ठहरेगी, इसलिये मेरा जो कर्त्तव्य है वह मैं अवश्य करूँगा । आप मेरे कथनको एक बार सुन लीजिये, तदोपरान्त जैसी इच्छा हो वैसा कीजिये ।

सिराज—अच्छा अच्छा, कहो क्या कहते हो ?

उमा०—अँगरेज़ लोग अब वैसे अँगरेज़ नहीं रहे हैं, अब उनके पास गोला गोली-बारूद और सेना इत्यादि सभी कुछ है । मेरी तुच्छ बुद्धि जहाँ तक काम कर रही है, मुझे यही ज्ञात होता है कि सहसा आप उन लोगोंको अब नहीं दबा सकेंगे । उनके साहसका एक नमूना मैं कहता हूँ, कि ३० दिसम्बर को उन्होंने बजबजका क़िला लिया,और पहिली जनवरीको टाना दुर्ग छीन लिया, उसके पीछे दूसरी जनवरीको कलकत्ता ले लिया । जिस क्लाइवको तीन क़िलोंके अधिकार करनेमें एक सप्ताह नहीं लगा, क्या वह वीर नहीं है ? यह मैं कभी नहीं कह सकता हूँ, कि आपके सामने वह जयलाभ करेगा ; परन्तु इसमें सन्देह नहीं है कि आपकी सेनाकी बड़ी भारी क्षति हो चुकने पर कलकत्तेका क़िला आपके अधिकारमें आ सकता है । इस कारण मुझे यही पथ सुगम मालूम होता है, कि इस समय उनसे सन्धि कर ली जाय, फिर पीछे से देखा जायगा । यह क्लाइव मृत्युसे भी डरनेवाला मनुष्य नहीं है ।

सिराजुद्दौलाने जब उमाचरणकी यह बातें सुनीं,तो उसकी

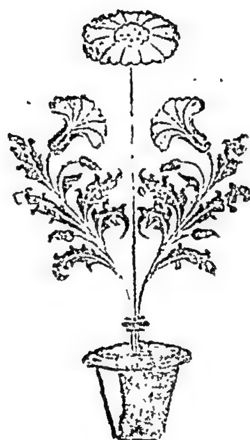
समझमें भी कुछ आ गया और सन्धि करने पर आरूढ़ हो गया। परन्तु दूसरेके कहनेके अनुसार चलनेके लिये यह उसकी पहिली और अन्तिम बेर थी। यह विचार दृढ़ करके उसने क्लाइव और वाट्सनको एक पत्र लिखा। उसका मर्म्म इस प्रकार है :—

"मैंने सुना है कि तुम लोग सन्धि करने पर तय्यार हो। मैं जानता हूँ कि सन्धि हो जाने पर सदैवके लिये विद्वेष-भाव जाता रहेगा। आपसमें मित्रता हो जाने से समरानल प्रज्व-लित न होकर, शान्तिकी सौम्यमूर्त्ति प्रकाश पावेगी। ईसाई और मुसल्मान एक हो जायँगे। परन्तु ख़ैर, जो कुछ होना था सो हो गया, अब उसके यहाँ पर लिखनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है। अब से वैसा कोई काम न हो, इसीलिये और इसी आशासे यह पत्र मैं लिख रहा हूँ। अतएव, अब वृथा विवाद-विसम्वादकी इच्छा नहीं है। यदि ईसाई लोग प्रकृतिसे ही शान्त हों, तो पिछली सब बातें भूलकर सन्धि-बन्धनमें आवद्ध होनेके लिये इन्कार मत करना।

सिराजुद्दौला।"

नवाबका पत्र क्लाइवके पास पहुँचा। पत्र पढ़कर क्लाइव बहुत हँसे और सन्धि करने पर सम्मत हो गये। परन्तु वाट्सन साहब फिर भी सन्धि करनेमें सम्मत न हुए। उनको सिराजुद्दौला पर बड़ा क्रोध हो रहा था। परन्तु उनकी कोई बात न सुनकर, ता० ७ फरवरी सन् १७५७ को सन्धिपत्र

लिखा गया। सिराजुद्दौलाने, बिना कुछ कहे सुने, उस पर हस्ताक्षर कर दिये। मीरजाफ़र और दुर्लभरायके भी हस्ताक्षर हुए। इस सन्धि-पत्रका नाम,—"अलीनगरका सन्धिपत्र" हुआ।



चौबीसवाँ परिच्छेद।

सन्धि हो गई। सिराजुद्दौलाने क्लाइव, वाट्सन और ड्रेक साहबके लिये विविध मणिमुक्ता लगी हुई बहुमूल्य पगड़ियाँ भेजीं। यह पगड़ियाँ क्यों भेजीं? चाहे सन्धि-बन्धनके दृढ़ करनेकी इच्छासे हो, अथवा खुशामदसे हो, हम यह नहीं कह सकते हैं। परन्तु वीरवर क्लाइव और वाट्सनने ये पगड़ियाँ नहीं लीं, नवाबके पास लौटा भेजीं और कहला भेजा कि, "हम महामान्य इँगलैण्डेश्वरकी प्रजा हैं, उनके कामके लिये बङ्गालमें आये हैं। नवाबका सिरोपाव हम ग्रहण नहीं कर सकते।"

सन्धि होनेके बाद सिराजुद्दौलाको यह आशा थी, कि वीरवर क्लाइव इन पगड़ियोंको लेनेमें अपना सौभाग्य समझेंगे; परन्तु उसकी यह भूल थी, वीर लोग किसीकी खुशामद न चाहते हैं न करते हैं। अस्तु, सिराजुद्दौला अपनी सेना लेकर कलकत्तेसे चल दिया। उसके जानेके बाद अँगरेज़ लोग गङ्गा पार करके, फ़रासीसियोंके चन्द्रनगर पर आक्रमण करनेको आगे बढ़े। नौ-सेनापति एडमिरल वाट्सन और क्लाइव दोनों

ही तय्यार हुए और अधिक विलम्ब न करके चन्द्रनगरके सामने जा पहुँचे।

सिराजके पास सम्वाद पहुँचा, कि अँगरेज़ लोग फ़रासीसियोंकी चन्द्रनगर वाली कोठी पर आक्रमण करनेका उद्योग कर रहे हैं। सिराज क्रोधके वशीभूत होनेसे न रह सका, वह सन्धिपत्रको भूल गया और नन्दकुमारको कहला भेजा,—"तुम्हारे पास हुगली, अग्रद्वीप और पलासी में जो सेना है, उसको ले जाकर फ़रासीसियोंकी सहायता करो।"

क्लाइवने जब यह सन्धि भङ्ग होती देखी, तो कुछ रुष्ट न हुए, परन्तु कुछ विचलित अवश्य हुए। क्योंकि एक तो फ़रासीसियोंकी सेना अच्छी थी, दूसरे उनका क़िला बहुत दृढ़ था। उनके पास तोपख़ाना भी था। रणपाण्डित्यका अभाव भी न था। इस सबके ऊपर, नवाबकी उन लोगों पर कृपादृष्टि भी थी। नवाबने नन्दकुमारको भी उनकी सहायताके लिये कहला भेजा था। पलासीसे दुर्लभराय दस हज़ार सेना लेकर नन्दकुमारकी सहायताको आ रहा था। पाँच हज़ार सेना हुगलीमें मानिकचन्दके पास थी। वह भी क्षणमात्रमें पहुँच सकती थी। युद्ध होते ही यह सब लोग सिंहकी तरह अँगरेज़ों पर टूट पड़ेंगे और सम्भव है, कि अँगरेज़ोंको सदैवके लिये कलकत्तेसे निकाल दें। इन्हीं बातोंको सोचकर, क्लाइव कुछ विचलित होकर सहसा फ़रासीसियों पर आक्रमण

करनेका साहस न कर सके, किस कौशलसे उनके ऊपर जय लाभ करेंगे, यही चिन्ता करने लगे।

यह बात प्रसिद्ध है, कि साधन करनेसे सिद्धि होती है। वीरवर क्लाइवने प्रचण्ड विक्रमसे फ़रासीसियों पर आक्रमण किया। वह लोग भी दुर्गरक्षाके लिये प्राणपणसे चेष्टा करने लगे। दोनों ओरसे गोला-वर्षण होने लगा। फ़रासीसियोंके गोलोंसे अँगरेज़ी नौ सेनाके १४० सिपाही मारे गये और कुछ पैदल भी मरे। इधर अँगरेज़ोंकी तोपोंसे फ़रासीसियोंके दलके दल प्राण विसर्जन करने लगे।

युद्ध केवल दो घण्टे मात्र हुआ। परन्तु इतने थोड़े समय में, नन्दकुमारकी सहायता पहुँच भी न पाई, कि युद्ध शेष हो गया। इस लोमहर्षण भयङ्कर युद्धमें दोनों ओरकी सेना मरी, तथापि अँगरेज़ लोग कुछ भी भयभीत अथवा निरस्त न हुए। वह लोग अदम्य उद्यमसे लड़ते रहे। शेषमें, फ़रासीसी बाहु-बल शिथिल हो चला। भीम विक्रमसे युद्ध करने पर भी, वह लोग दुर्गरक्षामें समर्थ न हो सके और दुर्ग छोड़कर भागना आरम्भ किया।

२३ मार्च १७५७ की सन्ध्याको, अँगरेज़ोंने महाकोलाहलसे फ्रेञ्च-क़िलेपर अधिकार कर लिया। आनन्द-निनादसे जल-थल-आकाश गूँज गये और फ्रेञ्च-क़िले पर अँगरेज़ी विजय-वैजयन्ती उड़ने लगी।

अँगरेज़ लोग दुर्ग पर अधिकार करके ही निरस्त न रहे।

उन्होंने फ्रेञ्च सिपाहियोंको कैद करना आरम्भ किया। जो लोग नदीमें नावों पर सवार होकर भागे, उनको अँगरेजी सिपाही अपनी नावों पर चढ़कर पकड़ने गये। वह लोग भागकर मुर्शिदाबाद पहुँचे, उनको वहीं बचनेकी आशा थी।

फ्रेञ्च लोग भागकर मुर्शिदाबाद पहुँचे और नवाब सिराजुद्दौलाके पास जाकर अपने सर्वनाशकी कथा सुनाई और आश्रय चाहा। सिराजुद्दौला तो पहिले ही से उनके पक्षमें था, शीघ्र ही उनको क़ासिमबाज़ारमें आश्रय दिया गया। यही नहीं, कई एक सुदक्ष फ़रासीसियोंको अपनी सेनाका सेनापति बनाया तथा और और विभागोंमें रख लिया।

अँगरेज़ लोग नवाबके इस व्यवहारसे क्रोधसे अधीर हो गये। फ़रासीसियोंके अँगरेज़ोंके शत्रु होने पर भी और नवाबके सन्धि कर लेने पर भी, नवाबने उनको आश्रय दिया, यह बात अँगरेज़ोंको असह्य हो गई। वाट्सन साहबने नवाबको एक पत्र इस प्रकार लिखा :—

"आपके कई एक पत्र आये, परन्तु बहुतसे आवश्यक कामोंमें व्यस्त होनेके कारण उनका उत्तर न दे सका। क्षमा कीजिये, बड़े आनन्दके साथ आपको सुनाता हूँ कि, ईश्वरकी कृपासे, केवल दो घण्टे मात्र युद्ध करके, हम लोगोंने २३ मार्च को सन्ध्याके समय फ्रेञ्च क़िले पर अधिकार कर लिया और बहुत से फ्रेञ्च भी बन्दी कर लिये हैं। बहुत से भाग गये हैं जिनके पकड़नेको हमारे सिपाही गये हुए हैं। उनको पकड़नेमें

श्रौर किसीके अनिष्टकी सम्भावना नहीं है। आशा है कि आप असन्तुष्ट न होंगे। हम लोग ठीक सन्धिके ऊपर चल रहे हैं श्रौर चलेंगे। इस सन्धि-बन्धनके अनुसार जो हमारा शत्रु है वह आपका भी शत्रु है श्रौर जो आपका शत्रु है वह हमारा शत्रु है। अतएव, हमारे शत्रु फ़रासीसी आपके पास आश्रय न पावें। ड्रेक साहबके सम्बन्धमें जो बात आपने लिखी थी; उसकी बाबत मैंने ड्रेकको बहुत फटकारा है। आशा है, कि ड्रेक मानिकचन्दसे क्षमाप्रार्थी होगा श्रौर भविष्यत्में ऐसा व्यवहार कभी न करेगा।

एडमिरल वाट्सन"

वाट्सन साहबके पत्रका उत्तर नवाबने कुछ न दिया, तो वाट्सन साहबको बहुत क्रोध आया; परन्तु फिर भी उन्होंने कुछ न कहा।

इधर कुछ दिनोंसे सिराजुद्दौलाको कुछ भ्रम सा हो गया था। वह न मन्त्री लोगोंकी बात सुनता था, न उनसे सलाह ही लेता था। वाट्सन साहबने कई बार फ्रेञ्च लोगोंको भेज देने के लिये लिखा, परन्तु नवाबने कुछ उत्तर न दिया। यह देख कर मन्त्री लोगोंने नाना रूपसे समझाना आरम्भ किया, कि फ़रासीसियोंको आश्रय देकर निरर्थक अँगरेज़ोंके साथ युद्ध-विग्रह करना उचित नहीं है। यदि फ़रासीसियोंको छोड़ देनेसे, अँगरेज़ोंके साथ सौहार्द्र बढ़े श्रौर सन्धि भङ्ग न हो, तो यही सबसे बढ़कर अपना हितकर काम है।

सिराजुद्दौलाको किसी प्रकार यह करना अभीष्ट नहीं था। उसको तो यही अच्छा जान पड़ता था, कि जिस तरह हो सके अँगरेज़ोंको क्षति पहुँचे। जब मन्त्रियोंने बहुत ही दबाया, तो फ़रासीसियोंको अँगरेज़ोंके पास न भेजकर अज़ीमाबाद भेजने पर राज़ी हुआ। परन्तु फ़रासीसी लोग इस पर भी राज़ी न होते थे। लेकिन किसी न किसी तरह सिराजुद्दौला ने उनको यह कहकर अज़ीमाबाद भेज दिया, कि कुछ दिनके लिये तुम वहाँ चले जाओ, जब बात ठण्डी पड़ जायगी, तो मैं तुम सबको बुला लूँगा। यदि इस समय मैं तुमको न भेजूँ, तो मेरा मन्त्रिदल रुष्ट हो जायगा और सम्भव है कि अँगरेज़ लोग मुर्शिदाबाद पर आक्रमण करें।



पच्चीसवाँ परिच्छेद ।

जिसका जब दुःखका समय आ जाता है और भाग्य उलट जाता है, तो बुद्धि भी ठिकाने नहीं रहती है। सिराजको अच्छे बुरेका ज्ञान न रहा। यह भी न जान सका, कि कौन उसका शुभाकाङ्क्षी है और कौन नहीं। जब उसकी मतिमें भ्रान्ति हो गई, तो मन्त्रिदलमें से बहुतोंने अँगरेज़ोंकी शरण ली। जिनको क्लाइव और वाट्सन साहबने, असन्तुष्ट न होकर, बड़े शिष्टाचारके साथ रक्खा। इन्हीं में से एक मीर-जाफ़र भी थे। मीरजाफ़र बहुत समझदार और ढलती हुई वयसके मनुष्य थे। क्लाइवने सोचा, कि यदि सिराजुद्दौला ही सिंहासन पर रहेगा तो नहीं मालूम क्या क्या अनर्थ हों। इससे किसी और को ही राज्य-शासन का भार मिलना चाहिये। दिल्लीके बादशाह की भी यही इच्छा थी, कि सिराजुद्दौला बङ्गाल, बिहार और उड़ीसा की सूबेदारी पर न बैठे। इसीलिये शौकतजङ्ग को उन्होंने सनद दी थी। परन्तु अत्याचारी सिराजने उसको और उसकी सेना को हत्या कर डाली थी। यह सुनकर शहज़ादा लौट

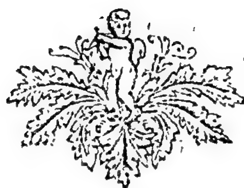


नवाब मीरजाफ़र।

गया और अँगरेज़ोंसे कहला भेजा, कि तुम जिसको उपयुक्त समझो उसी को इस सिंहासन पर बैठा दो। इसलिये भी क्लाइव को एक उपयुक्त मनुष्य की खोज थी। अन्तमें, होते होते मीरजाफ़र ही उपयुक्त मनुष्य दिखलाई पड़े। इसका भी विचार होगया, कि अपनी इच्छासे न हो तो ज़बरदस्ती सिराजुद्दौला को सिंहासनच्युत करके, मीरजाफ़र गद्दी पर बैठाया जावे।

जब बात तय होगयी, कि मीरजाफ़र ही गद्दी पर बिठाया जावे, तो मीरजाफ़रसे एक सन्धिपत्र ता: १७ जून को लिखाया गया कि वह सिंहासन पर बैठकर धर्मपूर्वक और सब जातियों को एकसा समझकर राज्य करेगा। किसी प्रकार का अत्याचार प्रजाके ऊपर न करेगा—इत्यादि।

जब यह सन्धिपत्र, जो कि सिराजुद्दौला से गोपनीय लिखा गया था, लिख गया; तो क्लाइवने युद्ध की घोषणा कर दी और युद्ध की तैयारी होने लगी।



छब्बीसवाँ परिच्छेद।

यह बात सिराजुद्दौला से भी छिपी न रही, कि मीरजाफ़र दिल्लीके बादशाह और अँगरेज़ों की ओरसे बङ्गाल, बिहार और उड़ीसा का सूबेदार बनाया गया है और सिराजुद्दौला सिंहासनच्युत किया जायगा।

सुनते ही सिराजुद्दौलाके क्रोधका ठिकाना न रहा और शीघ्र ही मीरजाफ़र को बन्दी करने का आदेश दिया; परन्तु आदेशानुसार काम नहीं हुआ। हिताकाङ्क्षी मन्त्री मोहनलालने नवाबको समझाया, —"इस समय मीरजाफ़रको बन्दी न करके, अपने पक्षमें लाना चाहिये।"

मोहनलालके निषेध से और गुप्तचरके मुखसे चारों ओर विद्रोह फैलने का सम्वाद पाकर नवाबने मीरजाफ़रको बन्दी नहीं किया, वरं उसको राजप्रासाद में बुला भेजा।

मीरजाफ़र को यह भय हुआ, कि न जाने नवाब कैसा व्यवहार करे और उसका भय सच्चा भी था, इस कारण वह राजप्रासादमें नहीं गया।

सिराजुद्दौलाने सोचा था कि मीरजाफ़र को समझाऊँगा,

यदि नहीं समझेगा तो सदैवके लिये उसका झगड़ा साफ़ करूँगा। परन्तु जब वह नहीं आया; तो आप ही पालकी पर सवार होकर सिराजुद्दौला उसके घर पहुँचा।

अन्तमें मीरजाफ़र बिना मिले न रह सका। जब कि बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाके नवाबने स्वयं उसके घर आगमन किया है, तो वह किस प्रकार छिपकर रह सकता था? शेषमें, दोनों का साक्षात् हुआ।

सिराजुद्दौलाने कहा, "सेनापति! जो कुछ हुआ सो होगया, अब उसके सोचने से कुछ लाभ नहीं है। इस समय एक प्राण होकर ऐसी चेष्टा करनी चाहिये, कि जिससे मुसल्मानोंका गौरव रक्षा पावे! तुम और हम एक कुटुम्बके हैं, कोई दूसरे नहीं हैं। कुटुम्बी को कुटुम्बी का नाश न करना चाहिये। तुम नवाब अलीवर्दीके बहनोई हो। उनके वंशधरका नाश करने में क्या तुमको कुछ भी सङ्कोच न होगा? तुम मेरे विरुद्ध अस्त्र धारण करने को उद्यत हुए हो। राज्य और राजसिंहासन की इच्छा करते हो, यह तुमसे योग्य पुरुषोंका काम नहीं है। सेनापति! यदि राज्य ही तुमको प्रिय है, राजसिंहासन पर बैठने ही की तुम्हारी इच्छा है, यदि मुझको सिंहासनच्युत करने ही से तुम्हारी कामना पूरी हो सकती है, तो तुम वैसा ही करलो; परन्तु अँगरेज़ों से, मेरे कट्टर शत्रुओं से, क्यों मिले हो?"

मीरजाफ़रने इसके उत्तरमें कहा,—"नवाब बहादुर!

मैंने आपके विरुद्ध कुछ भी नहीं किया है। न मैं सिंहासन चाहता हूँ, न मेरी इच्छा है कि आपको सिंहासनच्युत करूँ। अँगरेज़ोंके पास दिल्लीके बादशाह के पाससे आदेश आया है, कि किसी उपयुक्त मनुष्यको सिंहासन पर बिठाना चाहिये, जिसके लिये अँगरेज़ोंने मुझे पसन्द किया है। उन्होंने मुझसे सन्धिपत्र भी लिखा लिया है, कि मैं धर्मपरायण होकर राज्य करूँ। मैंने सिंहासन लेना अस्वीकार किया था, परन्तु वीरवर क्लाइव की ऐसी ही इच्छा है। मैंने अपनी इच्छासे कुछ भी नहीं किया है। और शेषमें यह देखो, कि नवाब आपने मेरे साथ बहुत कुछ असद् व्यवहार किये हैं। परन्तु मैं उन सबको भूल गया हूँ। मैंने आज तक तुम्हारे साथ कोई अधर्म का काम नहीं किया है। यह तुम्हारी ही भूल है, कि अँगरेज़ों को निरपराध सताते रहे हो। मुझसे कहो, सो अब भी मैं करने को तैयार हूँ; परन्तु अब मैं परवश होगया हूँ। लार्ड क्लाइव की इच्छाके विरुद्ध करने की क्षमता मुझमें नहीं है। और जो कुछ सेवा मेरे योग्य हो, उसको सर आँखोंके बल करने को तैयार हूँ।"

जब सिराजने यह बातें सुनीं तो उसके क्रोधका क्या कहना था। शीघ्रतासे उठकर एक घूँसा मीरजाफ़रके मुखपर मारा और अपने प्रासादको चल दिया। वहाँ पहुँच कर, मोहनलालको बुलाकर बहुत शीघ्र सेना तैयार करने की आज्ञा दी।

सत्ताईसवाँ परिच्छेद ।

नवाबकी सेना और अँगरेज़ी सेना पलासीके मैदानमें एकत्रित हो रही हैं। उत्तर दक्षिण दो कोस और पूरब पश्चिम एक कोसके लम्बे चौड़े मैदान में सेनायें जमा हो रही हैं।

अँगरेज़ी सेनाके पहुँचने के बारह घण्टे पहिले नवाबकी सेना मैदानमें पहुँच गई थी। जहाँ पर भागीरथी में घोड़ेके सुमकी तरह कोलचक है वहीं पर, खाई से घिरे हुए स्थानमें, नवाबके सेनापतियोंने अपने शिविर स्थापन किये और अँगरेज़ोंने आमों की वाड़ीमें आश्रय लिया।

बाईसवीं जूनका दिन युद्धके लिये तैयारी करते बीत गया। रात हुई। वह रात बड़ी गम्भीर रात थी। सभी सो रहे। नवाब भी अपने शिविर में पलँग पर लेटे। परन्तु उनको अच्छी नींद नहीं आई, रातभर स्वप्न देखने से व्याकुल रहे। स्वप्नमें नवाबने देखा कि धीरे धीरे एक रमणी उनके पलँग के पास आई और आकर खड़ी हो गई। उसके कपड़े मैले, मुख उतरा हुआ, आँखोंमें जल भरा हुआ, सिरके बाल खुले

हुए, देह आभूषणरहित और उसकी रूप-ज्योति मेघावृत सूर्य्य की तरह थी।

रमणीको देखकर सिराजुद्दौला विस्मित हुआ और पूछा, "तुम कौन हो? अकेली यहाँ क्यों आई हो? चारों ओर प्रहरी घूम रहे हैं, तुम यहाँ किस प्रकार चली आई? तुम्हारा क्या उद्देश्य है? और यह क्या! तुम रोती क्यों हो?"

रमणीने धीरे धीरे कहा, "वत्स! मैंने तो कोई प्रहरी नहीं देखा।"

सिराजने आश्चर्य्यान्वित होकर कहा, "क्यों! वह सब कहाँ गये?"

रमणीने गद्गद् कण्ठसे कहा, "वत्स! जब तक भाग्य बली रहता है, तबतक सभी रहते हैं; जब कुसमय आजाता है, तब कोई किसी का नहीं रहता है! अपने स्त्री पुत्र पर्य्यन्त पराये होजाते हैं।"

यह सुनकर सिराजके हृदयका छिपा हुआ आत्माभिमान निकल पड़ा। उसने गर्वके साथ कहा, "मालूम होता है कि तुम मुझको पहिचानती नहीं, तभी ऐसा कह रही हो। मैं बङ्गल, बिहार और उड़ीसा का नवाब हूँ। मेरा नाम सिराजुद्दौला है।"

रमणीने कुछ विषाद की हँसीसे हँसकर कहा, "वत्स! मैं तुमको पहिचानती हूँ। मैं यह भी खूब जानती हूँ, कि तुम बङ्गाल, बिहार और उड़ीसा के नवाब हो।"

रमणी और कुछ न कह सकी। हृदयमें शोक का वेग बढ़ गया। नेत्रोंसे झर झर-आँसू टपकने लगे। वह अपने आँचल से मुख ढाँप कर रोने लगी।

सिराज—तुम इतनी अधीर क्यों होती हो?

रमणी शोकके वेग को रोक कर बोली, "वत्स! मैं पुत्र-वती हूँ। यदि पुत्रका कोई अकल्याण हो, तो क्या कोई रमणी कातर न होगी?"

सिराज—तुम्हारा पुत्र कौन है? उसका क्या अकल्याण हुआ है, जिसके कारण तुम इतनी विह्वल हो रही हो?

रमणी—वत्स! जो बङ्गाल बिहार और उड़ीसा का नवाब है, वही मेरा पुत्र है।

सिराजुद्दौला यह सुन कर काँप उठा और कहा,—"तुम तो एक सामान्य रमणी मालूम होती हो। बङ्गाल, बिहार और उड़ीसा का नवाब तो मैं ही हूँ; मेरी माता तो अमीना बेगम है। परन्तु तुम जो अपने को मेरी मा कहकर परिचय देती हो, इसका क्या कारण है? मेरी जननी होकर, तुम्हारी यह हीन अवस्था क्यों है?"

रमणी की आँखोंसे फिर आँसूओं की धारा बह चली। उसने रुँधे हुए गले से कहा,—"वत्स! पुत्रकी उन्नति अवनति के साथ ही जननी की अवस्था भी बदल जाती है। जब तुम बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाके नवाब थे, तब मेरी भी ऐसी अवस्था न थी। सभी मुझको नवाब-जननी कह कर पुकारते

थे, वसन-भूषण भी मेरे पास यथेष्ट थे; परन्तु तुम्हारी अवस्था परिवर्त्तन होनेके साथ ही साथ मेरी भी यह दशा हो गई।"

इतनी देर बाद सिराजुद्दौलाने उस रमणी को पहिचाना और बड़े मानके साथ प्रणाम करके बोला, "जननी! क्या सत्य ही मुझको बङ्गाल, बिहार का सिंहासन छोड़ना होगा? क्या मैं इसकी रक्षा न कर सकूँगा? तो क्या अँगरेज़ों ही की जय होगी?"

रमणीने रोते रोते कहा, "हाँ वत्स! कलके युद्धमें मुसल्मानोंका गौरव-सूर्य्य अस्त होगा। अँगरेज़ों का प्रभुत्व, क्षमता, ऐश्वर्य्य, सूर्य्योदय होते ही इस देशमें फैल जायगा। केवल बङ्गाल ही नहीं, समग्र ससागरा पृथ्वीके अधीश्वर अँगरेज़ ही होंगे; क्योंकि आजकल वही जाति सबसे अधिक धार्मिक और प्रजावत्सल है। भारतवर्षके सब राजा महाराजा और नवाब उनके आधीन होंगे। वत्स! तुम ही बङ्गालके शेष नवाब हो। तुम राज्य ही नहीं खोओगे, तुमको अपने प्राण भी देने होंगे।"

इतना कह कर रमणी अन्तर्धान हो गई।

यह देखते ही सिराजुद्दौला चिल्ला उठा, "माँ! कहाँ जाती हो?" और इतना कहते ही उसकी निद्रा भंग होगई। उसने आँखें मलकर देखा, तो एक चोर उसके पलँग के पास से सोने का हुक्का चुराये लिये जाता है। यह देखकर सिराजुद्दौला ने उच्च स्वर से कहा, "प्रहरी! प्रहरी!" किन्तु किसी ने कुछ

उत्तर नहीं दिया। तब वह आप ही चोर को पकड़नेके लिये उसके पीछे दौड़ा। पर मण्डपके द्वार तक उसने आकर देखा कि कोई पहरे पर नहीं है। तस्कर भागगया। यह हाल देखकर वह बोला, "हायरे! मरनेके पहिले ही सिराजुद्दौला के दुर्दण्ड प्रताप का अन्त होगया!"

शेष रात्रि में, सिराजुद्दौलाको नींद नहीं आई। दारुण दुश्चिन्ता में और असह्य यातना में रात काटी।

प्रातःकाल को नवाब-शिविर में रण-वाद्य बजने लगा। उसका शब्द सुनकर सैनिक लोग तय्यारी करने लगे।

छै बजगये। नवाब-सेना तय्यार होकर पलासीके मैदान में आ पहुँची। व्यूह अर्ध-चन्द्राकार रचा गया। फ्रेञ्च सेनापति सिनफ्रे ५० सैनिक और चार तोपें लेकर बड़ी पुष्करिणी के पास आकर खड़ा हुआ। उसके पीछे मीरमदन सेनापति अपने पाँच हजार अश्वारोही और सात हज़ार पैदल लेकर पहुँच गया। मीरमदन के पीछे मोहनलाल था, जिसके पास बारह हज़ार सेना थी। इसके पास ही, दक्षिण भागमें, दुर्लभ राम और यार लतीफ़ पाँच पाँच हज़ार सेना लिये हुए जँगली भूमि से पलासी की आमबाड़ी तक अर्ध-गोलाकार खड़े हुए थे। इन सबके सामने मिट्टीके बुर्ज बने हुए थे, जिनके पास बड़ी बड़ी तोपें लगी हुई थीं।

खूब ही गोला-वर्षण हुआ। अँगरेज़ों की सेना बहुत थोड़ी थी। आधे घण्टे के युद्ध में, दस गोरे और बीस देशी सिपाही मारे गये। रण-विशारद क्लाइव ने देखा कि इस प्रकार युद्ध होगा, तब तो सन्ध्या तक हमारी सेना में एक भी सैनिक न बचेगा!

ऐसा सोचकर विचक्षण क्लाइव ने सेना की रक्षा करने के लिये सेना को आमबाड़ीमें छिपा दिया। गोलन्दाज़ोंने मिट्टी की प्राचीरमें छेद करके उसी में से गोले चलाने आरम्भ किये। इससे सेना का बचाव तो हो गया, परन्तु नवाब की सेना धीरे धीरे आगे को बढ़ने लगी। यह देखकर वीरवर क्लाइव कुछ विचलित हुए। परन्तु शीघ्र ही उन्होंने अपने को सम्भाला और तत्क्षणात् एक सभा बिठायी। सभामें स्थिर हुआ कि दिनमें किसी प्रकार आत्मरक्षा करके, रात में नवाब की सेना पर धावा करना चाहिये।

यह उपाय तो स्थिर होगया, परन्तु सुचतुर क्लाइव को यह बात पसन्द न आई। उन्होंने कहा यह वीरत्व नहीं है। इधर नवाब-सेनाने जब देखा कि अँगरेज़ी सेना पीछे हट रही है, तो वह लोग बड़े उत्साह से आगे बढ़ने लगे। और श्रावण के बादलों की तरह अविरल गोला-वर्षण करने लगे। परन्तु वह गोले अँगरेज़ी सेना की कुछ क्षति न कर सके। जो गोले आते थे वह आमों में होकर निकल जाते थे और सेना नीचे वृक्षों में आराम से बैठी हुई थी।

मीरमदन अदम्य उत्साह से युद्ध कर रहा था और अँगरेज़ी सेना की ओर को बढ़ रहा था। सहसा आकाश में एक बादल का टुकड़ा दिखाई पड़ा। साथ ही बड़े वेग से मूसलाधार वृष्टि होनेलगी। नवाब-सेना खड़ी खड़ी भीगने लगी और साथ ही सब बारूद भी भीग गई।

युद्ध की प्रधान सम्बल बारूद है। वृष्टि के जलसे बारूद भीग जाने के कारण, मीरमदनका तोपें चलाना बन्द होगया। उस समय मीरमदन ने अश्वारोही सेना को नङ्गी तलवार हाथ में देकर अँगरेज़ों पर हमला करने का आदेश दिया। सभी ने समझा, अब अँगरेज़ी सेना की ख़ैर नहीं है!

अश्वारोही सेना को उत्साहित करने के लिये रणोन्मत्त मीरमदन बड़े वेग से घोड़ा दौड़ाकर उनके आगे आगे चला। इसी समय अँगरेज़ों की सेना से सहसा एक गोला आकर उसके ऊपर पड़ा। गोला लगते ही वह अवसन्न होकर गिरपड़ा, और अपनी सेना से कहा कि, "मुझे शीघ्र नवाब के पास ले चलो।"

आदेश पाते ही अनुचर वर्ग उसको नवावके पास ले गये। मीरमदन ने बड़े कष्टसे दो चार शब्द कहे,—"नवाब बहादुर! सेनाकी देखभाल आप अपने आप ही कीजिये। सेना में और कोई ऐसा नहीं है जो अँगरेज़ोंसे लड़े।" यह कहते कहते उसके प्राण निकल गये।

मीरमदन के मरने से सिराजुद्दौलाके सिर पर मानों

वज्रपात हुआ। उसको चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार दिखलाई देने लगा। उसको फिर मतिभ्रम हुआ। उसने सोचा कि आज लड़ाई किसी प्रकार बन्द होजाय तो अच्छा है, कल मैं अपना बन्दोबस्त कर लूँगा। यह सोचकर मोहनलाल के पास दूत भेजकर लड़ाई बन्द कर देनेका आदेश किया।

वीर मोहनलाल इधर अमित विक्रम से अँगरेज़ी सेनाकी ओर को बढ़ रहा था। उसी समय दूत ने जाकर नवाब का आदेश सुनाया,—"सेनापति! नवाब की अनुमति है कि आज युद्ध बन्द करदो, कल प्रातःकाल संग्राम होगा।"

मोहनलाल आशा कर रहा था कि मैं जय लाभ करूँगा। उसने कहा,—"यह समय लड़ाई बन्द करने का नहीं है। और थोड़ी देर युद्ध करते रहने से ही युद्ध शेष हो जायगा और नवाब विजयी होंगे। यदि इस समय हम युद्ध बन्द करेंगे, तो सम्भव है कि अँगरेज़ लोग अवसर पाकर हम पर आक्रमण करें। इस समय मैं किसी प्रकार शिविर को नहीं जासकता हूँ, मैं लड़ूँगा।"

यह बातें दूत के मुखसे सुनकर सिराजुद्दौला ने फिर मोहनलाल के पास दूत भेजा। उस समय मोहनलाल प्रायः आम की बाड़ी के पास था। परन्तु अँगरेज़ी सेना तब भी सन्तुष्ट चित्त से आमबाड़ी में बैठी हुई थी। उसी समय दूत ने जाकर कहा,—"नवाब की अनुमति है कि शिविर

को लौट जाओ और सेना को विश्राम दो। कल फिर से संग्राम होगा।"

बारम्बार आदेश पहुँचने पर मोहनलाल क्रोध के मारे काँपने लगा। परन्तु क्या करता, मालिकका आदेश ही ऐसा था। प्रबल उत्साह के समय में उसको बाधा पाकर बड़ा दुःख हुआ। दुःख और रोषने उसे नितान्त ही निरुत्साह कर दिया। परन्तु वह तो भृत्य था। भीतर का भाव भीतर ही रखकर, सेना को शिविर की ओर ले चला।

वीरवर क्लाइव ने यह अवसर हाथ से न जाने दिया। आमबाड़ी से बाहर निकल आये और सेना परिचालन आप ही करने लगे। उनकी सेना सिंह-विक्रम के साथ मोहन लाल वाली सेना पर जा पड़ी और सावन की झड़ी की तरह गोला गोली बरसाने लगी।

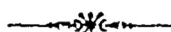
मोहनलाल अँगरेज़ी सेना को आक्रमण करते देखकर फिर खड़ा होगया और तोपों के मुख उस ओर को फेरने लगा। सेना को श्रेणीबद्ध करने का उद्योग करने लगा। परन्तु उसके यह सब प्रयास वृथा हुए। बहुत कुछ यत्न करने पर भी, वह सेना को श्रेणीबद्ध न कर सका। अँगरेज़ी सेना के गोलों से सेनाका संहार होने लगा। प्रति मुहूर्त्त में घोड़े बैल सिपाही सैकड़ों मरने लगे। अँगरेज़ी हथियारों के सामने नवाबी हथियार क्या ठहरते! अन्तमें नवाब की सेना भाग निकली।

मोहनलाल ने जब देखा कि अब युद्ध करना वृथा है, तो सेनाको छोड़कर नवाबके शिविर को चला।

नवाबके पटमण्डपमें पहुँच कर देखा कि वह शून्य पड़ा है। नवाब नहीं हैं। अनुसन्धान से मालूम पड़ा, कि पराजय हो जाने के भय से राजधानी को चले गये हैं। यह सुनते ही मोहनलाल अवसन्न हो गया और शीघ्र ही नवाब से मिलने को मुर्शिदाबाद की ओर को चल दिया। पलासीका रणक्षेत्र वीरवर लार्ड क्लाइव के हाथ रहा।



उन्तीसवाँ परिच्छेद।





र्शिदाबाद आकर सिराजुद्दौला ने अपने आत्मीय स्वजनों को बुलाकर मुसल्मान-गौरव की बात कही और स्वाधीनता-रक्षा के लिये फिर से युद्ध करने की आकांक्षा दिखाई। परन्तु क्लाइव का हाल सुन कर किसी को ऐसी हिम्मत न हुई, कि नवाब से हामी भरता कि मैं तुम्हारे साथ होकर युद्ध करूँगा।

अन्तमें मुर्शिदाबाद से भागना ही निश्चय हुआ। उस समय थोड़े से महामूल्य रत्न, प्राणाधिक प्रेयसी लुत्फुन्निसा, एक पुराना प्रहरी और दो एक दासियोंको लेकर सिराजुद्दौला नाव पर सवार होकर भागा। राज्य, राजसिंहासन, राज-भवन बहुमूल्य विलास-सामग्री सभी पड़े रहे। अब केवल यही आशा थी कि फ्रेञ्चसेनापति मान्स्योरलो साहब से मिलकर एक बेर फिर मुसल्मानों की स्वाधीनता रक्षा करें।

इसी आशा पर राजधानी छोड़कर पटनाकी ओर को चल दिया। जिसके अत्याचारों के कारण समग्र बंगाल, बिहार

और उड़ीसा कांपता था, आज वही अपराधियों की तरह बन्दी होनेके भयसे भागा जा रहा है।

दो पहर का समय है। कोई घरसे बाहर निकलने को हिम्मत नहीं करता है। परन्तु ऐसे समय में बंगाल, विहार और उड़ीसा का नवाब सूर्य की तीव्र किरणें माथे पर लिये नावपर चला जा रहाहै। सूर्यकी गरमीसे देह जली जाती है। किन्तु इस कष्टसे भी वह विचलित नहीं हुआ। क्योंकि यदि अपना कष्ट कहेगा,तो पत्नी लुत्फुन्निसाको दुःख होगा। इसी भय से असीम सहिष्णुता का आश्रय लेकर स्थिर हो रहा है, परन्तु दारुण कष्टसे वह मृतप्राय हो गया है।

वह कुछ नहीं कहता है, परन्तु पतिप्राणा लुत्फुन्निसा स्वामी की अवस्था जानती है। उसने एक लम्बी सांस खींच कर कहा,"हे भगवन्! क्या तुम्हारी यही इच्छा थी! यदि अन्तमें इतना ही कष्ट देना अभीष्ट था तो वङ्गाल, विहार और उड़ीसाका सिंहासन ही क्यों दिया? जिसने जन्मभर में सुखके सिवाय दुःख का कभी मुख भी न देखा था,उसकी आज ऐसी दुर्गति क्यों? यह कह कर वह फूट फूट कर रोने लगी। उसकी आँखोंसे शोकाश्रु आज पहिली ही वार निकले थे।

मनका दुःख मन ही में रखकर, पतिप्राणा लुत्फुन्निसाने अपने दुपट्टे से सिराज के सिर पर छाया कर ली, और रूमाल से पसीना पोंछा। अपना उसको कुछ भी ध्यान नहीं था। पास में स्नेह की पुतली पांच वर्षकी कन्या बैठी थी. उसकी ओर

भी कुछ ध्यान न था। सतीका ध्यान था, केवल पतिकी ओर। सतीके सिवाय पतिका मर्म और कौन जाने ?

इसी तरह बिना अन्न-पानीके दो दिन कट गये; सब लोग भूख-प्यास से अधीर हो उठे। साथमें अर्थ की कमी नहीं थी, परन्तु राज्यभ्रष्ट सिराज का इतना साहस न होता था, कि किनारे पर उतर कर कुछ खाद्य वस्तु क्रय करें।

शेषमें नौका राजमहल पहुँची। वहाँ एक मसजिद के फ़क़ीरका आश्रय लिया। परन्तु वह फ़क़ीर सुन चुका था कि जो कोई सिराज को पकड़ेगा उसको भरपूर इनाम मि... फ़कीरने देखते ही नवावको पहिचान लिया और आ... के बहाने उसको अपनी मसजिद में ठहराकर, मीरकासिम ... कहला भेजा कि नवाव को मैंने पकड़ रक्खा है ...

सिराजुद्दौला को क्या मालूम था, कि चारों ओर उसको पकड़ने को लोग फिर रहे हैं। वह निश्चिन्त होकर मसजिद में ठहर गया था, इतने ही में मीरकासिम और मीर दाऊदने आकर उसको कैद कर लिया और सेनाके साथ मुर्शिदाबाद को भेज दिया। मुर्शिदाबादमें मीरजाफर सिंहासन पर बैठाला जा चुका था। उसके आदेशसे सिराजुद्दौला बन्दीगृह में रक्खा गया। मीरजाफ़रने आज्ञा दे दी, कि सिराजुद्दौला सामान्य वन्दियोंकी तरह न रक्खा जाय, पूरी खातिरसे रहे। परन्तु मुहम्मदवेग नामक एक व्यक्ति ने, जिसके साथ सिराजने बड़ा असद्व्यवहार किया था, अपना पुराना वैर निकालनेका ...